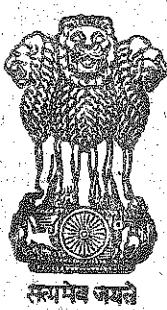


भारत का विधि आयोग



नावधिकरण विषयक अधिकारिता संबंधी

एक सौ इकायावनवीं रिपोर्ट

1994

के०एन० सिंह
(भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति)

अध्यक्ष
विधि आयोग,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-११० ००१
फोन : कार्यालय : ३८४४७५
आवास : ३०१९४६५

अशा० पत्रांक : ६ (३) (१६)/९२-एल सी (एल एल) अगस्त १७, १९९४

प्रिय प्रधान मंत्री जी,

“नावधिकरण विषयक अधिकारिता” विषय पर भारत के विधि आयोग की १५१वीं रिपोर्ट इसके साथ प्रेषित करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष है। यह तेरहवें विधि आयोग के गठन के पश्चात् उसकी ८वीं रिपोर्ट है।

२. “नावधिकरण विषयक अधिकारिता” का विषय, विधि आयोग द्वारा उच्चतम न्यायालय के एम०बी० एलिजावेथ और अन्य बनाम हरवान इवेस्टमेंट एण्ड ट्रेडिंग प्राइवेट लिमिटेड (जे टी १९९२ (२) एस सी १६५) नावधिकरण विषयक मामलों में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की अधिकारिता के संबंध में किए गए संप्रेक्षणों को ध्यान में रख कर स्वप्रेरणा से गहन अध्ययन के लिए हाथ में लिया गया था। भारत की अपनी निजी “नावधिकरण विधि” नहीं है इसके बजाय हमारे न्यायालय, ब्रिटिश संसद द्वारा अधिनियमित और तत्कालीन औपनिवेशिक भारत पर विस्तारित परिनियमों के अनुसार नावधिकरण विषयक अधिकारिता को प्रशासित करते हैं। ब्रिटिश नावधिकरण विधि में अनेक आमूलचूल परिवर्तन हो चुके हैं किन्तु भारत में नावधिकरण विधि का अधिनियमन या संशोधन करने के लिए कोई विधायी प्रयास नहीं किया गया है। आयोग ने इस रिपोर्ट में इस विषय पर विस्तृत रूप से विचार किया है और विधि के अधिनियमन के लिए सिफारिश की है। मुविधा के प्रयोजनार्थ, प्रस्तावित विधान का प्रारूप इस रिपोर्ट के साथ संलग्न है।

३. आयोग को विश्वास है कि इस रिपोर्ट में अंतर्विष्ट उसकी सिफारिशों स्वीकार की जाएंगी और उन पर कार्रवाई की जाएगी जो पोत परिवहन तथा बाणिज्यिक व्यापार और कारबार की दीर्घकालीन आवश्यकता को पूरा करेगी और नावधिकरण संबंधी विषयों से न्यायालयों की अधिकारिता से संबंधित विधि की अनिश्चेयता को दूर करेगी।

द्वादिक सम्मान सहित,

भवदीय,
(के०एन० सिंह)

माननीय श्री पौ०बी० नरसिंह राव,
प्रधान मंत्री एवं विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्री,
नई दिल्ली ।

संलग्नक : यथोपरि

विषय सूची

खंड 1

		पृष्ठ
अध्याय 1	भूमिका	3
अध्याय 2	भारत में वृक्षशुष्कीय	7

खंड 2

अध्याय 3	हिंगसैड में नावधिकरण विषयक अधिकारिता का ऐसिड्डिक विकास	13
अध्याय 4	भारत में नावधिकरण विषयक अधिकारिता का विकास	17

खंड 3

अध्याय 5	अंतरराष्ट्रीय अधिसमिति	25
अध्याय 6	अंतर्राष्ट्रीय अधिसमिति और भारत की प्राप्तिविलीन	32

खंड 4

अध्याय 7	विधि को अद्यतन बनाने के लिए प्रयत्न	37
अध्याय 8	नावधिकरण अधिकारिता को प्रहृति और उसका विस्तार	41
अध्याय 9	नावधिकरण न्यायालय	46
अध्याय 10	सिक्खर्ण और सिफारिशें	55
उपांशंघ	(I से VIII तक)	59

खंड 1

प्रारंभिक

अध्याय 1

भाषिका

1.1. भारत के संविधान के प्रस्थापन के चबालीस वर्ष पश्चात् भी, विधि शास्त्र के ऐसे क्षेत्र विद्यमान हैं जिनमें न्यायालयों की अधिकारिता की बाबत विषय और साथ ही उनको लागू विधि की बाबत विषय अस्पष्ट, अपूर्ण और असंजोगजनक बने हुए हैं। ऐसा ही एक क्षेत्र, नावधिकरण, घोतपरिवहन, समुद्र द्वारा वहन और समुद्रीय विषयों में संबंधित विधि का क्षेत्र है। विधिशास्त्र के इस क्षेत्र के कुछ पक्षों के संबंध में परिनियम विद्यमान हैं किन्तु एक विशाल क्षेत्र अभी भी शून्य है जिसके लिए विधायी कार्रवाई अपेक्षित है। तथापि संविधान के संक्रमणकालीन उपबंधों के परिणामस्वरूप, जो जब तक कि विनिर्दिष्ट विधान प्रारंभ नहीं किए जाते तब तक सभी विषयों में यथापूर्व स्थिति का बना रहना समर्थ बनाते हैं, आत्मतिक अधिव्यवस्था का प्रचलन रुक गया है और किंचित् सी व्यवस्था संरक्षित रह गई है।

1.2. संविधान के अनुच्छेद 372 में एक साधारण व्यावृत्ति उपबंध अधिनियमित किया गया है कि संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए “संविधान के प्रारंभ के ठीक-पूर्व, भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियाँ तब तक उसमें प्रवृत्त बनी रहेंगी जब तक, कि समक्ष विधान मंडल या समक्ष प्राधिकारी द्वारा परिवर्तित या निरसित या संशोधित न की जाएं।” अनुच्छेद के स्पष्टीकरण 1 में “प्रवृत्त विधि की परिभाषा दी गई है जिसमें इस संविधान के प्रारंभ के पूर्व भारत के राज्यक्षेत्र में किसी विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा परित या निर्मित की गई कोई विधि है और जो पहले निरसित न की गई हो, इस बात के होते हुए भी कि वह या उसका कोई भाग, तब पूर्णतः या किन्हीं विशिष्ट क्षेत्रों में प्रवर्तन में न रहा हो”; और स्पष्टीकरण 2 व्याख्या करता है कि “संविधान के प्रारंभ के ठीक पूर्व भारत राज्यक्षेत्र में से किसी विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा परित या निर्मित किसी ऐसी विधि का, यथा पूर्वोक्त किन्हीं ऐसे अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए, ऐसा राज्यक्षेत्रातीत प्रभाव बना रहेगा।” इन उपबंधों ने स्वतंत्रपूर्व अवधि में भारत को लागू पूर्ववर्ती अंग्रेजी कामन विधि और साथ ही अधिष्ठायी विषयों का भारत के गणराज्य बनाने के पश्चात् भी प्रवर्तन में बना रहना सुरक्षित रखा है।

1.3. न्यायालयों की अधिकारिता के विषय में, संविधान का अनुच्छेद 225 विनियोजित रूप से उपबंध करता है कि संविधान के प्रारंभ की तारीख को विद्यमान उच्च न्यायालयों की सभी अधिकारिता, संविधान द्वारा समुचित विधान मण्डल को प्रदत्त शक्ति के आधार पर विरचित उसकी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए बनी रहेंगी। दूसरे शब्दों में किसी विद्यमान उच्च न्यायालय की अधिकारिता, और उसके द्वारा शासित विधि, तथा न्यायालय में न्याय के प्रशासन के संबंध में उसके न्यायाधीशों की अपनी-अपनी शक्तियाँ जिसके अन्तर्गत न्यायालय के नियमों को बनाने की कोई शक्ति और इसके सदस्यों के एकल पीठ या खड़-पीठ न्यायालयों में अधिष्ठित होने की शक्ति वही बनी रहनी है जो संविधान के प्रारंभ के ठीक पूर्व थी। अनुच्छेद 225 का परंतुक और, अनुच्छेद 226 और 227 करिपय शातों में जो उच्च न्यायालयों में संविधान के पूर्व नहीं थी, उनकी शक्तियों को व्यापक बनाते हैं जिनका विधि शास्त्र के उन क्षेत्रों पर सीधा प्रभाव है जिनसे हमारा यहां पर संबंध है। अनुच्छेद 32 और 136 भी उच्चतम न्यायालय में शक्तियाँ निहित करते हैं जो उच्चतम न्यायालय की उन विषयों की जांच करने और प्रभावी तथा निश्चायक अभिमतों की उद्धोषणा करने में वैसे ही समर्थ बनाएंगी जो विधिशास्त्र की इन शाखाओं से संबद्ध हैं जैसे कि वैधिक्य है जो विधि की किसी अन्य शाखा से संबद्ध है।

एक सौ इक्षावन्वर्षी रिपोर्ट

1. 4. भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 के अधीन, भारत एक डोमिनियन बन गया जिसे भारत सरकार अधिनियम, 1935 सहित विद्यमान विधियों को और ऐसे ब्रिटिश परिनियमों को जिन्हें भारत पर विस्तारित सोचा गया था संशोधित या निरसित करने की सावरेन विधायी शक्ति थी। स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 6 ने यह शक्ति, भारत के नव-सृजित डोमिनियन के विधान मंडल को प्रदत्त की। अधिनियम के अधीन 15 अगस्त, 1947 को या उसके पश्चात् पारित किसी ब्रिटिश परिनियम का प्रवर्तन भारत पर विस्तारित नहीं होना था और भारत का विधान मंडल, ब्रिटिश वंसद् के अधिनियमों का, भारत को उनके लागू होने में, निरसन या संशोधन करने के लिए सशक्त था। चूंकि ब्रिटिश संसद् द्वारा विरचित अनेक परिनियम भारत को लागू थे अतः संविधान के अनुच्छेद 372 ने विद्यमान विधि के तब तक बने रहने का उपबंध करने की सतर्कता बताई जब तक कि वे सक्षम विधान मंडल द्वारा परिवर्तित, निरसित या संशोधित नहीं कर दिए जाते। संविधान के प्रस्तावन के पश्चात् संसद् को अपनी निजी विधियों को अधिनियमित करके ब्रिटिश परिनियमों को प्रतिस्थापित करने की शक्ति थी यद्यपि संसद् ने 1957 तक ऐसा नहीं किया था। परिणामतः वे ब्रिटिश परिनियम जो भारत के एक “ब्रिटिश अधिकृत क्षेत्र” होने के कारण अभिव्यक्तरूप से भारत पर लागू होते थे, मूल पाठ में किसी परिवर्तन के बिना भारत पर लागू बने रहे। चूंकि भारत ने प्रभुतामपन्न गणराज्य की प्राप्तियां अंजित कर ली थी, अतः ब्रिटिश परिनियमों के बने रहने से विषमताओं का उत्पन्न होना आवश्यक था, जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा मद्रास राज्य बनाम सी० बी० बेतन¹ के मामले में नोटिस किया गया था। उच्चतम न्यायालय ने ब्रिटिश संसद् के एक अधिनियम प्रयुक्तिव आफैंडसे ऐक्ट, 1881 के उपर्यों पर विचार करते समय, यह संप्रेक्षण किया कि उस बदली हुई स्थिति में जो भारत के संविधान के प्रवृत्त होने के पश्चात् उत्पन्न हो गई थी अधिनियम को कार्यान्वित करना और उसे लागू करना संभव नहीं था। उच्चतम न्यायालय ने भारत में प्रवृत्त ब्रिटिश परिनियमों की उनके निरसन या संशोधन की दृष्टि से जांच करने की अत्यंत आवश्यकता पर जोर दिया।

1. 5. उसके पश्चात्, भारत के प्रथम विधि आयोग ने भारत पर लागू या लागू होने के संभावित ब्रिटिश परिनियमों की जांच की और मई, 1957 में सरकार को एक विस्तृत रिपोर्ट (5वीं रिपोर्ट) अंत्रेपित की। विधि आयोग ने, वाणिज्यिक पीत परिवहन, प्रत्ययन और नावधिकरण विषयक अधिकारिता जैसे उन विषयों से संबंधित ब्रिटिश परिनियमों पर विचार करते समय, जिनकी बाबत भारतीय अधिनियमितियां, संपूर्ण क्षेत्र को आवैष्टित नहीं करती, यह संप्रेक्षण किया कि संसद् के लिए अपनी निज की विधियों का अधिनियमन करके ब्रिटिश परिनियमों को प्रतिस्थापित करना आवश्यक था। विधि आयोग की रिपोर्ट के परिशिष्ट 3 में सिफारिश की गई कि ब्रिटिश परिनियम, अर्थात् ऐडमिरल्टी ज्यूरिसडिक्शन (इंडिया) ऐक्ट, 1860 और कोलोनियल कोर्ट्स आफ ऐडमिरल्टी ऐक्ट, 1890 को भारतीय विधि द्वारा निरसित किया जाना चाहिए। आयोग ने यह और सिफारिश की कि कोलोनियल कोर्ट्स आफ ऐडमिरल्टी ऐक्ट, 1890 के आवश्यक मौलिक उपर्युक्त, भारतीय विधान मंडल द्वारा अधिनियमित, नावधिकरण विषयक उपनिवेश (भारत) अधिनियम में जामिल किए जा सकते हैं ताकि भारतीय विधि, व्यापक हो जाए। विधि आयोग की सिफारिशों के अनुसरण में, संसद् द्वारा 259 परिनियमों को निरसित करते हुए ब्रिटिश परिनियम (भारत को लागू होना) निरसन अधिनियम, 1960 अधिनियमित किया गया था किन्तु, नावधिकरण विषयक अधिकारिता, अप्रभावित बनी रही, जिसके परिणामस्वरूप ब्रिटिश परिनियमों में वहां अंतर्विष्ट विभिन्न उपबंध भारत को लागू होते रहे हैं।

1. 6. नावधिकरण विषयक अधिकारिता में विधि की यह असंतोषजनक स्थिति, ऐम० बी० एलिजाबेथ एच्ड अदसं बनाम हावर्न इन्वेस्टमेंट एच्ड ट्रेडिंग प्रा० लि० के मामले में² उच्चतम न्यायालय की जानकारी में आई। उच्चतम न्यायालय, नावधिकरण अधिकारिता के क्षेत्र में विधायीकृत के अभाव पर आश्चर्यजनक और स्तब्द रह गया था।

एक सौ इक्षावन्वर्षी रिपोर्ट

न्यायमूर्ति सहाय ने इसे गंभीरता से महसूस किया तथा अपनी स्तब्दता और अपना आश्चर्य निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया:

“किन्तु, 1991 में भी जो सुनना आश्चर्यजनक था वह यह था कि भारत गणराज्य में उच्च न्यायालयों द्वारा प्रयोग की गई नावधिकरण विषयक अधिकारिता अभी भी गतकालिक इंगलिश ऐडमिरल्टी कोर्ट्स ऐक्ट, 1861 (जिसे इसमें इसके पश्चात् अधिनियम निर्दिष्ट किया गया है) द्वारा शामिल हो रही है जिसे ऐडमिरल्टी ऐक्ट, 1890 (संक्षेप में 1890 का अधिनियम) के (इंगलिश) उपनिवेशक न्यायालयों द्वारा लागू किया जाता था और जिसे कोलोनियल कोर्ट्स आफ ऐडमिरल्टी (इंडिया) ऐक्ट, 1891 (1891 का अधिनियम सं० 16) द्वारा अंग्रेजी किया गया था। इसकी अप्रिय ध्वनि, कानों में गूंजने पर भी इसमें कोई बनाव प्रतीत नहीं होता। यह स्तब्दता और भी बढ़ गई जब यह पता लगा कि कार्यकलाप की ऐसी स्थिति, विधायी कृत्य के अभाव के कारण है और वह भी उच्चतम न्यायालय के महास राज्य बनाम सी० बी० बेतन और साक्ष के मामले में विद्यमान इस विनिष्चय के परिप्रेक्ष्य में कि संविधान का अनुच्छेद 372 इस विधि के लिए व्यावृत्ति नहीं हो सकता क्योंकि ममूलन, प्रभुतासंपन्न लोकतात्त्विक गणराज्य की संकल्पना के विरुद्ध है। विधि आयोग ने भारत को लागू ब्रिटिश परिनियमों संबंधी अपनी 5वीं रिपोर्ट में संविधान के अनुच्छेद 372 के विस्तार पर विस्तृत चर्चा की थी और यह संप्रेक्षण किया था कि वे ब्रिटिश परिनियम, जो भारत के एक ब्रिटिश अधिकृत क्षेत्र होने के कारण अभिव्यक्तरूप से भारत पर लागू होते थे, मूल पाठ में कोई परिवर्तन किए बिना भारत को लागू माने जाते हैं, अतः आयोग ने काफी समय पूर्व 1957 में, उन परिनियमों की विषय-वस्तु पर जाहा, ऐसा करना आवश्यक है, अपनी विधियां अधिनियमित करने और यह स्पष्ट करते हुए कि परिनियम अब भारत को लागू नहीं है, विधायी कार्रवाई करने की अत्यावश्यकता पर जोर दिया था।”

न्यायमूर्ति थोमेन ने भी अन्तरराष्ट्रीय अभिसम्य और घोषणाओं को ध्यान में रखकर नावधिकरण विषयक अधिकारिता से संबंधित विधि के संहिताकरण की आवश्यकता पर जोर दिया था⁴। विडान न्यायाधीश ने यह संप्रेक्षण किया कि भारत के विधि आयोग को इस विषय में कार्रवाई करना चाहिए।

1. 7. इन अभिवचनों का व्यापक प्रभाव यह है कि भारत के उसके अपने संविधान के अधीन गणतांत्र होने के बावजूद, भारतीय न्यायालय नावधिकरण विषयक, पोतपरिवहन और सामुद्रिक विधि, इंगलिश कामन ला और ब्रिटिश संसद् द्वारा अधिनियमित तथा औपनिवेशिक भारत पर विस्तार की गई परिनियम विधि के अनुसार शासित करते रहे हैं। इलांकि ब्रिटिश नावधिकरण विधि में अनेक मूलभूत परिवर्तन हो चुके हैं फिर भी भारत में नावधिकरण, पोतपरिवहन और सामुद्रिक विधि के संपूर्ण क्षेत्र को आवैष्टित करने वाला कोई विधान नहीं है और नावधिकरण की अधिकारिता रखने वाले भारतीय न्यायालय अभी भी इंगलिश न्यायिक पूर्व निर्णयों का अनुसरण कर रहे हैं। भारत में ब्रिटिश राज के दौरान मूम्बई, कलकत्ता और मद्रास स्थित तीन उच्च न्यायालय नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग करते थे, किन्तु संविधान के प्रस्तावन के पश्चात्, संविधान द्वारा और न्यायालय स्थापित किए गए हैं नावधिकरण विषयक मामलों की बाबत उनकी अधिकारिता अवधि नहीं है। भारत के समुद्र तट की लम्बाई 5700 कि०मी० है और यह उपमहाद्वीप तीन दिशाओं में सागर से घिरा हुआ है। इसमें 11 महापल्टन और 163 लघु पल्टन हैं और पोत परिवहन उद्योग, लगभग 4 मिलियन टन से अधिक की सीमा तक सामुद्रिक व्यापार और कारबार चला रहा है। भारत ने अपनी अर्थ नीति उदार बना दी है और वह विश्व अर्थ नीति में प्रवेश कर रही है, परिणामस्वरूप अंतरराष्ट्रीय पोतपरिवहन और समुद्रीय कारबार में अत्यधिक बढ़ि होगी। न्यायालयों की अधिकारिता से संबंधित समुद्रीय नावधिकरण विषयक विधियों के अभाव में, पोत परिवहन और सामुद्रिक व्यापार को अत्यधिक हानि पहुंचेगा।

एक सौ इक्यावनवीं रिपोर्ट

अतः समूद्र की विधि से संबंधित सुरक्षित अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों और संधियों को ध्यान में रखते हुए देशी आवश्यकता के अनुसार समुद्रीय पोत परिवहन और नौपरिवहन की बाबत विधि के संहिताकरण की तात्कालिक ज़रूरत है।

1.8. पूर्वीकृत अभिवर्धनों को ध्यान में रखते हुए आयोग का यह अभिमत यह कि हालांकि संबंध प्रशासनिक विभाग ने उसके लिए कोई निर्देश करना आवश्यक नहीं समझा है, फिर भी नावधिकरण विषयक अधिकारिता के विभिन्न पक्षों पर विचार करना आवश्यक है। अतः आयोग ने स्वप्रेरणा से, समुद्री व्यापार और पोतपरिवहन की बढ़ती हुई आवश्यकता की पूर्ति के लिए नावधिकरण विषयक अधिकारिता से संबंधित भारतीय विधि के संहिताबद्धकरण के लिए विधायी कार्ये आरंभ करने के लिए अपनी रिपोर्ट देश करने और सिफारिश करने का इस विषय पर निष्पत्ति किया।

1.9. रिपोर्ट चार भागों में विभाजित है। खंड 1 प्रारंभिक प्रकृति का है जिसमें इंगलैण्ड और भारत में नावधिकरण विषयक अधिकारिता के ऐतिहासिक विकास पर विचार किया गया है। खंड 2 में आयोग ने अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंचिदाओं के प्रतिनिर्देश से नावधिकरण विषयक अधिकारिता के मूलभूत पक्षों पर विचार किया है। खंड 3 में नावधिकरण विषयक अधिकारिता की प्रकृति और विस्तार और नावधिकरण न्यायालयों की स्थापना की बाबत मूददों पर चर्चा की गई है, इसमें उन प्रक्रमों पर भी विचार किया गया है जो विधि को अद्यतन बनाने के लिए उठाए जाने हैं। खंड 4 में विधि आयोग के निष्कर्ष और उसकी सिफारिशें हैं। उपांचांद 8 में प्रस्तावित नावधिकरण विषयक विधेयक का प्रारूप अंतर्विष्ट है।

सादृ दिप्तिष्ठ—अध्याय 1

- ए० आई० आर० 1954 एस० सी० 517।
- ज० टी० 1992 (2) एस० सी० 65।
- ए० आई० आर० 1954 एस० सी० 517।
- ज० टी० 1992 (2) एस० सी० 65।

अध्याय 2

साधारण पृष्ठभूमि

2.1. वाणिज्य पोत परिवहन के अंग्रेजी भाषाभाषी विश्व, विशिष्टतः उस अंतर्राष्ट्रीय में जो यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य में विद्यमान है, में “नावधिकरण विषयक” और “सामुद्रिक” विधि पदों को प्रायः पर्यायवाची माना गया है तथापि सामुद्रिक विधि अधिक व्यापक और वर्णनात्मक निर्देश है जब कि “नावधिकरण” न्यायालयों में प्रशासित विधि को निर्दिष्ट करता है। इसके उद्भव में, सामुद्रिक विधि का विकास, समुद्र परिवहन के आचरण से हुआ है जो उतनी ही प्राचीन है जितनी कि मानव सभ्यता है। पोत को असभ्यता का अंतिम स्थृति चिह्न और सभ्यता का प्रथम स्थृति चिह्न बतलाया गया है। सुदूरवर्ती परिवहन और वाणिज्य साधारणतः, प्राचीनतम काल से आज तक की लंबी दूरी तय कर चुके हैं और नावधिकरण विषयक अधिकारिता, अपने अस्तित्व के लिए इस बात पर निर्भर है अन्तर्राष्ट्रीलित बादहेतुक नावधिकरण या समुद्रीय विषय है या नहीं। मूलरूप से, विशिष्ट अधिकारिता का समुद्रीय प्रयोजन है और यह सामान्य विधि से भिन्न है। इसका सशक्त आंतरिक पक्ष है किन्तु इसमें अनेक देशों में स्वतंत्र परिवर्तन हो सकते हैं। नावधिकरण विषयक विधि की कठिनत्य विशेषताएं उन सभी देशों में विद्यमान हैं जहां पर वह विधि है और ऐसी अंतर्राष्ट्रीय विशेषताओं पर साधारण न्यायालयों द्वारा गंभीर रूप से विचार किया जाता है।

2.2. नावधिकरण विषयक विधि शास्त्र प्रणाली विटिश उपनिवेशियों द्वारा कागज लाँ और साम्या के साथ संयुक्त विश्व में ले जाया गया था और प्रायः सभी उपनिवेशों में समुद्रीय विधि के प्रशासन के लिए न्यायालय स्थापित किए गए थे। ये नावधिकरण विषयक न्यायालय तब तक उनको प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते रहे जब तक कि उन्हें संबंध देश के उपयुक्त विधान द्वारा प्रतिस्थापित नहीं कर दिया गया। तथापि, नावधिकरण विषयक अधिकारिता की कोई कानूनी परिभाषा नहीं है और यदि इसकी ठीक सीमाओं को परिभाषित करने का कोई प्रयास किया जाता है तो कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं। प्राचीन इंगलिश लाँ के अधीन नावधिकरण विषयक अधिकारिता का कार्यक्षेत्र सीमित है।

2.3. भारत में, नावधिकरण विषयक अधिकारिता, विधिशास्त्र की एक अपरिचित शाखा है। यहां तक कि अधिकता और न्यायाधीश भी विधि की इस शाखा की तकनीकों से परिचित नहीं हैं यद्यपि भारत काफी समय से समुद्रीय व्यापार करता आ रहा है किन्तु दुर्भाग्यवश नावधिकरण विषयक अधिकारिता से संबंधित विधि का विकास नहीं हुआ है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है भारत विटिश नावधिकरण विषयक विधियों का अनुसरण करता रहा है और भारतीय न्यायालयों की अधिकारिता भी विटिश संसद द्वारा बनाई गई विधियों द्वारा विनियमित होती थी। चूंकि नावधिकरण विषयक अधिकारिता का आधार विटिश नावधिकरण विषयक विधियां हैं अतः इंगलैण्ड में नावधिकरण विषयक अधिकारिता के उद्भव और इतिवृत्त का सार प्रस्तुत करना आवश्यक और उचित होगा।

2.4. नावधिकरण विषयक अधिकारिता का मूल हेल्सबरीज ला आफ इंगलैण्ड¹ में संक्षिप्त रूप में खोजा जा सकता है। जिसके अनुसार, इंगलैण्ड में भी, नावधिकरण विषयक विधिशास्त्र, यद्यपि नावधिकरण विषय अधिकारिता अति प्राचीन है, फिर भी यह विधि शास्त्र की एक अपरिचित शाखा है। दांडिक अधिकारिता रखने के परिणामस्वरूप लार्ड हार्ड ऐडमिरल के न्यायालय ने समुद्र से जुड़े सिविल साथ ही आपराधिक मामलों में सभी की सुनवाई आरंभ की और धीरेंदीरे देश के भीतर जवार जल से उद्भूत मामलों में कागज ला न्यायालयों की अधिकारिता में अन्वयित्व हस्तक्षेप करना आरंभ किया जिसके कारण

रिचड-2 के शासन काल में ऐडमिरल और उनके डिप्टी की अधिकारिता, सागर और महानदियों की मुख्य जल धारा पर की गई बातों तक परिशुद्ध करते हुए दो परिनियम पारित किए गए। इन परिनियमों द्वारा यथा समायोजित ऐडमिरल्टी की दांडिक अधिकारिता 1537 तक बनी रही जब कि वह ग्रेंड सौल के अधीन आयर और टर्मिनर के आयुक्तों को काफी हद तक, अंतरित कर दी गई जिनमें से एक नावधिकरण न्यायालय, का न्यायाधीश था। नावधिकरण न्यायालय की सिविल अधिकारिता रिचड-2 के परिनियमों द्वारा अधिकथित सीमाओं के भीतर बनी रही, किन्तु इसके प्रयोग में नावधिकरण न्यायालय को कामन ला के उच्च न्यायालयों के साथ काफी लम्बा संबंध करना पड़ा। नावधिकरण न्यायालय ने उस प्रत्येक बात पर जो खुले समुद्र पर घटित हुई, अपनी सर्वोच्च और पूर्णतम अधिकारिता प्राप्त्यापित की किन्तु वह कामन ला न्यायालयों को मार्ग देने के लिए बाध्य था और धीरेधीरे पूर्ण सीमा तक, जिसका उसके पहले दावा किया था, इसके द्वारा अधिकारिता का प्रयोग समाप्त हो गया। तिस पर भी इसने विलियम के शासन काल में घटी हुई अधिकारिता प्रतिधारित कर ली जिनमें अनेक महत्वपूर्ण विषय जैसे खुले समुद्र पर हुई टक्कर और अपकूल्य, पोतवंधक बदला आदि, शामिल थे। यह स्थिति नावधिकरण विषयक न्यायालय अधिनियम, 1840³ के पारित होने तक बनी रही जो इंगलैंड में “नावधिकरण विषयक उच्च न्यायालय की अधिकारिता को बढ़ाने और प्रथा को सुधारने के लिए” पारित किया गया था। यह अधिनियमों की शून्यता का पहला अधिनियम था जिसने अधिकारिता बढ़ाई या परिभाषित की जिनमें से नवीनतम अधिनियम, सुप्रीम कोर्ट ऐक्ट, 1981 है.....पिछले सौ वर्षों में इंगलीश सामुद्रिक विधि, यद्यपि अलग-अलग न्यायालयों में विकसित हुई और कामन ला की संकल्पनाओं में परिवर्तनों द्वारा अत्यधिक प्रभावित होती रही और आज की बाबत साधारण विधि से पूर्णतः पृथक विधि की एक प्रणाली गठित करने वाली मानी जाती है तो इससे भूल हो सकती है। आधुनिक अंतरराष्ट्रीय विधि में, यह मान-लिया गया है कि नावधिकरण विषयक न्यायालयों की अधिकारिता, खुले समुद्र पर विदेशी पोतों⁴ और साथ ही खुले समुद्र पर किए गए क्षतिकारक कृत्यों, दोनों पर है। दूसरे शब्दों में, अब उच्च न्यायालय की नावधिकरण विषयक अधिकारिता का विस्तार सभी पोतों या विमानों पर है जो वे रजिस्ट्रीकृत हों या न हों और उनके स्वामियों का निवास या अधिवास चाहे जहां भी हों और सभी दावों के संबंध में भी है जो वे जहां पर उद्भूत हो रहे हों। तथापि अधिकारिता का विस्तार अधिकारिता के प्रयोग की पद्धति को शासित करने वाले नियमों के अध्यधीन है।⁵ साधारणतः न्यायालय की अधिकारिता टक्कर और अन्य वैसे ही मामलों में भी निर्वन्धित है जहां कृत्य क्षतिकारी है.....। सामुद्रिक कृत्यों की अंतरराष्ट्रीय प्रकृति और सर्वान्धी अग्रसर होने का अधिकार त्वरित रूप से अधिकारिता और विवादों का संघर्ष पैदा कर देता है कि किस मंच पर दावों की सुनवाई की जानी चाहिए।⁶

2.5. भारत में स्थिति—जहां तक भारत का संबंध है, नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग केवल कुछ भारतीय उच्च न्यायालयों द्वारा किया जा रहा है क्योंकि यह विषय अभी भी प्रचलन में न रह गए इंगलिश ऐडमिरल्टी कोर्ट ऐक्ट, 1861 द्वारा शासित हो रहा है जो बारंभ में (इंगलिश) नावधिकरण विषयक औपनिवेशिक न्यायालय अधिनियम, 1890 द्वारा भारत पर लागू किया गया था और फिर नावधिकरण विषयक औपनिवेशिक न्यायालय (भारत) अधिनियम, 1891 (1891 का अधिनियम संख्यांक 16) द्वारा भारत द्वारा अंगीकार कर लिया गया था। जहां तक नावधिकरण विषयक अधिकारिता में दांडिक अपराधों का संबंध था, भारत पर नावधिकरण विषयक अपराध (उपनिवेश) अधिनियम, 1849 का विस्तार किया गया था, किन्तु उनका विचारण करने की शक्ति केवल उच्चतम न्यायालय⁷ को थी। ऐसा नावधिकरण विषयक अधिकारिता (भारत) अधिनियम, 1860⁸ द्वारा किया गया था।

2.6. इंगलैंड में सुप्रीम कोर्ट ज्यूडिकेचर ऐक्ट, 1773 पारित किए जाने के पश्चात् भारतीय विधान मंडल द्वारा समय-समय पर, नावधिकरण विषयक अधिकारिता से संबंधित अनेक अधिनियम पारित किए गए थे, जिनका परिणाम यह हुआ कि विधि को निर्देशित

किया जाना लगातार कठिन होता गया और उनके समेकन की जरूरत अत्यधिक आवश्यक हो गई। यद्यपि अनेक प्रयास किए गए थे, फिर भी विधिक और संवैधानिक कठिनाइयों के कारण सभी प्रयास असफल हो गए। इसके लिए दो प्रमुख योगदायी कारक थे। पोत परिवहन की बाबत विधान बनाने की भारतीय विधान मंडल की सीमित शक्तियां और यह तथ्य कि इस विषय पर ब्रिटिश परिनियम विधि का एक भाग भारत पर लागू होता था और किसी भारतीय अधिनियमित या उस विधि से सामंजस्य होना आवश्यक था। परिनियम विधि पुनरीक्षण समिति द्वारा 1921-22 में बाणिज्य बोत परिवहन संबंधी भारतीय विधि को संहिताबद्ध करने का एक प्रयास किया गया था जिसने यह विनिश्चित किया कि तत्काल उसके समेकन का, न कि उसके पुनरीक्षण का, प्रयास किया जाना चाहिए। परिणाम था भारतीय बाणिज्य बोत परिवहन अधिनियम, 1923, जो लगभग 30 अधिनियमों के साथ (अधिनियम की अनुसूची में उल्लिखित) निरसित कर दिया गया था। उक्त अधिनियम भी समय-समय पर संशोधित किया गया और उन अन्तरराष्ट्रीय अभिसमयों के उपबंधों को विशेष रूप से क्रियान्वित करने के लिए, जिन्हें भारत द्वारा अनुसमर्थित किया गया है, इसे बाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958 (1958 का 44) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। 1958 के अधिनियम का उद्देश्य मुख्य रूप से “राष्ट्रीय हित को पूरा करने के लिए सर्वोत्तम उपयुक्त रीति से विकास का पोषण करना और उस प्रयोजन के लिए एक राष्ट्रीय पोत परिवहन बोर्ड और एक पोत परिवहन विकास निधि की स्थापना करना भारतीय पोतों के रजिस्ट्रीकरण के लिए उपबंध करना और साधारणतः बाणिज्य पोत परिवहन से संबंधित विधि का संशोधन और समेकन करना है। यद्यपि अधिनियम के भाग 10, भाग 10क और भाग 10ब, टक्करों, समुद्र पर दुर्घटनाओं और जल प्रदूषण के लिए दायित्व को निर्दिष्ट करते हैं, फिर भी, नावधिकरण विषयक अधिकारिता की समस्या अनुसूचिती छोड़ दी गई है और अभी भी भूतपूर्व ब्रिटिश अधिनियमों द्वारा शासित होता है जो, संविधान के अनुच्छेद 372 के फलस्वरूप, इस तथ्य के बावजूद प्रवृत्त बने हुए हैं कि उनमें से कुछ (जैसे 1961 का अधिनियम) इंगलैंड में पहले ही निरसित कर दिए गए हैं। इस प्रकार, “नावधिकरण विषयक” अधिकारिता पर 1840 और 1861 का ब्रिटिश ऐडमिरल्टी कोर्ट ऐक्ट ही है जो कानूनी आधार का उपबंध करता है यद्यपि तब से अब तक उस विषय पर अनेक अन्तरराष्ट्रीय अभिसमय भी आ गए हैं।

2.7. विधि की असतोषप्रद स्थिति—उपर्युक्त संक्षिप्त ऐतिहासिक पृष्ठभूमि यह प्रचुरतः स्पष्ट कर देता है कि विधिशास्त्र की इस शाखा में भारतीय विधि की स्थिति असतोषप्रद है। नावधिकरण विषयक मामलों पर कार्रवाई करने के लिए न्यायालयों को अधिकारिता को अधितः सारतः परिभाषित किए जाने की आवश्यकता है। सामुद्रिक विधि के विभिन्न पक्षों पर विद्यमान विभिन्न परिनियमों का पुनरीक्षण किया जाना और समुचित रूप से संशोधित किया जाना आवश्यक है। कामन ला और साथ ही, निर्णयविधि में यथा प्रक्षेपित, न्यायाधीश निर्मित विधि, का विशेषण किया जाना और जहां आवश्यक हो, संहिताबद्ध किया जाना आवश्यक है। विभिन्न उन अन्तरराष्ट्रीय करारों, न्याचारों और अभिसमयों को, भारत जिनका पक्षकार या हस्ताक्षरकर्ता या सहमतिदाता राज्य है, संकलित और समेकित किया जाना है। विधि की इस शाखा को अद्यतन करने और अन्तरराष्ट्रीय नियमों और अभिसमयों तथा अन्य देशों में हुए विकास के अनुरूप लाने के लिए अत्यधिक आधारिक कार्य किया जाना है। निरपवादितः भारत में, पोत परिवहन की विनियामक विधि पोत परिवहन विधि पोत परिवहन अधिनियम, 1958 में अन्तर्विष्ट है किन्तु यह नावधिकरण विषयक अधिकारिता के संबंध में व्यवहृत नहीं है।

2.8. बतंगान विस्तार परिसीमित है—नावधिकरण विषयक विधि की दोतक है। यह भारतीय वहन पत्र अधिनियम, 1856, भारतीय समुद्र द्वारा माल वहन अधिनियम, 1925, बाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958, बहुविधि परिवहन अधिनियम, 1993 जैसे विशेष परिनियमों और समुद्री बीमा अधिनियम, 1963, भारतीय संविदा अधिनियम, 1872, साध्य अधिनियम, 1872, भारतीय दंड संहिता, 1860, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

और कंपनी अधिनियम, 1956 जैसे साधारण परिनियमों में शामिल क्षेत्रों को आवेदित करती है और यह कामन ला तथा विधि के साधारण सिद्धान्त जैसे अपकृत्य विधि पब्लिक और प्राइवेट अन्तरराष्ट्रीय विधि को भी आवेदित करती है। यह पत्तनों से संबद्ध भागों जैसे भारतीय पत्तन अधिनियम, 1908 और महापत्तन अधिनियम, 1963 को भी आवेदित करती है। यह भाग के आयात या निर्यात के संबंध में पोतों, भाग और व्यक्तियों को प्रभावित करने वाले विभिन्न विनियामक उपायों को अन्तर्विष्ट करने वाले सीमाशुल्क अधिनियम, 1962 द्वारा व्यवहृत भागों को भी अपनी परिधि में ले लेती है; इसमें समुद्री सीमाओं¹⁰ को स्पर्श करने वाले और नियोजन तथा श्रम आदि को शासित करने वाले कानूनी उपबंध भी शामिल हैं। इन सभी क्षेत्रों को लागू विधि के समेकन का कार्य अति विशाल है और कम समय के भीतर इसे प्रभावी रूप से, उसकी समग्रता में पूरा नहीं किया जा सकता है। आयोग का यह अभिमत है कि अधिक व्यावहारिक और युक्तियुक्त अभिगम विधि को विभिन्न चरणों में संहितावद्ध करना होगा। अतः आयोग प्रथमतः नावधिकारण विषयक भागों से संबद्ध विधि के संहिताकरण की ही प्रस्थापना करता है। अतः यह रिपोर्ट नावधिकारण विषयक अधिकारिता से संबंधित विवादों तक ही सीमित है।

पाद दिष्पण—अध्याय 2

1. हेल्सबरीज लाज आफ इंगलैंड, खंड 1 (4 का संस्करण) (पुनः मुद्रित) पैरा 301-304।
2. समुद्र पर अपराध अधिनियम, 1536 (निरसित)।
3. नावधिकारण विषयक अधिकारिता अधिनियम, 1931 (अब निरसित)।
4. अपवाद, विदेशी साम्राज्यों के पीत हैं, हेल्सबरीज लाज आफ इंगलैंड (चौथा संस्करण) (पुनः मुद्रित) पैरा 304।
5. यह परिनियम द्वारा हो सकता है जैसे कि सुप्रीम कोर्ट एकट, 1980 (यू०के०) या अंतरराष्ट्रीय अधिसमयों द्वारा जैसे कि समुद्रगामी पोतों की गिरफ्तारी या "टक्कर के विषयों में सिविल अधिकारिता से संबद्ध नियम" से संबंधित अभिसमय।
6. समुद्र सिविल न्यायालय बैनुअल, बां संस्करण, पृष्ठ 874-881।
7. समुद्र सिविल न्यायालय बैनुअल, बां संस्करण, पृष्ठ 882-3 इस अधिनियम में सुम्बई, कलकत्ता और मद्रास उच्च न्यायालयों को नावधिकारण विषयक औपनिवेशिक न्यायालय घोषित किया था।
8. ये सुम्बई, कलकत्ता और मद्रास सुप्रीम कोर्ट में।
9. इन दोनों अधिनियमितियों से उद्घरण परिशिष्ट में दिए गए हैं।
10. जे०टी० 1992-3, एस० सी० 65।

खंड 2

अध्याय 3

इंगलैंड में नावधिकरण विषयक अधिकारिता का ऐतिहासिक विकास

3.1. नावधिकरण विषयक विधि, सिविल और दांडिक प्रकृति के समुद्री विषयों का विनियमन करने वाली विधि शास्त्र की एक शाखा है और यह समुद्री विधि का किसी न्यायालय या अधिकरण से उत्पन्नी विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा प्रशासन करना अनुव्याप्त करती है। इस अधिकारिता का अंतिम घोट समुद्र की आरंभिक विधि में मिलता है जो साधारण रूप से बाणिज्यिक राष्ट्रों की विधि थी। इंगलैंड, एक डीप होने के कारण, सदैव समुद्र द्वारा बाणिज्यिक कारबार में लगा रहा है। चूंकि भारतीय नावधिकरण विषयक विधि विकसित हुई है। चूंकि भारतीय नावधिकरण विषयक अधिकारिता, इंग्लिश ला पर आधारित है अतः उस देश में नावधिकरण विषयक अधिकारिता के अंधेष्ठ में निर्देशित करना उचित होगा।

3.2. मध्यकाल के दौरान इंगलैंड में लाई हाई एडमिरल और ब्रिटिश द्वीप समूह के आसपास समुद्र के भिन्न-भिन्न भागों के लिए नियुक्त किए गए अन्य एडमिरलों को उनके कमान के जलयानों पर अनुशासनिक शक्तियां होती थीं। इसके अतिरिक्त एक तरह से वे समुद्री मजिस्ट्रेटों के रूप में कार्य करते थे। वे मात्र समुद्रीय अधिकारी थे जिन्हें प्राधिकार और शक्ति दोनों ही प्राप्त थे। वे प्रथा, रुद्धि और साम्या के अनुसार विवादों को अवधारित करते थे। साधारण तौर पर वे “पुश्करा” के रूप में माली गई शबू की संपत्ति की पकड़ की वापत विवादों को अवधारित करते थे। अंततः इन विवादों में से एक श्रेष्ठ व्यक्ति उद्भूत हुआ जो लाई हाई एडमिरल का डिप्टी होने से, दांडिक अधिकारिता का प्रयोग करने वाले इंग्लिश कोर्ट आफ एडमिरैल्टी का नियुक्त किया गया न्यायाधीश बन गया जो युद्ध के समय प्राइज़ कोर्ट के न्यायाधीश के रूप में कर्तव्यों का निर्वहन करता और कतिपय समुद्री वाद हेतुकों में अधिकारिता का प्रयोग करता था। वे दोनों अधिकारिताएं अंततोगत्वा लाई हाई एडमिरल और उसके अनुयायियों के लिए विल्कुल पृथक् हो गई। यह संक्षेप में, हाई कोर्ट आफ एडमिरैल्टी अधिकारिता की उत्पन्नि का निष्कर्ष है जो सदियों तक इंगलैंड के कामन ला और चांसरी कोर्ट से साथ-साथ संघर्ष करता रहा। जिनमें से एक इसकी अधिकारिता को बढ़ाना और दूसरा उसे बीमित करना चाहता था।

3.3. इंगलैंड के हाई कोर्ट आफ एडमिरैल्टी और कामन ला कोर्ट के बीच इस प्रतिवृद्धिता पर अंततः ब्रिटिश संसद का ध्यान गया। वर्ष 1389 में ब्रिटिश संसद ने एडमिरल और डिप्टी की अधिकारिता से संबंधित और हाई कोर्ट आफ एडमिरैल्टी की सीमाएं भी विहित करते हुए एक अधिनियम (13 रिंड 2 [1389]) पारित किया। अधिनियम में यह अधिकथित था कि एडमिरल और उसके डिप्टी राज्य के भीतर की गई किसी वात पर हस्तक्षेप नहीं करेंगे, किन्तु केवल समुद्र पर की गई किसी वात पर हस्तक्षेप करेंगे। पूर्णतः और अनन्यतः समुद्र पर न की गई वातों पर हाई कोर्ट आफ एडमिरैल्टी के हस्तक्षेप न करने वाले इस विधान के बावजूद नावधिकरण विषयक न्यायालय अधिकारिता के प्रतिषिद्ध क्षेत्र पर अनधिकार प्रवेश करते रहे। ब्रिटिश संसद ने एक दूसरा परिनियम (नावधिकरण अधिकारिता अधिनियम, 1391) पारित किया, जिसमें यह स्पष्ट किया गया कि देश की सीमाओं के भीतर और साथ ही जल पर तथा समुद्र में पोत भंग से उत्पन्न होने वाली सभी प्रकार की संविदाओं, अभिवाकों और झगड़ों और अन्य सधी वातों पर एडमिरल के न्यायालय का किसी भी रीति से संज्ञान, शक्ति या अधिकारिता नहीं होगी, इसके बजाय ऐसी सभी प्रकार की संविदाएं, अभिवाक् और झगड़ों और देशों के क्षेत्र के भीतर और साथ ही जल तथा यथोक्त समुद्र में पोत भंग के मामलों पर देश की विधि द्वारा विचारण, विचारण अवधारण विचार और अनुतोष,

एक सौ वृश्चांशवर्षी रिपोर्ट

दिया जाएगा और ऐडमिरल या उसके लेटीरों के सलाह या उनके द्वारा नहीं इस अधिनियम के यह बात कर दी कि हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी की अधिकारिता खुले समुद्र पर की गई बातों तक ही विविधित थी और किसी देश के लोकों के भीतर उत्पन्न होने वाली बातों पर कार्रवाई करने की उसकी अत्यंतिकता कोई अधिकारिता नहीं थी। तथापि यह अधिनियमित अधिकारिता के संचर्ज का अदर्जन कर पाने में सफल नहीं हो पाई।

3.4. नावधिकरण विषयक न्यायालय की अधिकारिता विहित करते हुए 1648 में एक अध्यादेश जारी किया गया था, किन्तु वह अधारक कर दिया था और उसके पश्चात् हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी का लगभग 2 लाख बीरों तक कोई यहत्व नहीं रह गया था जब तक कि अठाहुनी शताब्दी में लाई टीवी देश की जिल्हता और योजना ने इस न्यायालय को सर्वोच्च महत्व की वित्ती में नहीं पहुंचा दिया। वर्ष 1840 में ब्रिटिश संसद में हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी को युद्धारने और उसकी अधिकारिता को बढ़ाने के लिए नावधिकरण विषयक अधिकारिता विविधित, 1840 (3 और 4 विक्टोरी 65, जिसे इसके पश्चात् 1840 का अधिनियम कहा जाता है) पारित किया। इस अधिनियम की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी, देश के भू-भाग के भीतर उत्पन्न होने वाली बातों का भी वैधी ही संज्ञा दी गई थी कि लालन ला कोर्ट, 1840 के अधिनियम में अन्य बातों के साथ-साथ किसी पोत द्वारा प्राप्त नुकसान की बाबत बातों के लिए उपब्रथा किया।

3.5. वर्ष 1861 में ब्रिटिश संसद में इंडियन ऐडमिरलटी कोर्ट ऐक्ट, 1861 अधिनियमित किया। इस अधिनियम ने अधिकारिता के अधिकर्त्ता और हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी के दीव अधिकारिता संबंधी विशेष को दूर करने का प्रयत्न किया। 1861 के अधिनियम द्वारा पुरानापूर्ण परिवर्तनों में से एक यह था कि हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी, अपनी अधिकारिता पौर द्वारा हुए नुकसानों के आनंदों तक ही अधिकारिता परिवर्तित रखने के बाद, अब “पोत द्वारा किए गए नुकसान” के संबंध में भी दावों को ग्रहण कर सकता था। यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि 1840 के अधिनियम के अधीन “पोत द्वारा हुए नुकसान” की बात द्वारा हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी, कानून ला और चांसरी न्यायालयों की अधिकारिता संघर्षी थी किन्तु 1861 के अधिनियम के संबंध में हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी को अधिकारिता अनन्य थी। 1861 के अधिनियम में यह और उपब्रथा का किन्तु लम्बु पर किसी पोत द्वारा किए गए नुकसान के आनंदों में, व्यक्ति प्रकार को या ही सर्वोच्ची कार्रवाई के लिए या व्यक्तिवैधी कार्रवाई के लिए हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी के संबंध जाने का विकल्प प्राप्त था। इस अधिनियम की दूसरी विशेषता यह थी कि धारा 6 द्वारा उसने ऐडमिरलटी कोर्ट को इंगलैण्ड या बेल्ज के किसी भाग में स्थोरा के दावों की बाबत विदेशी पोतों पर भी अधिकारिता की उपचारणा के लिए सक्रिय किया किन्तु यह बाह्य स्थोरा को लागू नहीं होता था।

3.6. ज्यूडिकेशर ऐक्ट, 1873 ने जो 1875 में प्रवृत्त हुआ, हाई कोर्ट आफ ऐडमिरलटी को हाई कोर्ट आफ जस्टिस के साथ विलीन कर दिया जिससे ऐडमिरलटी ला, कानून ला और इंडिया का समेकत हो गया। 1881 के आगत स्थोरा के संबंध में दावों तक ऐडमिरलटी कोर्ट की अधिकारिता सीमित करने वाले उपब्रथा, न्याय प्रशासन अधिनियम, 1920 द्वारा हटा दिये गए। उस अधिनियम द्वारा हाई कोर्ट की अधिकारिता का विस्तार निम्नलिखित तक किया गया:

- (क) किसी पोत के उपयोग या किराए से संबंधित कारार से उद्भूत कोई दावा;
- (ख) किसी पोत में माल के बहन से संबंधित कोई दावा; और
- (ग) किसी पोत में बहन किए जा रहे माल की बाबत अपछत्य में कोई दावा।

3.7. 1861 के अधिनियम और पश्चात्त्वर्ती अधिनियमितियों को सुधीम कोर्ट आफ ज्यूडिकेशर (कन्सलिडेशन) ऐक्ट, 1925 द्वारा संदर्भित किया गया था। इस अधिनियम ने हाई कोर्ट की सभी पीठों में, नावधिकरण अधिकारिता विहित करके, न्यायालय को सर्वोच्ची काव्यों के असिरिक्त, ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा को स्वीकार करने के लिए संशब्दत किया है जो हाई कोर्ट की किसी अध्य पीठ में लाया जा सकता था। न्याय प्रशासन अधिनियम, 1956 द्वारा नावधिकरण विषयक अधिकारिता की भी और व्यापक तथा पुनर्प्रियावित किया गया है।

3.7. (क) 1925 का अधिनियम, सुधीम कोर्ट ऐक्ट, 1981 द्वारा अधिकारित किया गया। संसद ने सुधीम कोर्ट ऐक्ट आफ ज्यूडिकेशर के संशोधनों और अन्य अधिनियमितियों को समेकित करने तथा कातिय अप्रबलित और आवश्यक अधिनियमितियों को निरसित करने के लिए 1981 का अधिनियम अधिनियमित किया था। अधिनियम की धारा 20 हाई कोर्ट की नावधिकरण विषयक अधिकारिता को परिभाषित करती है तथा धारा 21 व 22 नावधिकरण विषयक अधिकारिता की प्रक्रिया, पद्धति और पद के संबंध में है। धारा 24 समुद्री और नावधिकरण विषयक अधिकारिता में आमतौर पर प्रदूषक विभिन्न अधिकारितों और व्यापारों को परिभाषित करती है। उस अधिनियम में अन्तिम उपब्रथों ने नावधिकरण विषयक मामलों में हाई कोर्ट की अधिकारिता को व्यापक बनाकर महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं। धारा 20, 21 और 22 के उपब्रथों की विस्तृत रूप से चर्चा करना आवश्यक नहीं है किन्तु यह नोट करना आवश्यक है कि वह स्थिति, जो अन्ततः इंगलैण्ड में प्रवाट हुई, यह है कि हाई कोर्ट की अधिकारिता सभी पीठों से निहित है यद्यपि व्यवहार में नावधिकरण विषयक कार्रवाई की जाती है। यह इस बात का भी सुनिश्चित करता है कि व्यक्तिवैधी कार्रवाई की प्रायिक अपेक्षाएं अर्थात् प्रतिवादी का आम्नायिक निवास स्थान या कारबार का स्थान अथवा बादहेतुक का संबंध इंगलैण्ड या बेल्ज से होने पर या इंगलिश हाई कोर्ट में संबंध विषय या उस न्यायालय की अधिकारिता में प्रतिवादी को पेश किया जाना। सर्वोच्ची नावधिकरण विषयक कार्रवाई के रूप में आरंभ की गई किसी कार्यवाही को लागू नहीं होते हैं। विधि जैसी वह इस समय है एसे अनेक दावों में सर्वोच्ची रूप में कार्रवाई करने के अधिकार का विस्तार करती है जो समुद्री व्यापाराधिकार को उत्पन्न नहीं होने देते। इसी प्रकार अब हाई कोर्ट की नावधिकरण विषयक अधिकारिता का व्यक्तिवैधी कार्रवाई द्वारा सभी मामलों में अवलंब लिया जा सकता है; यद्यपि अधिकारिता का व्योग अधिकारिता के भीतर कार्यवाहियों की सर्विस से संबंध न्यायालय के नियमों के प्रवर्तन द्वारा निश्च भी गई है।

3.8. इसी सी अभिसमय —स्थिति को अद्यतन बनाने के लिए उल्लेख किया जा सकता है कि सिविल ज्यूरिसिडिशन ऐड जजमेंट्स ऐक्ट, 1982 ने इंगलिश और स्कटिशल में सिविल और वाणिज्यिक विधियों में अधिकारिता और नियमों का प्रवर्तन संबंधी यूरोपियन आर्थिक आयोग अभिसमय अधिनियमित किया गया है।

3.9. परिनियमों की पूर्वोत्तर निर्देशों की क्रूंखला से किसी को यह ग्रान्त विषयास नहीं कर लेना चाहिए कि नावधिकरण विषयक न्यायालयों में प्रशासित विधि केवल परिनियमों से ही उपाप्त और उन्हीं तक परिसर्वात्मक नहीं है। “इंगलिश न्यायालयों में निहित व्यापक अधिकारिता, रुड़ी और प्रथा द्वारा विकसित समुद्री विधि के प्राचीन सिद्धांतों और साथ ही पश्चात्त्वर्ती परिनियमों से व्युत्पन्न हुई है जिनमें से अनेक परिनियमों ने अनेक सामुद्रिक देशों में व्यवरूप विधियों के एकीकरण संबंधी अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों के उपब्रथों को शामिल कर लिया है।” हालसवर्थ के बाब्दों में, “आधुनिक विधान ने कोर्ट आफ ऐडमिरलटी की अनेक एसी शक्तियों और अधिकार अधिकारिता पुनः प्रदान कर दी है जिनसे वह सभी वैधानिक विधियों में विचित कर दिया गया था। किन्तु नावधिकरण विषयक विधि ने जपनी वह अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति खो दी है जो किसी समय उसके पास थी। यह अनिवार्यतः इंगलिश ला है। वह विधि जो इंगलैण्ड के ऐडमिरलटी कोर्ट द्वारा प्रशासित की जाती है, इंगलिश मैरिटाइम विधि है। यह देश की सामान्य नगरपालिक विधि नहीं है अपितु यह वह विधि है जिसे इंगलिश ऐडमिरलटी

न्यायालय ने, या तो संसद के अधिनियम द्वारा या पुनरावृत विनिश्चयों, परंपराओं और सिद्धांतों द्वारा, इंग्लिश मैरिटाइम विधि के रूप में अंगीकार किया है। रोड़ियन्स की विधियों या ओवेरेन की विधि, या विस्वार्ड विधि या हैन्स्टाउन्स विधि अपने आप में इंगलैंड की ऐड-मिरेल्टी विधि का भाग नहीं हैं। किन्तु उनमें सामुद्रिक व्यवहार के ऐसे अनेक सिद्धांत और विवरण अंतर्विष्ट हैं जो डाइजेस्ट, और फ्रेंच में तथा अन्य अध्यादेशों में पाए जाने वाले सिद्धांतों के साथ इंग्लिश कोर्ट आफ ऐडमिरेल्टी के न्यायाधीशों द्वारा उस समय प्रयोग में लाए जाने थे जब वे अपने न्यायालयों में सिद्धांतों और व्यवहार को रूप देने और गढ़ने का प्रयास कर रहे थे।¹⁴

पाद टिप्पणी—अध्याय 3

1. इसकी खोज को यु-थामन, जस्टिस द्वारा एम वी एलिजाबेथ एण्ड अदर्स में अपने विद्वन्तापूर्जे नियम में की गई है और जनकारी के लिए, होस्टवर्च ए हिस्ट्री आफ इंग्लिश ला, वाल्यूम 1, 5 और 8 ऐडमिरेल्टी प्रैविट्स 5वा संस्करण, मार्सेंडन; सेलेक्ट लीज आफ दि कोर्ट आफ ऐडमिरेल्टी, वाल्यूम 1 और 2 तथा ला एण्ड कस्टम आफ दि सी वाल्यूम 1 और 2 वेनेडिल्टी आन ऐडमिरेल्टी, 6वा संस्करण, वाल्यूम 1 और गिल्मोर एण्ड ब्लैक ला आफ ऐडमिरेल्टी, 1957 के प्रति निर्देश किया जा सकता है।
2. रास्को, ऐडविरेल्टो ब्रैशिट्स, 5वा संस्करण, पृ० 14, जे टी 1992 (2) एस वी ६५ वैस ३४ में उद्भूत।
3. एलिजाबेथ एण्ड अदर्स बनाम हार्बरन इन्वेस्टमेंट अर्टिज ज डो १९३२ (2) एस वी ६५ इ० ३२।
4. ए हिस्ट्री आफ इंग्लिश ला, वाल्यूम 1, पृ० ५५८-५९

अध्याय 4

भारत में नावधिकरण विषयक अधिकारिता का विकास

4.1. प्रथम चार्टर महास, मुबई और कलकत्ता के नगरों में सहापौर न्यायालय, स्थापित कर के महापौर के न्यायालय, जो प्रयेक एक महापौर और नौ पौर मुख्य से मिलकर बना है, यूनाइटेड ईस्ट इंडिया कंपनी (पुरानी और नई कंपनियों को मिलाने के पश्चात्) को 1726 में अनुदत्त किया गया था। महापौर का न्यायालय कोर्ट आफ रिकार्ड था और इसे सभी सिविल वादों, अनुयोजनों और दलीलों को अपने अपने नगरों के भीतर विचारण, सुनवाई और अवधारित करने की अधिकारिता होती थी। गवर्नर और परिषद् के पांच ज्येष्ठ व्यक्तियों को पीस के वैमासिक सत्र करने की गवित सहित जस्टिस्स आफ दि पीस नियुक्त किया जाता था और वे उक्त नगरों के भीतर या उनके दस शील के भीतर किए गए सभी अपराधों (धोर देशद्रोह की छोड़कर) के विचारण के लिए कोर्ट आफ रिकार्ड गठित करते थे। 1753 के चार्टर द्वारा महापौर के न्यायालय, वैमासिक सत्र के न्यायालय, आदि उन के बीच अधिकारिता के पुनर्वितरण के साथ पुनर्स्थापित किए गए थे। 1773 में, ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थिति की जांच करने के लिए नियुक्त की गई सचिव की समिति ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। यह रिपोर्ट “दि रेग्युलेशन एक्ट” पारित करने का कारण बनी। 13 जी ई ओ III, सी-63 इस अधिनियम में हिज मैजस्टी को फोर्ट विलियम, बंगाल में सुप्रीम कोर्ट आफ जुडिकेचर स्थापित करने के लिए प्राधिकृत किया जिसमें एक मुख्य न्यायमूर्ति और तीन न्यायाधीश थे, जो सभी सिविल, दांडिक, नावधिकरण और चर्च संबंधी अधिकारिता का प्रयोग करते। फोर्ट विलियम स्थित सुप्रीम कोर्ट आफ जुडिकेचर, कोर्ट आफ जुडिकेचर, कोर्ट आफ रिकार्ड भी बनाया गया था। तदनुसार 26 मार्च, 1774 के चार्टर द्वारा एक कोर्ट आफ रिकार्ड स्थापित किया गया जिसका नाम “सुप्रीम कोर्ट आफ जुडिकेचर, कोर्ट विलियम, बंगाल” रखा गया, जिसमें एक मुख्य न्यायमूर्ति और तीन अन्य न्यायाधीश थे। इस प्रकार फोर्ट विलियम स्थित सुप्रीम कोर्ट आफ जुडिकेचर ने 1774 से नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग करना आरंभ किया। 26 मार्च, 1778 के चार्टर के खंड 26 में यह घोषित किया गया कि बंगाल में फोर्ट विलियम स्थित सुप्रीम कोर्ट आफ जुडिकेचर, बंगाल, विहार और उडीसा के प्रान्तों, देहातों या जनपदों और अन्य आधित राज्यक्षेत्रों तथा उनके पार्श्वस्थ द्वीपों में और उनके लिए “नावधिकरण न्यायालय” होगा। सुप्रीम कोर्ट को सभी वाद हेतुकों, सिविल और सामुद्रिक तथा संविदाओं, छर्णों, विनियमों, बीमा पालिसियों, लेखाओं, चाटर, जक्कारों, करारों, पोतों के लदान के सभी अभिवाकों को और उन सभी विषयों और संविदाओं को, जो किसी भी रीति से, चाहे वह जो भी हो, भाड़े या किराए पर लिए और दिए गए, पोतों के लिए देय रकम, परिवहन रकम, सामुद्रिक भोगाधिकार या बाटमरी (पीत बंध) से संबंध थे और सभी सिविल, तथा सामुद्रिक मामले चाहे वे कोई भी क्यों न हों जो भाड़ा या किराए पर लिए और दिए गए पोतों के लिए देय रकम, परिवहन रकम, सामुद्रिक भोगाधिकार या बाटमरी से संबंध थे, और सभी सिविल तथा सामुद्रिक विषय, चाहे वे कोई भी क्यों न हों, जो ऐसे व्यापारियों, ऐसे पोतों और जलयात्रों के स्वामियों और स्वत्वधारियों के बीच उत्पन्न हो, जो पूर्वोक्त अधिकारिता के भीतर नियोजित या उपयोजित होते हों अथवा अन्य संविदाकृत किए गए हुए या आरंभ किए गए पक्षों के बीच इन विषयों से संबंध हो अथवा जो संपूर्ण बंगाल, विहार और उडीसा तथा उन पार्श्वस्थ आधित राज्यक्षेत्रों के समुद्र के ज्वार भाटा तथा उच्च जल स्तर के भीतर, उन पर या उनके समीप उद्भूत हो, जिनकी संज्ञेता नावधिकरण विषयक अधिकारिता के संबंध में वैसी ही थी जैसी कि वह इंग्लैंड होती और प्रयोग की जाती, का संज्ञान करने, सुनवाई करने, विचारण करने और उन्हें अवधारित करने की

पूर्ण ग्रंथित और प्राधिकार था। चार्टर के खंड 27 ने सुश्रीम कोर्ट को अधिकारिता की पूर्वोक्त सीमाओं के भीतर खुले समुद्र पर किए सामुद्रिक अपराधों की बाबत इंगलैंड में नावधिकरण की विधि और रुद्धियों के अनुसार अधिकारिता का प्रयोग करने, विविल और नावधिकरण विधियों के अनुसार अपराधियों को दंडित करने और उन परिवद्ध तथा निर्भूत करने और पीतों, व्यक्तियों, वाल आदि का संज्ञान करने तथा उन्हें बन्दी बनाने की पूर्ण शक्ति और प्राधिकार प्रदान किया। खंड 27 में यह और अधिकारित था कि ऐसे बाद हेतुकों में कार्यवाहियों 27 मार्च, 1774 के उक्त चार्टर के क्रम और आदेश के अनुसार होनी थी, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी उपबंध था कि सामुद्रिक वाइं हेतुकों में अधिकारिता का विस्तार सम्राट के उम्हीं प्रजाजनों तक था जो किंडम या बंगाल, बिहार और उड़ीसा के प्रान्तों में निवास कर रहे थे और जो व्यक्ति कंपनी अथवा किसी प्रजाजन की सेवा में थे। यही स्थिति मुम्बई और मद्रास में भी थी।

4.2. 1861 का अधिनियम (स्टेट्यूट 24 और विवट अध्याय 104) भारत में हाई कोर्ट्स आफ जुडिकेचर स्थापित करने के लिए ब्रिटिश पालियामेंट द्वारा अधिनियमित किया गया था जो अन्य बातों के साथ-साथ हर मैजस्टी को यूनाइटेड किंगडम की ग्रेट सील के अधीन लेटर्स पेटेंट द्वारा कलकत्ता, मुम्बई और मद्रास में हाई कोर्ट्स आफ जूडिकेचर स्थापित करने के लिए प्राधिकृत करता है। अधिनियम की धारा 9 ने, अधिनियम के अधीन स्थापित हाई कोर्ट्स ऐसी सभी सिविल, दॉडिक नावधिकरण संबंधी और उच्च-नावधिकरण संबंधी वसीयती, निर्वासीयती और विवाह विषयक अधिकारिता अरंभिक और अपीली और ऐसी सभी शक्तियों और प्राधिकार जो उनकी अपनी अपनी प्रेसिडेन्सियों में न्याय के प्रशासन के संबंध में और उनके बारे में जो हर मैजस्टी लेटर्स पेटेंट द्वारा अनुदत्त या निदेशित करें, प्रयोग करने के लिए प्राधिकृत किया। 1862 के लेटर्स पेटेंट का खंड 31 अन्य बातों के साथ-साथ यह उपबंध करता है कि हाई कोर्ट्स को ऐसी सिविल और सामुद्रिक अधिकारिता होगी जो उस समय नावधिकरण के सुश्रीम कोर्ट द्वारा प्रयोग की जा रही थी। खंड 32 हाई कोर्ट्स द्वारा हाई कोर्ट्स में निहित अधिकारिता तारीख 28 सिद्धवार, 1865 के लेटर्स पेटेंट के खंड 32 और खंड 33 द्वारा जारी रखी गई।

4.3. ब्रिटिश पालियामेंट ने 1890 का नावधिकरण विषयक उपनिवेशिक न्यायालय आधिनियम (53 और 54 बिक्टोरी 20 सौ 2) (इसमें इसके पश्चात् 1890 का अधिनियम कहा गया है) अधिनियमित किया। यह अधिनियम 1 जुलाई 1891 को “ब्रिटिश कब्जावीन क्षेत्रों” में प्रवृत्त किया गया था। अधिनियम की धारा 2 उपबंध करती है कि किसी ब्रिटिश कब्जावीन क्षेत्र में प्रथेक ऐसा विधि न्यायालय, जिसे अधिनियम के अनुसरण में तत्समय नावधिकरण क्षेत्र में प्रयोग किया गया और यदि कोई ऐसा संबंधी न्यायालय घोषित किया गया और यदि कोई ऐसा न्यायालय है, जिसको असीमित सिविल अधिकारिता होगी। इसके अतिरिक्त यह उपबंध करता है कि ऐसा न्यायालय ऐसी सभी शक्तियों का प्रयोग करेगा जो वह अन्य सिविल करता है कि नावधिकारिता के प्रयोग के लिए रखता है। धारा 2 का खंड 2 घोषित करता है कि नावधिकारिता के प्रयोग की अधिकारिता वैसे ही स्थान, विषयों और चीजों पर होगी जैसे हाई कोर्ट की नावधिकरण संबंधी उपनिवेशिक न्यायालय ऐसी अधिकारिता का पूर्ण विस्तार तक उसी रीति में प्रयोग कर सकेगा जिसमें इंगलैंड में हाई कोर्ट करता है। धारा 3 असीमित सिविल अधिकारिता, चाहे आरंभिक हो या अपीली के किसी न्यायालय को नावधिकरण संबंधी उपनिवेशिक न्यायालय घोषित करने के लिए विधि अधिनियमित करने के लिए उपनिवेशिक विद्यान-मंडल को शक्ति प्रदत्त करती है। इस प्रकार की विधि अधिनियम के अधीन अधिनियमित करने के लिए विधि अधिनियमित करने के बारे में शक्ति प्रदत्त करती है, जो वह ठीक समझे।

4.4. 1890 के अधिनियम की धारा 3 में अन्तर्विष्ट पूर्वोक्त उपबंधों के अनुसरण में भारतीय विद्यान-मंडल ने नावधिकरण संबंधी उपनिवेशिक न्यायालय (भारत) अधिकारिता, 1891 (1891 का 16) (इसमें इसके पश्चात् 1891 का अधिनियम कहा गया है) अधिनियमित किया जिसमें हाई कोर्ट्स आफ जुडिकेचर को जो “असीमित सिविल अधिकारिता” के न्यायालय है, और जो कलकत्ता, मद्रास और मुम्बई स्थित है। 1890 के अधिनियम के अधीन स्थापित नावधिकरण संबंधी उपनिवेशिक न्यायालय घोषित किया गया। 1890 के अधिनियम की धारा 2(2) ने 1890 के अधिनियम के अधीन स्थापित नावधिकरण संबंधी उपनिवेशिक न्यायालयों की अधिकारिता हाई कोर्ट्स आफ इंगलैंड की, जैसा कि वह अधिनियम के प्रवृत्त होने की तारीख को विद्यान था, अधिकारिता सीमित कर दी। जैसा कि पहले उपदण्डित किया गया है, इंगलैंड में नावधिकरण संबंधी उच्च न्यायालय की अधिकारिता को ब्रिटिश पालियामेंट द्वारा पारित 1840 और 1861 के अधिनियमों द्वारा पर्याप्त रूप से विस्तारित कर दिया गया था। इंगलैंड में नावधिकरण संबंधी उच्च न्यायालय की अधिकारिता को इस विस्तारित अधिकारिता की विस्तार कर दिया गया था। 1890 के अधिनियम द्वारा नावधिकरण उपनिवेशिक न्यायालयों का प्रदान कर दिया गया था।

4.5. उसके पश्चात् लटर्स पेटेंट के अधीन स्थापित कलकत्ता, मुम्बई और मद्रास के चार्टर्ड हाई कोर्ट्स 1891 के अधिनियम के कारण की गई घोषणा को ध्यान में रखते हुए, नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग करते रहे। उनकी अकित्यां और अधिकारिता भारत शासन अधिनियम, 1915 और भारत शासन अधिनियम, 1935¹ द्वारा उत्तरोत्तर आग भी जारी रही। संविधान की प्रब्लेमना पर पूर्वोक्त चार्टर्ड हाई कोर्ट्स संविधान की अनुच्छेद 372 में अन्तर्विष्ट व्यावृति के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग करते रहे व्योंकि संसद् द्वारा नावधिकरण विषयक अधिकारिता को न सीमित करने के लिए न उसका विस्तार करने के लिए कोई विधि या कानून अधिनियमित किया। संविधान के प्रब्लेमन के पश्चात् भारत में उच्च न्यायालय, संविधान के अधीन उच्चतर संविधानिक न्यायालय होने के कारण सिविल विषयों में असीमित अधिकारिता का प्रयोग करते रहे। नावधिकरण विषयक अधिकारिता के विस्तार के बारे में उच्च न्यायालयों ने नावधिकरण विषयक अधिकारिता से उत्पन्न मामलों में प्रक्रिया और व्यवहार को विनियमित करने के लिए नियम बनाए थे।

4.6. जैसा कि पहले संप्रेक्षण किया गया है कि नावधिकरण विषयक अधिकारिता के विस्तार से संबंधित प्रश्न संविधान के प्रब्लेमन के पश्चात् कलकत्ता और मुम्बई उच्च न्यायालय के समक्ष विचारण आया। यसपि नावधिकरण विषयक अधिकारिता ब्रिटिश पालियामेंट द्वारा बनाई गई विधियों द्वारा इंगलैंड में पर्याप्त रूप से विस्तारित की गई तथापि ये विधियां भारत में लागू नहीं की जा सकतीं अतः उच्च न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता वैसी ही बनी रही जैसी उन्हें 1891 के अधिनियम द्वारा प्रदत्त की गई थी। कलकत्ता उच्च न्यायालय ने मद्रास में रजिस्टर किए गए एक पोत को जिसका स्वामी भारत में अधिवसित था कलकत्ता स्थित पत्तन में प्रदान की गई आवश्यक वस्तुओं के लिए एक दावे के बाद को इस आधार पर खारिज कर दिया व्योंकि पोत का स्वामी देश में अधिवसित हो गया था, अतः प्रदायकर्ता सामान्य सिविल न्यायालयों में विधि की सामान्य प्रक्रिया द्वारा अपने उपचार की मांग कर सकता था। कलकत्ता उच्च न्यायालय की नावधिकरण विषयक अधिकारिता के विस्तार पर विचार करते समय न्यायमूर्ति मुख्यर्जी ने अवधारित किया कि नावधिकरण संबंधी न्यायालय अधिनियम, 1861 को ध्यान में रखते हुए, कलकत्ता उच्च न्यायालय की अधिकारिता सीमित थी²। कलकत्ता उच्च न्यायालय ने मद्रास स्टीम सेविंगेन कंपनी लिमिटेड बनाम शालीमार वर्क्स लिमिटेड³ के एक मामले में पहले भी नावधिकरण संबंधी उपनिवेशिक न्यायालय अधिनियम, 1890 के खंड 2(3)(क) का निर्देश करते हुए निर्वाधित रीति में नावधिकरण विषयक अधिकारिता का निर्वचन किया था।

4.7. मुम्बई उच्च न्यायालय⁴ ने उस न्यायालय की नावधिकरण विषयक अधिकारिता के क्षेत्र, प्रकृति और विस्तार के बारे में खुले समुद्र में किए गए अपकृत्यों के विशेष प्रति निर्देश से विचार विमर्श किया था। न्यायालय ने इंगलैंड और भारत में नावधिकरण विषयक

एक सौ इक्यावनवीं रिपोर्ट

विधि पर विस्तृत विचार करने के पश्चात् अधिनिर्धारित किया कि मुम्बई के न्यायालय को संविधान के प्रणालीपन के पश्चात् नावधिकरण विषयक वही अधिकारिता है जैसी उसे पहले थी, और जैसे इंग्लैंड में नावधिकरण विषयक अधिकारिता के उच्च न्यायालयों को कर्तिपय विषयों के बारे में अन्य अधिकारिता थी। काशीबाई बनाम एस० एल० लेबिगेशन⁹ में पुनः न्यायमूर्ति शाह ने मुम्बई उच्च न्यायालय की नावधिकरण विषयक अधिकारिता के उद्दगम और जारी रहने पर विचार किया। विद्वान् न्यायाधीश ने अवधारित किया कि खुले समूद्र में टक्कर के परिणाम स्वरूप जीवन की हानि के बारे में सर्वबंधी नुकसानी के लिए कोई बाद उच्च न्यायालय की नावधिकरण विषयक अन्य अधिकारिता के अन्तर्गत आता है।

4.8. कलकत्ता, मुम्बई और मद्रास उच्च न्यायालयों के दृष्टिकोण का बाद में इन्हीं उच्च न्यायालयों द्वारा और अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा भी अनुसरण किया गया। निःसंदेह इन विनिश्चयों में चार्टर्ड हाई कोर्ट्स की नावधिकरण विषयक अधिकारिता की विद्या मानता और जारी रहना कर्तिपय विचार के बारे में विवादाप्रस्त नहीं था किंतु भारत में उच्च न्यायालयों की अधिकारिता के विस्तार के संबंध में पर्याप्त संदेह था। कलकत्ता और मुम्बई में अपनाया गया दृष्टिकोण बलाता है कि भारत में उच्च न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता 1861 के इंग्लिश अधिनियम के द्वेष से बाहर नहीं थी और यह कि पश्चात्वर्ती लिटिश कानूनों द्वारा इंग्लैंड में नावधिकरण संबंधी न्यायालयों की अधिकारिता के विस्तार भारतीय उच्च न्यायालयों की अधिकारिता को बैमे ही विस्तारित नहीं करता। परिणामस्वरूप भारत में नावधिकरण विषयक अधिकारिता में कार्य करने वाला कोई उच्च न्यायालय देश में आने वाले स्थोरा के जिन्हें बाहर जाने वाले स्थोरा के बारे में बाद हेतुक के संबंध में सर्वबंधी अनुयोग में किसी विदेशी पोत को बन्दी या निष्ठा करने का आदेश नहीं कर सकता।

4.9. उच्च न्यायालयों द्वारा किए गए निर्विधित निर्वचन भारत में नावधिकरण विषयक अधिकारिता को सीमित करते हैं। भाग्यवश इस प्रश्न पर एम० बी० एलिजावेथ बनाम हर्बेन इन्वेस्टमेंट एंड ट्रेडिंग कंपनी¹⁰ के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा विस्तार पूर्वक विचार किया गया। शीर्षस्थ न्यायालय ने विभिन्न अधिनियमों की विस्तार से समीक्षा की और उसके पश्चात् उसने भारतीय उच्च न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता को उचित ठहराया। उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक मामले में बादी ने, जिसका रजिस्ट्रीकृत कार्यालय गोवा में था, इस आधार पर प्रत्यक्षी के पोत और उसके स्त्रीयों के विरुद्ध आन्द्र प्रदेश उच्च न्यायालय की नावधिकरण विषयक अधिकारिता का अवलंब लेकर सर्वबंधी अनुयोग के लिए एक बाद फाइल किया था कि प्रत्यर्थी ने पोत द्वारा भेजे गए माल के लिए बहत पत्र या अन्य दस्तावेज जारी किए बिना पत्तन छोड़ कर और इसके अलावा बादी के ऐसा न करने के विदेशों के होते हुए भी माल के उन्मोचन करने और उन्हें परेषिति को परिदित करने में “कर्तव्य भ्रंग” का कार्य किया, क्योंकि मूल्य का संदाय नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी ने इस आधार पर आरंभिक आक्षेप किया कि बादी का ऐसे विदेशी पोत के विरुद्ध बाद, जो किसी विदेशी कंपनी के स्वामित्वाधीन है और जिसका भारत में निवास या कारवार का स्थान नहीं है अपकृत्य में या भारत में किसी पत्तन से किसी विदेशी पत्तन को माल के बहन से उद्भूत दायित्व के किसी भ्रंग के लिए उत्पन्न किसी बाद हेतुक के बारे में सर्वबंधी किसी अनुयोग द्वारा उच्च न्यायालय की नावधिकरण विषयक अधिकारिता में की कार्यवाही नहीं की जा सकती थी। उच्च न्यायालय ने आक्षेप को नामंजूर कर दिया और उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के विनिश्चय को अपील में उचित पाया। न्यायाधीश थोम्सन, जो नावधिकरण विषयक अधिकारिता के विस्तार पर विचार कर रहे हैं, ने इस प्रकार कहा:

“इसी प्रकार समुचित भारतीय न्यायालयों की अधिकारिता के भीतर सभी व्यक्तियों और चीजों के बारे में विचार करने के लिए समूद्री विवि के साधारण सिद्धान्तों और कानूनी विवि के लागू उपबंधों के अनुसार वे सक्षम हैं। न्यायालय की शक्तिपूर्ण और असीमित है जब तक इसे अभिव्यक्ति: या आवश्यक विवक्षा द्वारा कम नहीं कर दिया जाता है। अधिकारिता की ऐसी कमी के अभाव में वे सभी उपचार जो न्याय के

एक सौ इक्यावनवीं रिपोर्ट

प्रशासन के लिए न्यायालयों को उपलब्ध हैं, दावेदार को विदेशी पोत के विरुद्ध को उपलब्ध हैं और उसका स्वामी संविधित उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर पाया गया। न्याय प्रदान करने की न्यायालय की इस शक्ति के अंतर्गत अनिवार्यतः निर्णय के पूर्व गिरफ्तारी और कुर्की के अंतर्वर्ती आदेश करने की शक्ति भी होनी चाहिए।”⁹

1890 के नावधिकरण अधिनियम का निर्देश करने में विद्वान् न्यायाधीश ने निम्न-लिखित संप्रेक्षण किया:

“भारतीय उच्च न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता को इंग्लिश हाई कोर्ट के समीकृत करने में नावधिकरण विषयक उपनिवेशिक न्यायालय अधिनियम, 1890 इंग्लैंड में हाई कोर्ट की नावधिकरण विषयक अधिकारिता को अर्थपूर्ण से निर्दिष्ट करता है, चाहे वह किसी कानून के कारण या अन्यथा विद्यापान है। यह समर्थकारी कानून है न कि शक्ति को सीमित करने वाला कानून। यह अधिकारिता को अधिवृद्धि में सहायता करता है और इसमें वाधा नहीं डालता। इसका कोई कारण नहीं है कि क्यों “कानून या अन्यथा” शब्दों का इस प्रकार अर्थन्वयन किया जाना चाहिए जिससे उन विभिन्न स्थितियों का अपवर्जन किया जाए जिनमें इंग्लैंड में नावधिकरण विषयक अधिकारिता विकसित हुई। कानूनों के अलावा उस न्यायालय की शक्तियां, जैसा कि ऊपर देखा गया और व्यवहार तथा कामन विधि और साम्या द्वारा विकसित सिद्धान्तों और साथ ही ग्रूप में विकसित और व्यवहार में लाई गई सिविल विधि के सामान्य रूप से मान्यता प्राप्त सिद्धान्तों से व्युत्पन्न हुई थी। इसका कोई कारण नहीं है, बारडोट, (ऊपर) में मुम्बई उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति वेस्टरौप ने ठीक ही कहा था कि क्यों “कानून या अन्यथा” पद का इस प्रकार अर्थ लगाया जाए जिससे कि विधिक सिद्धान्तों के उन सभी विशाल क्षेत्रों को अपवर्जित किया जाए, जो इंग्लैंड की समुद्री विधि को समूद्र और सशक्त बनाते हैं। इसी प्रकार कोई कारण नहीं है कि क्यों उन सिद्धान्तों को इस देश के विधिवास्त्र को समूद्र और सशक्त करने के लिए पक्षितवृद्ध नहीं करना चाहिए, यहां तक कि यदि हमारे न्यायालयों की अधिकारिता को, इतिहास की वाध्यताओं द्वारा कम किया हुआ और उपनिवेशिक अतीत से संगत बना हुआ समझा जाता था जो एक ऐसी प्रतिपादना है, जो न तो सही है और न ही प्रभुसत्ता सम्पन्न गणतंत्र के रूप में हमारी प्रास्थिति संगत है।”¹⁰

भारत में उच्च न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता को इस आधार पर उचित मानने में कि वे वरिष्ठ न्यायालय होने के कारण और संविधान के अधीन सीमित अधिकारिता रखने के कारण, न्यायमूर्ति थोम्सन दि स्कूनर एक्सर्चेज बनाम एस फैडम और अन्य, यू एस सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट इंच्च 5-9, पृष्ठ 114, 133 (3 एल०एड० 278), में यू एस सुप्रीम कोर्ट के विनिश्चय पर प्रबल आक्रोश रखते हैं और संप्रेक्षण करते हैं कि: “नावधिकरण विषयक अधिकारिता न्यायिक प्रभुसत्ता का एक अत्यावश्यक पहलू है जो संविधान और विधि के अधीन अधिलेख के विरुद्ध न्यायालय के रूप में उच्च न्यायालय द्वारा प्रयोग की जाती है और वह अपनी अधिकारिता के भीतर व्यक्तियों और चीजों के संबंध में न्याय प्रशासित करता है। विदेशी पोतों के विरुद्ध दावे प्रवृत्त करने की शक्ति नावधिकरण विषयक अधिकारिता का अत्यावश्यक गुण है और यह ऐसे पोतों पर उस समय स्वीकार की जाती है जब वे उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर होते हैं और जब उन्हें बंदी और निरुद्ध करके रखा जाता है।”

4.10. उच्चतम न्यायालय के समक्ष एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया कि क्या आन्द्र प्रदेश उच्च न्यायालय को जो चार्टर्ड उच्च न्यायालय नहीं है, नावधिकरण संबंधी विषयों में अधिकारिता प्राप्त थी। उच्चतम न्यायालय ने अधिनिर्धारित किया कि व्यक्तिको आन्द्र प्रदेश उच्च न्यायालय का उत्तराधिकारी है, अतः उसे नावधिकरण विषयक अधिकारिता प्राप्त थी। किन्तु यह प्रश्न कि क्या भारत के अन्य उच्च न्यायालयों को भी, जो नान चार्टर्ड उच्च न्यायालय हैं नावधिकरण विषयक अधिकारिता है, अधिव्यक्त विनिश्चय नहीं

किया गया, यद्यपि उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षणों से यह काफी स्पष्ट हो गया कि उच्च न्यायालय संविधान द्वारा गठित अभिलेख का वरिष्ठ न्यायालय होने के कारण, कानूनी निबंधनों, यदि कोई है, के अधीन रहते हुए, असीमित सिविल और अपीली अधिकारिता रखता है। न्यायालय ने आपे व्यवस्था दी कि भारत में उच्च न्यायालयों को संविधान के प्रख्यापन के पश्चात् नावधिकरण विषयक अधिकारिता है, जो 1861 के अधिनियम के अधीन इंग्लैंड में उच्च न्यायालय की शक्ति के परिसीमन द्वारा अनावरोधित है। इस दृष्टिकोण में नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए सभी उच्च न्यायालयों को शक्ति प्रदत्त करने के लिए विधि को लहिताब्द करने की आवश्यकता है। अपनी अधिकारिता के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार और परिषाटी को ध्यान में रखते हुए डंग, रीति और प्रक्रिया अधिकृति करनी होगी। प्रस्तावित विधान के व्यौरों पर पश्चाद्वर्ती अध्यायों में विचार किया जाएगा।

पाद टिप्पणी—अध्याय 4

1. द्वारा 220 और 223।
2. जनसंख्या विवरण कंपनी बनाये एस० एस० लैलावती, ए. आई आर 1954, कलकत्ता 415।
3. ए. आई आर 1915, कलकत्ता 681।
4. कमलेन्द्र बहादुर भगत बनाये सिविल स्टीम लैबिनेशन कंपनी लिमिटेड, ए. आई आर 1961, मुम्बई 186।
5. ए. आई आर 1961, मुम्बई 200।
6. सहीया इत्वाहील बनाये बैंकटी आर० सल्लेज कोच और अन्य, ए. आई आर 1973, मुम्बई 18 और संगता सन्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाये एस० एस० “एडिसन मेराइनर” और एक अन्य (1961-62) 66 सी डब्ल्यू एन 1083।
7. रीना यादी बनाये जगदीर, ए. आई आर 1982, उडीका 57।
8. जे टी 1992 (2) एस सी 65।
9. यथोक्त, पृष्ठ 94।
10. यथोक्त, पृष्ठ 95।

खंड 3

अध्याय 5

अन्तरराष्ट्रीय अभिसमय

5. 1. अन्तरराष्ट्रीय विधि के मामले में यह दावा किया जाता है कि अन्तरराष्ट्रीय विधि को, उसे प्रवर्तित करने के पूर्व राष्ट्रीय विधि में परिवर्तित किया जाना चाहिए। यह केवल औपचारिक नहीं है बल्कि एक मूलभूत आवश्यकता है, जो केवल अन्तरराष्ट्रीय संधियों और अभिसमय में अधिकथित नियमों को व्यक्तियों को विस्तारित करने को विधिमान्य करती है।

ऐसा सिद्धान्त राष्ट्रीय विधि की गैर सहमतिपरक प्रकृति के विपरीत अन्तरराष्ट्रीय विधि के अनुमति सहमतिपरक स्वरूप पर आधारित है। विशिष्टताया, परिवर्तन सिद्धांत, उन संधियों, जो वचनों की प्रकृति की हैं, और देशीय कानून, जो समादेश की प्रकृति के हैं, के बीच अभिक्षित अन्तर पर आधारित है। यह इस आधारभूत अन्तर से अनुसरित है कि एक किसी से दूसरी में परिवर्तन औपचारिकतः सारभूत रूप में अपरिहर्य है।

5. 2. नावधिकरण विषयक विधि दोनों, देशीय विधि और अन्तरराष्ट्रीय द्वारा शासित होती है। पोतों के रजिस्ट्रीकरण जैसे कुछ पहलू, संबंधित समुद्र समीपस्थ देश की देशीय विधियों द्वारा शासित होते हैं जबकि अन्य पहलू, विशेष रूप से वाणिज्यिक पहलू समुद्रीय अन्तरराष्ट्रीय विधि द्वारा शासित होते हैं। समुद्रीय अन्तरराष्ट्रीय विधि का स्रोत या तो उस शिल्पिय विधि में है जो समुद्र समीपस्थ राष्ट्रों द्वारा अनुसरित किए जाने वाले साधारण व्यवहार पर आधारित है, या उस संधि में है, जो मुख्यतः अन्तरराष्ट्रीय कन्वेन्शनों पर आधारित है। रुद्धिजन्य समुद्रीय विधि का अनेक सदियों में विकास हुआ है और भिन्न-भिन्न सम्यताओं में किन्तु अभी हाल ही के दौरान, इसका सारवान भाग अन्तरराष्ट्रीय अभिसमयों में संहिताबद्ध किया जा चुका है। भिन्न-भिन्न अन्तरराष्ट्रीय कन्वेन्शनों के अन्तर्गत समुद्रीय विधि के भिन्न-भिन्न पहलूओं आते हैं। इस विधि के विकास का सक्रियत अध्ययन लाभकारी होगा।

5. 3. द्वितीय विश्व युद्ध पूर्व अवधि में पोत परिवहन के संबंध में सभी समस्याओं को, जिनके लिए अन्तरराष्ट्रीय करार अपेक्षित थे, तदर्थ सम्मेलनों में निपटाया गया। पश्चात्वर्ती में पोत परिवहन के जो अपने कार्यचालन में मुख्य रूप से अन्तरराष्ट्रीय उद्योग है, विभिन्न पहलूओं को विनियमित करने के लिए कन्वेन्शन विरचित किए गए।

एक स्थायी अन्तरराष्ट्रीय समुद्रीय आयोग की स्थापना की परिकल्पना वांशिगटन में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन में 1889 के आरंभ में की गई थी, जिसमें “समुद्र में जीवन और संपत्ति की सुरक्षा” के प्रश्नों पर अनन्यतः विचार किया गया। किन्तु सम्मेलन इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि “वर्तमान में किसी स्थायी अन्तरराष्ट्रीय समुद्रीय आयोग की स्थापना समीचीन नहीं समझी गई।”

5. 4. किन्तु पोत परिवहन से संबंधित प्रथम अन्तर सरकारी संगठन 1944 में स्थापित किया गया। इस संगठन का नाम संयुक्त समुद्रीय प्राधिकरण था और इसका मुख्य कार्य सेनाओं की बखास्ती, सिविल आवश्यकता, राहत और पुनर्वास कार्यक्रमों, आदि की अपेक्षाओं के लिए आवश्यक पोत परिवहन के बारे में व्यवस्था करना था। 1946 में, संयुक्त समुद्रीय प्राधिकरण को एक अन्य संगठन, संयुक्त समुद्रीय परामर्शदात्री परिषद् द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। इस परिषद् ने, दो सब, एक जून 1946 में एमसैडम में और दूसरा अक्टूबर, 1946 में वांशिगटन में किया था। संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक परिषद् के संकल्प के अनुसरण में संयुक्त समुद्रीय परामर्शदात्री परिषद् के इन सबों में एक स्थायी अन्तर-सरकारी

मनुदीय संगठन की स्थापना के लिए एक प्रासूप अभिसमय तैयार किया गया। बंततः संज्ञक राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक परिषद् के अनुरोध पर एक स्थायी सरकारी पोत परिवहन संगठन की कांठनीयता पर विचार करने और उसके कार्यक्रम और कृत्यों को अधिकारित करने के लिए कारबी-वार्च, 1948 में जनेवा में संयुक्त संसार के आधार पर सरकारों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया गया। विचार-विभाग का आधार संयुक्त मनुदीय परामर्शदाती परिषद् द्वारा पहले से तैयार किया गया प्रारूप अभिसमय था। जनेवा सम्मेलन ने अन्तर सरकारी मनुदीय परामर्शदाती संगठन (अ०स०प०स०) के बारे में एक अभिसमय सफलतापूर्वक तैयार किया और हस्ताक्षर के लिए खोला, जो बाइस राष्ट्रों के (इसके अन्तर्गत सात ऐसे ये जिनका लोट परिवहन कम से कम दस लाख सकल टन था) इसके पक्षकार बनने के पश्चात् ही प्रवृत्त हो सका। 17 अर्च, 1953 को जधान इस अभिसमय को स्वीकार करने वाला बाईसदां राष्ट्र था। जो संगठन इस प्रकार अस्तित्व में आया वह संयुक्त राष्ट्र का बारहवां दिव्येषता प्राप्त अभिकरण था। इसके सदस्यों के अंतर्गत केवल पारस्परिक समुद्र समीपस्थ देश ही नहीं थे बल्कि वे सभी थे, जो अन्य देशों की पोत परिवहन सेवाओं पर मुख्यतः निर्भर करते हैं। समुद्री कार्य से संबद्ध वह पहला अंतर-सरकारी संगठन था, यदोंकि इसका मुख्य प्रयोजन अन्तरराष्ट्रीय वाणिज्य पोत परिवहन है। जो एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है और अत्यधिक भाली तथा माल का अधिकार टनाशार अभी भी परिवहन के अन्य साधनों की बजाय पोतों में ले जाया जाता है।

5.5. अ०स०प०स० का पहला उद्देश्य पोत परिवहन को प्रभावित करने वाले सभी तकनीकी विधयों में सरकारों के बीच सहयोग मुकर बनाना है। इसका उद्देश्य समुद्री सुरक्षा और दक्ष नौजालन के उच्चतर व्यवहार्य मानकों को प्राप्त करना है। इसका समुद्र में जीवन की सुरक्षा के लिए विशेष उत्तरदायित्व है। यह सभी समुद्री तकनीकी विधयों पर राष्ट्रों के बीच जागरकारी के आधान प्रदान के लिए व्यवस्था करता है।

5.6. अ०स०प०स० का एक अन्य कार्य अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में पोतों को प्रभावित करने वाले भेदभाज्यपूर्ण, अनुचित और निर्बंधित व्यवहारों को निवारण करना है जिससे कि विदेश परिवहन के लिए संसार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पोत परिवहन सेवाओं की अधिकार अन्तरराष्ट्रीय निकायों को, जिनके अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र के अभिकरण भी हैं, बलाह देने और उन्हीं संयुक्त राष्ट्र अभिकरणों के साथ, जो अम संबंधी प्रवनों दूरसंचार, मौसम विज्ञान, विभानन, परवानु ऊर्जा और स्वास्थ्य से संबंधित हैं, अपने क्रियाकलापों को समन्वित करने की भी अपेक्षा है। संगठन के अन्य उत्तरदायित्वों के अंतर्गत तेल से समुद्र के ग्रदूषण को रोकने के विषय में, तथा पोतों के टनाशार साप्रवानों के लिए विनियमों का एकीकरण है।

5.7. बत्तेश्वर रिपोर्ट में अनेक अन्तरराष्ट्रीय अभिसमयों के निर्देश माल के अतिरिक्त कोई और बात करना संभव नहीं।

5.8. मुख्य अन्तरराष्ट्रीय अभिसमय—शांति के दौरान वाणिज्य पोत परिवहन को आसित करने वाले मुख्य अन्तरराष्ट्रीय अभिसमयों का "ब्रिटिश शिपिंग लाइ" के खंड 8 में निम्नलिखित पांच प्रमुख अनुभागों के अधीन प्रसंशनीय वर्णन किया है:

- (क) तकनीकी और परिकालन अभिसमय।
- (ख) पत्ताहों का नियोजन, कल्याण और प्रास्त्रिति।
- (ग) प्राइवेट समुद्री विधि का एकीकरण।
- (घ) समुद्र विधि, भूमि से धिरे हुए राष्ट्र, पत्तन, नहरें और जलमरुपध्य।
- (ङ) वाणिज्य पोत परिवहन से संबद्ध अन्तरराष्ट्रीय संगठन।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वाणिज्य पोत परिवहन के संबंध में आज संघीयता, अन्तरराष्ट्रीय संबंधों के विनियमन में बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। आज वाणिज्य पोत परिवहन

उन डिप्लोमाय करारों, बहुवक्षीय संघियों और अन्तरराष्ट्रीय अभिसमयों द्वारा अधिकार विनियमित होता है, जो किसी पोत के स्वामी राष्ट्र की राष्ट्रीय संहिता में नहीं पाए जा सकते जो स्वयं भी देशीय ऐसे विधानों से संबद्ध होती है, जिसके अस्तर्गत वे अन्तरराष्ट्रीय विलेख भी हैं। जिनकी पुष्टि देशीय अधिनियमित करती है।

5.9. तकनीकी और परिकालन अभिसमय—तकनीकी और परिकालन अभिसमय निम्नलिखित से संबंधित है:

- (क) नौजालन;
- (ख) सुरक्षा अभिसमय;
- (ग) जल के भीतर केवल और दूरसंचार;
- (घ) पोतों के टनाशार का भावनान; और
- (ङ) स्वच्छता अभिसमय।

नौजालन से संबंधित अन्तरराष्ट्रीय अभिसमय जिनके अन्तर्गत समुद्रीय सेवाओं से संबंधित करार और मानवयुक्त प्रक्रम पोत, जो अपने स्टेशनों पर नहीं है, तथा विधि के अन्य विषय है, किन्तु अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षा अभिसमयों पर पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है।

5.10. दूर संचार अधिकार—अन्तरराष्ट्रीय दूर संचार, जिसे 1952 में व्यूनस आई-रिस के पृष्ठाधिकार सम्मेलन में घोषित किया गया था, 1 जनवरी, 1954 को प्रवृत्त हुआ। इसमें कोई मुख्य ढांचागत परिवर्तन नहीं किए गए। वह ही 1959 के जनेवा अभिसमय ने, जो 1 जनवरी, 1961 को प्रवृत्त हुआ था, संघ के ढांचे में या मुख्यालय के कार्यकरण में कोई बड़ा परिवर्तन किया।

किन्तु 1959 का जनेवा अभिसमय इस विषय पर अंतिम विधान का प्रतिनिधित्व करता है और रेडियो रेम्युलेशन, जनेवा, 1959 उन सभी पूर्वदर्ती विनियमों का अधिकरण करते हैं, जिनके पाठों के अन्तर्गत सम्पूर्ण कार्यक्रम आता है:

- (1) अन्तरराष्ट्रीय दूर संचार अभिसमय, जनेवा, 1959, अभिसमय के अंतिम प्रोटोकाल सहित;
- (2) रेडियो रेम्युलेशन, जनेवा, 1959;
- (3) एडिशनल रेडियो रेम्युलेशन, 1959;
- (4) अन्तरराष्ट्रीय तार और टेलीफोन विनियम, जनेवा, 1958।

पूर्वदर्ती अन्तरराष्ट्रीय दूर संचार अभिसमय जैसे कि व्यूनस आईरस (1952) या एटलांटिक सिटी (1947) तथा रेडियो रेम्युलेशन, एटलांटिक सिटी (1947), अब प्रवृत्त नहीं हैं, जो 1959 के जनेवा अभिसमय और विनियम द्वारा अधिकार हो चुके हैं।

5.11. रबच्छता अभिसमय—संसार के यातायात को न्यूनतम प्रभावित करते हुए, योग के अन्तरराष्ट्रीय फैलाव के विश्व अधिकार सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय रबच्छता विनियम, जनेवा, 1951, दर्ढे हेतु असैम्बली ने उसी वर्ष अंगीकृत किए थे और ये विनियम रोधात्मक उपबंधों, तीर्थ यात्री यातायात आदि के स्वच्छतापूर्ण नियंत्रण के संबंध में प्रयोग्य वर्ते हेतु असैम्बलियों द्वारा संशोधित किए गए थे। जहां तक पोत परिवहन का संबंध है, 1951 के रबच्छता विनियम, जैसे वह पहले थे, इस विषय पर संहिताबद्ध विधि का प्रतिनिधित्व करते हैं जो उस प्रक्रिया का जो 1892 में आरंभ हुई थी, उत्कृष्ट विकास है।

5.12. साल्साहों का नियोजन, कल्याण और प्राप्तिशक्ति—सामाजिक न्याय की स्थापना के अन्तरराष्ट्रीय शांति को अग्रसर करने के एक आव उद्देश्य से 1919 की शांति सभि इंग्लैण्ड अधिकार अन्तरराष्ट्रीय शाम संगठन बहुत थोड़े अंतरराष्ट्रीय संगठनों में से एक है जो

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् भी बना रहा संयुक्त राष्ट्र के साथ इस संगठन के संबंध स्थापित करने वाला करार और संयुक्त राष्ट्र के एक विशेषज्ञीय अभिकरण के रूप में इसकी प्रास्त्रियत परिभाषित करना 14 दिसम्बर, 1946 को संयुक्त राष्ट्र की महा सभा द्वारा उसके अनुमोदन पर प्रवृत्त हुआ। समुद्रीय अभिसमयों और अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठनों की सिफारिशों को निम्नलिखित विस्तृत प्रबंगों में सम्प्रिलित किया गया है:

1. मल्लाहों का नियोजन—
 - (क) नियोजन की प्रविष्टि;
 - (ख) नियोजन की शर्तें;
2. अहंताओं के प्रमाणपत्र;
3. मजदूरी काम के घटे और काम में लगाना;
4. सामाजिक सुरक्षा;
5. पोतों के फलक पर और पत्नियों पर मल्लाहों का कल्याण;
6. प्रकीर्ण।

5.13. प्राइवेट समुद्रीय विधि का एकीकरण—मेजबान देश के रूप में वेल्जियम सरकार ने समुद्रीय विधि पर राजनयिक सम्मेलन के अनेक सब आयोजित किए और इन सम्मेलनों से विभिन्न अन्तरराष्ट्रीय अभिसमय पैदा हुए, जिनके अन्तर्गत टक्कर समुद्र में उद्धारण, समुद्रगामी जलयानों के स्वायियों के दायित्व का परिसीमन, बिना किराया दिए यात्रा करके अपने को पोत में छिपाना, समुद्रीमार्ग से माल और यात्रियों का वहन, न्यूक्लीय पोतों के प्रचालकों का दायित्व और समुद्रीय धारणाधिकार और बंधक हैं।

1932 के आक्सफोर्ड सम्मेलन का एक संक्षिप्त निर्देश किया जा सकता है, जिसमें “वार्षा आक्सफोर्ड नियम” के नाम से ज्ञात नियम अंगीकार किए गए थे और ये नियम, उनको प्रस्थानना करने के लिए आवश्यित थे, जो विनिर्दिष्ट नियंत्रणों पर माल का क्रय और विक्रय करना चाहते थे किन्तु संविदा का कोई मानक प्रृष्ठ या उपलब्ध सामान्य स्थितियां या उनका विनिर्दिष्ट संविदाओं में अंगीकार करने के लिए एक समान नियमों का कोई सेट स्वैच्छिक और सुगम साधन नहीं हैं।

5.14. समुद्रीय विधि—1958 तक, जब समुद्रीय विधि के संबंध में जनेवा अभिसमयों पर हस्ताक्षर किए गए थे, अन्तरराष्ट्रीय संबंधों के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र को विनियमित करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय विधि के रुद्धिन्य सिद्धान्तों पर छोड़ दिया था। वास्तव में, जनेवा अभिसमयों के आधार पेश करने में समुद्रीय रुद्धिन्य विधि का प्रभाव खुले समुद्रों के अभिसमय की प्रस्तावना में स्वीकार किया गया है, जो कथित करती है कि अभिसमय में सम्मिलित किए गए उपबंध साधारणतया अन्तरराष्ट्रीय विधि के सुस्थापित सिद्धान्तों के कथन मात्र हैं। किन्तु यह अब भी कहा जा सकता है कि कुछ मामलों में राज्य क्षेत्रीय समुद्रीय विधि के संहिताबद्ध करने का कार्य अभी भी पूरा नहीं हुआ है। पोतों से तेल के रिसाव द्वारा समुद्र के प्रदूषण को रोकने के लिए एक अन्तरराष्ट्रीय अभिसमय 1954 में लंदन में प्रारूपित किया गया था और तब से समुद्र समीपस्थ राष्ट्रों को उस अधिक स्वीकार्य बनाने के लिए इसे संशोधित किया गया है। कुछ राष्ट्रों ने इस अभिसमय को वेशीय विधान द्वारा कार्यान्वित किया है।

5.15. समुद्रीय विधि का संयुक्त राष्ट्र अभिसमय, 1982—10 दिसम्बर, 1982 को समुद्रीय विधि संबंधी संयुक्त राष्ट्र अभिसमय को उसे हस्ताक्षर के लिए खोलने के पहले ही दिन 117 देशों और दो अन्य सत्ताओं (दि कुक आइलैंड्स और नाम्बीविया के बारे में संयुक्त राष्ट्र परिषद्) द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। यह चौदह वर्षों से अधिक के कार्य को शिखरस्थ करता है, जिसमें 150 देशों से अधिक ने भाग लिया और जो पृथ्वी के सभी क्षेत्रों, सभी विधिक और राजनीतिक प्रणालियों, सामाजिक आर्थिक विकास की सभी स्थितियों, खनिजों

की उन सभी किस्मों के बारे में, जो समुद्रतल में पाए जा सकते हैं, विभिन्न प्रदृशियों वाले देशों, तटीय राष्ट्रों, उन राष्ट्रों का जो महासागर स्थान के संबंध में भौगोलिक रूप से अलाभकर रूप में वर्णित है, द्वीप समूह राष्ट्रों, द्वीप और भूमि से घेरे हुए राष्ट्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

अभिसमय को, चार संबंधित संकल्पों सहित 30 अप्रैल, 1982 को अंगीकार किया गया था। केवल चार राष्ट्रों, अर्थात् इजराइल, टर्की, यू.एस.ए. और बैन्जूएला ने अभिसमय के विरुद्ध मत दिया। 10 दिसम्बर, 1982 को अभिसमय को मोटेंगों वे, जामाइका में एक औपचारिक समारोह में हस्ताक्षरित किया गया। वह 10 दिसम्बर, 1983 को प्रवर्तित हुआ। अभिसमय पर 117 देशों और दो अन्य सत्ताओं ने पहले ही दिन हस्ताक्षर कर दिए अन्त में जपान ने भी अभिसमय पर हस्ताक्षर कर दिए। विकासशील और समाजवादी देशों के अलावा, आस्ट्रेलिया, कनाडा, डेनमार्क, फ्रांस, फिनलैंड, आयरलैंड, नार्वे और न्यूजीलैंड, जिन्हें अभी तक हस्ताक्षर कर दिए हैं तथा अन्य देश हैं फैडरल रिपब्लिक आफ जर्मनी, इटली, स्पेन, स्विटजरलैंड, ग्रीनलैंड किंगडम और यू.एस.ए.। अभिसमय का विस्तार महासागर स्थान को आसित करने वाले “न्यायसंगत और साध्यापूर्ण अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था” की प्राप्ति के प्रयास में सार्वभौमिकता स्थापित करता है। अभिसमय बहुमुखी है और संघि करने की प्रक्रिया में अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के लिए एक स्मारक के रूप में प्रस्तुत करता है। समुद्रीय नई विधि में परिसीमनों से लेकर पर्यावरण नियंत्रण, प्रौद्योगिकी और महासागर के विषयों से संबंधित विवादों के निपटारे तक महासागर के सभी पहलु आते हैं। अभिसमय का उद्देश्य हाफिजन्य मानकों को ही संहिताबद्ध करना तर्ही है बल्कि अन्तरराष्ट्रीय विधि का प्रगामी विकास है।

5.16. अभिसमय ने स्वयं ही सभी महासागर संबंधी ढांचा विवादों के विनियमन के लिए एक विस्तृत ढांचा स्थापित किया है। अभिसमय में 320 अनुच्छेद और 9 उपांश हैं इसे सबह भाजों में विभाजित किया गया है और पहला भाग राष्ट्रीय अधिकारिता के क्षेत्रों के प्रयोग के संबंध में है। ये अभिसमय में महासागर से संबद्ध विवादों के विभिन्न पहलुओं की आसित करने वाले उपबंध हैं, जिसके अन्तर्गत समुद्र तक पहुंच, नौचालन, संरक्षण और समुद्री पर्यावरण का परिवर्णण, जीवित संसाधनों का शोषण और उनका संरक्षण, वैज्ञानिक अनुसंधान, समुद्रतल खनन और गैर-जीवित संसाधनों का अन्य शोषण और विवादों का निपटारा है। इसके अतिरिक्त अभिसमय नए अन्तरराष्ट्रीय मानक स्थापित करता है, जो संक्षेप में निम्नलिखित हैं:

- (1) तटीय राष्ट्रों की चौड़ाई में बाहर मील तक उनके राज्यक्षेत्रीय समुद्र पर प्रभुता होगी किन्तु विदेशी जलयानों को शांतिपूर्वक नौचालन के प्रयोजनों के लिए उन समुद्रों में से तीव्री समुद्री यात्रा अनुबंध की जाएगी।
- (2) सभी देशों के पोतों और वायुयानों को तब तक अन्तरराष्ट्रीय नौचालन के लिए प्रयोग किए जाने वाले जलडमरुओं के माध्यम से “अभिवहन समुद्री यात्रा” अनुज्ञात की जाएगी जब तक वे विलम्ब किए बिना और सीमावर्ती राष्ट्रों को भयभीत किए बिना यात्रा के अन्य पहलुओं को विनियमित करने के लिए समर्थ होंगे।
- (3) तटीय राष्ट्र की प्राकृतिक संसाधनों और कतिपय आर्थिक क्रियाकलापों के बारे में 200 मील के अन्य आर्थिक क्षेत्र में प्रभुता स्थापित करने वाले अधिकार होंगे, और समुद्रीय वैज्ञानिक अनुसंधान और पर्यावरण पर कुछ किसी की अधिकारिता भी होगी, सभी अन्य राष्ट्रों को नौचालन और उस क्षेत्र में ऊपर उड़ान करने तथा समुद्र के जल में बोतल और पाइपलाइन डालने की स्वतंत्रता है, भूमि से घिरे हुए और भौगोलिक रूप से अलाभकर राष्ट्रों को उस क्षेत्र के मछली उद्योग के आगत दोहन में भाग लेने का अवसर मिलेगा जबकि तटीय राष्ट्र स्वयं ही सभी का संग्रहण नहीं कर सकेंगे। मछलियों और समुद्रीय स्तनपायियों की अत्यधिक प्रवासी किस्मों को विशेष संरक्षण दिया जाएगा।

- (4) उन द्वीप समूह राष्ट्रों को, जो निकट का संबंध रखने वाले समूह या समूहों और परस्पर संपर्कित समूहों से बले हैं, उस समुद्र क्षेत्र पर प्रभुत्वस्ता प्राप्त होगी, जो उन द्वीपों के सब से बाहरी विद्युतों के बीच खींची गई सीधी रेखा से चिरा हुआ है। सभी अन्य राष्ट्रों को द्वीप समूह राष्ट्रों द्वारा निर्विघ्न देनों के माध्यम से समुद्री यात्रा का अधिकार प्राप्त होगा।
- (5) सभी राष्ट्रों को पारम्परिक स्वतंत्र नौवालन, ऊपर उड़ान करने, वैज्ञानिक अनुसंधान और खुले समुद्र में ग्राहली पकड़ने का अधिकार प्राप्त होगा, वे जीवित संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण के लिए अपनाएं जाने वाले उपायों में अन्य राष्ट्रों को सहयोग देने के लिए बाध्य होंगे।
- (6) राज्यक्षेत्रीय समुद्र, अन्य आर्थिक क्षेत्र और द्वीपों के कांटिनेन्टल शेल्फ का अध्यारण भू-राज्यक्षेत्र को लागू नियमों के अनुसार किया जाएगा किन्तु उन चट्टानों का जो मानव निवास या आर्थिक जीवन बनाए नहीं रख सकती, कोई आर्थिक क्षेत्र या कांटिनेन्टल शेल्फ नहीं होगा।
- (7) तीव्र राष्ट्रों को कांटिनेन्टल शेल्फ (समुद्र तक का राष्ट्रीय क्षेत्र) पर टट से 350 मील तक या विनिर्दिष्ट परिस्थितियों में उससे भी अधिक तक उसकी खोज करने के प्रयोग के लिए प्रभुत्वस्ता सम्प्रभु अधिकार होंगे, तटीय राष्ट्र उस राजस्व का हिस्सा अन्तरराष्ट्रीय समुद्राय में बांटेगे, जो वे 200 मील से परे अपने शेल्फ के किसी भाग से तेल या अन्य संसाधन का विद्योहन करेंगे, और कांटिनेन्टल शेल्फ सीमा संबंधी आयोग, शेल्फ की अन्य सीमाओं के संबंध में सिफारिशें करेगा।
- (8) एक समानान्तर पद्धति अन्तरराष्ट्रीय समुद्र तल की खोज और उसके विद्योहन के लिए स्थापित की जाएगी; क्षेत्र में सभी कियाकलाप अभिसमय के अधीन स्थापित किए जाने वाले अन्तरराष्ट्रीय समुद्र-तल प्राधिकरण के नियंत्रण के अधीन होंगे।
- (9) भूमि से घेरे हुए राष्ट्रों को, समुद्र को और उससे पहुंचमार्ग का अधिकार होगा और उन्हें अधिवहन के राष्ट्रों के राज्यक्षेत्र के माध्यम से अधिवहन की स्वतंत्रता प्राप्त होगी।
- (10) घेरे हुए या आधे घेरे हुए समुद्र की सीमा वाले राष्ट्रों से जीवित संसाधनों के प्रबंध और पर्यावरण और अनुसंधान तथा नीतियों और कियाकलापों के बारे में सहयोग करने की आगा की जाएगी।
- (11) आर्थिक क्षेत्र में और कांटिनेन्टल शेल्फ के बारे में सभी समुद्रीय वैज्ञानिक अनुसंधान अन्य तटीय राष्ट्रों की सहमति के अधीन होंगे किन्तु तटीय राष्ट्र अधिकार भागों में शान्तिपूर्ण प्रयोजनों के लिए अनुसंधान करने के लिए निर्देशी राष्ट्रों को सहमति प्रदान करने के लिए बाध्य होंगे।
- (12) राष्ट्र किसी भी छोल से समुद्रीय प्रदूषण को रोकने और नियंत्रित करने के लिए आबद्धकर होंगे तथा समुद्रीय प्रदूषण को रोकने के अपने अन्तरराष्ट्रीय दायित्व के भंग से कारित नुकसान के लिए दायी होंगे।
- (13) राष्ट्र अपने विवादों को अभिसमय के अधीन स्थापित किए जाने वाले समुद्रीय विधि विषयक अन्तरराष्ट्रीय अधिकरण को, अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय की या माध्यस्थम् को निर्देश द्वारा शान्तिपूर्ण साधनों द्वारा निपटाने के लिए बाध्य होंगे। सुलह की रीत भी उपलब्ध है और कतिपय परिस्थितियों में उसके सक्षम इसे पेश करना अनिवार्य है।

(14) राष्ट्र सभी न्यायसंगत हितों का, जिनके अंतर्गत प्रौद्योगिकी के धारकों, प्रवायकतावियों और प्राप्तिकर्ताओं के अधिकार और कर्तव्य भी हैं, उचित ध्यान रखते हुए, "उचित और युक्तियुक्त निवालनों और शर्तों पर" समुद्रीय प्रौद्योगिकी के विकास और अन्तरण की अभिवृद्धि के लिए आबद्धकर होगी।

(15) दूसरों के अधिकारों का सम्मान करना सभी राष्ट्र पक्षकारों का सर्वोपरि कर्तव्य है; किन्तु कुछ कर्तव्यों के साथ अधिक निष्पादक कार्य जुड़े हो सकते हैं। संकटों की सूचना देने का कर्तव्य, कर्तव्य की पश्चात्तुर्वर्ती किस्म का उदाहरण होगा अधिकार और कर्तव्यों के संतुलन की संवर्यापी उपधारणा को अभिसमय के अनुच्छेद 300 द्वारा महत्व दिया गया है।

(16) अभिसमय "समुद्र-तल प्राधिकरण" को शासित करने वाले सिद्धांतों और विनियमों को भी अवधारित करता है।

5.17. समुद्रीय विधि विषयक अभिसमय पर हस्तांतर करने के साथ ही एक आरंभिक तैयारी करने वाले आयोग की स्थापना की गई थी, जिसकी स्थापना अभिसमय के अधीन स्थापित की जाने वाली दो मुख्य संस्थाओं के लिए मार्ग प्रशस्त करेगी और वे संस्थाएं, अर्थात् समुद्र-तल प्राधिकरण जिसका मुख्यालय जमाइका में और समुद्रीय विधि विषय अन्तरराष्ट्रीय अधिकरण, जो हमर्ग, फेडलर रिपब्लिक आफ जर्बनी में अवस्थित होंगी। ये विषय अब भी अध्ययनाधीन हैं।

5.18. यह सर्व विदित है कि अभिसमय के होते हुए भी समुद्र जल के प्रदूषण के कुप्रभाव बढ़ रहे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभिसमय से अन्तरराष्ट्रीय विधि के इतिहास में एक नए युग का सूचपात्र होता है। यह समस्याओं के हल की खोज में एक अर्थपूर्ण सफल प्रयास है। किन्तु तकनीकी तौर पर, अभिसमय उस समुद्रीय नई विधि को प्रतिविम्बित नहीं करता है, जो सभी राष्ट्रों पर आबद्धकर हो। इसके अतिरिक्त, यह भी संविहास्य है कि समुद्र-तल अन्तरराष्ट्रीय प्राधिकरण, तकनीकी रूप से उन्नत राष्ट्रों के सहयोग के बिना प्रभावी ढंग से कार्य करने में कितना समर्थ होगा। अभिसमय के समर्थन में संघियों को शामिल करने वाली विधि द्वारा विभिन्न दलीलों और निर्वचन प्रस्तुत किए गए हैं।¹ किन्तु अतिरिक्त शक्तियों के बिना अभिसमय अवश्यकावधी कमज़ोर होता जाएगा। इसके अलावा, अभिसमय इसका उत्तर देने में भी असफल रहा है कि तटीय राष्ट्रों की विधियां उसके पारवर्त्य क्षेत्र के भीतर क्यों प्रत्यक्षतः प्रवृत्त नहीं की जा सकती, यद्यपि तटीय राष्ट्र अपने तटों के पारवर्त्य संसाधनों के युक्तिसंगत विद्योहन को विनियमित करने के लिए बेहतर स्थिति में हैं। वास्तव में अन्य आर्थिक क्षेत्र तटीय राष्ट्रों की राष्ट्रीय अधिकारिता के भीतर आता है, जो "नावधिकरण अधिकारिता" की पारम्परिक उपधारणा को भी प्रभावित करेगा।

पार्श्व टिप्पणी—अध्याय 5

- सतीश चन्द्र, वि प एन. कोनोलाजी आफ दि "ला आफ दि सी", विडिल एड मिलिटरी जरनल, खंड 20 (3-4) 1984 पृ. 159।
- सतीश चन्द्र; "सम आसेक्ट्स आफ दि न्यू कानिस्ट्रूशन फार दि ओसन", एकेडमी ला रिव्यू, खंड 7 (1983) पृ. 194।
- सतीश चन्द्र; "ला आफ दि सी", 1985।

अध्याय 6

अंतरराष्ट्रीय अभिसमय और भारत की प्रास्तिति

6.1. भारत अनेक समुद्रीय अभिसमयों और नयाचारों का हस्ताक्षरकर्ता रहा है। वह नोट करना अतिरोचक है कि अब तक कुल 23 समुद्रीय अभिसमय और 15 नयाचार तंत्रार किए गए हैं। इन 37 अंतरराष्ट्रीय समुद्रीय संगठन लिखतों में से, 19 अभिसमय और 7 नयाचार इस समय प्रवृत्त हैं। भारत में 12 अभिसमयों और 5 नयाचारों का अनुसमर्थन किया है। 6 अभिसमयों और 1 नयाचार का अनुसमर्थन, भारत सरकार के विचाराधीन है। भारत ने 13 अभिसमयों/नयाचारों का अनुसमर्थन उस आधार पर नहीं किया है कि या तो अंतरराष्ट्रीय रूप से प्रवर्तन में नहीं हैं या कुछ अन्य मौलिक कारण हैं। अभिसमयों और नयाचारों की सूची और भारत में उनकी प्रास्तिति निम्नवत् है:—

6.2. भारत द्वारा पहले ही अनुसमर्थित अभिसमय—निम्नलिखित अंतरराष्ट्रीय समुद्रीय संगठन अभिसमय भारत द्वारा पहले ही अनुसमर्थित कर दिए गए हैं:

- (1) समुद्र में जीवन की सुरक्षा के लिए अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1974 (सोलास, 1974) ;
- (2) सोलास से संबंधित 1978 का नयाचार, 1974 ;
- (3) समुद्र में टक्कर के निवारणार्थ अंतरराष्ट्रीय विनियमों का अभिसमय, 1972, यथासंघोधित (कोलरेग, 1972) ;
- (4) अंतरराष्ट्रीय यातायात के सरलीकरण का अभिसमय, 1965 (फेल-1965) ;
- (5) लोडलाइन संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1966 ;
- (6) पोतों के टनभार मापन संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1969 ;
- (7) विशेष व्यापार यात्री पोत करार, 1971 ;
- (8) विशेष व्यापार यात्री पोतों के लिए स्थान अपेक्षा संबंधी नयाचार, 1973 ;
- (9) सुरक्षित आधान संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1972 ;
- (10) अंतरराष्ट्रीय समुद्रीय सेटेलाइट संगठन संबंधी अभिसमय, (इन्सार्वेट) ;
- (11) इन्सार्वेट संबंधी प्रचालन करार ;
- (12) प्रगिक्षण प्रमाणीकरण और निगरानी मानक संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1978 (एस टी सी डब्ल्यू) ;
- (13) मारपोल, 1973/1978 (एस टी सी डब्ल्यू) ;
- (14) तेल प्रदूषण नुकसान के लिए सिविल दायित्व संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1969 (सी एल सी 1969) ;
- (15) सी एल सी 1969 पर 1976 का नयाचार ;
- (16) तेल प्रदूषण नुकसान के लिए प्रतिकर हेतु अंतरराष्ट्रीय निधि के स्वापन से संबंधित अभिसमय, 1971, और
- (17) निधि अभिसमय संबंधी 1976 का नयाचार ।

6.3. विचाराधीन अभिसमय—इस समय भारत 6 अ०स०स० लिखतों के अनुसमर्थन के प्रस्तावों पर विचार कर रहा है। अभिसमय के विचार की वर्तमान प्रास्तिति नीचे दी जा रही है:

अभिसमय

1. तलाशी और बचाव संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1970 और विश्व स्तरीय समुद्रीय कष्ट और सुरक्षा प्रशास का अंगीकरण

विभिन्न संबद्ध विभागों की सहमति पाने के लिए एक प्रारूप टिप्पणी 8-8-91 को प्रस्तुत किया गया था। जब कि उनमें से अधिकतर विभागों की टीका टिप्पणी पहले ही अधिप्राप्त कर ली गई है, फिर भी विधि कार्य विभागों की टीका टिप्पणी अभी भी अपेक्षित है। विधि का अनुसरण किया जा रहा है।

2. सुरक्षित समुद्रीय नौवहन के विकास अवैध और

विधि मन्त्रालय, विदेश मन्त्रालय और गृह मन्त्रालय के प्रारंभिक अभिसमय प्राप्त हो चुके हैं। महानिदेशक, पोत परिवहन उक्त मन्त्रालयों से प्राप्त सुआवों की जांच कर रहे हैं।

3. कृत्यों के दमन के लिए अभिसमय, 1988 और कान्टिनेन्टल शेल्फ पर अवस्थित स्थिर प्लेटफार्मों की सुरक्षा के विकास अवैध कृत्यों के दमन संबंधी नयाचार, 1988 ।

अभिसमय के प्रस्तावित अनुसमर्थन पर अधिकांश संबद्ध विभागों की सहमति प्राप्त हो चुकी है, जब कि विधि कार्य विभाग की सहमति प्रतीक्षित है।

4. उद्धारण संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1989 ।

बसेल्स अभिसमय के उपबंधों को ध्यान में रखकर अ०स०स० में किए गए अध्ययन के वर्तमान प्रक्रम नींवालीयता के विचार से जांच करने के लिए महानिदेशक पोत परिवहन से अनुरोध किया गया है।

5. उपशिष्ट और अन्य पदार्थों का उम्म करके समुद्रीप्रदूषण निवारण संबंधी अभिसमय, 1972 ।

जब कि प्रस्तावित अनुसमर्थन पर अधिकांश विभागों की सहमति प्राप्त हो गई है, विधि कार्य विभाग और महासागर विकास विभाग की सहमति अभी अपेक्षित है इस विषय पर कामवाई की जा रही है।

6. तेल प्रदूषण दुरुटनाओं के मामलों में जुलै समुद्र में हस्तक्षेप संबंधी अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1969 ।

महानिदेशक पोत परिवहन, अभिसमय की वित्तीय और विधिक/विधायी विवपक्षाओं की जांच करने की प्रक्रिया में लगे हैं।

6.4. अन्य अंतरराष्ट्रीय/सं०रा० अभिसमय—तल भपरिवहन मन्त्रालय भी, समुद्र की विधि से संबंधित निम्नलिखित सं०रा० अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों से संबद्ध है :

- (i) वहन पत्र से संबंधित विधि के कतिपय नियमों के एकीकरण के लिए अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 1924 (हेग नियम) ;
- (ii) हेग विस्कार्ड नियम, 1968 और 1979 ।
- (iii) समुद्र द्वारा माल वहन संबंधी सं०रा० अभिसमय, 1978 (हैम्बर्ग नियम) ;
- (iv) लाइनर सम्पेलन के लिए आचरण संहिता संबंधी सं०रा० अभिसमय, 1974 ।

6.5. हम पूर्वोक्त अभिसमयों पर सारतः विचार करें :

- (i) वहन पत्र से संबंधित विधि के कतिपय नियमों के एकीकरण के लिए अंतरराष्ट्रीय अभिसमय—जिसका प्रचलित नाम हेग नियम है और जिसे 1924 में अंगीकार किया गया था।

हेंग नियम जून 1931 से प्रवृत्त हुए थे। भारत ने इस अभिसमय का मुख्यतः इस कारण अनुसमर्थन नहीं किया था क्योंकि अभिसमय यह अपेक्षा करता है कि वहन पत, माल जलयाचों द्वारा तटीय व्यापार में माल के बहन की वायत भी जारी किए जाने चाहिए, जो भारत को स्वीकार्य नहीं था। तथापि, अभिसमय के शेष उपबंध, भारतीय समुद्र द्वारा माल बहन अधिनियम, 1925 द्वारा शामिल किए गए थे।

(ii) हेंग/दिसबाई नियम, 1968 और 1979 (नयाचार) — वर्ष 1968 में खोए या अतिग्रस्त माल के प्रति पैकेज या एकक के लिए हेंग नियम में उपबंधित दायित्व की सीमाएं बढ़ाने के लिए एक नयाचार अंगीकार किया गया था। यह नयाचार, 23-6-77 से प्रवृत्त हुआ। हेंग नियमों को 1979 में एक अन्य नयाचार अपनाकर और संशोधित किया गया था जो एस डी आर के कारण इकाई परिवर्तित करता है। ये दोनों नयाचार भारत द्वारा अनुसमर्थन नहीं किए जा सके क्योंकि भारत ने मुख्य अभिसमय का अनुसमर्थन नहीं किया था।

(iii) समुद्र द्वारा माल बहन संबंधी सं० रा० अभिसमय, 1978—1978 के नाम से ज्ञाल समुद्र द्वारा माल बहन संबंधी अभिसमय, 1978 अंगीकार किया गया था। यह अभिसमय और उसके दो नयाचारों को प्रतिस्थापित करने के लिए है। यह अभिसमय अंतरराष्ट्रीय रूप से नवबर, 1992 से प्रदर्शन में आया है। इस अभिसमय का भारत द्वारा अनुसमर्थन करने या न करने का प्रश्न अभी भी विचाराधीन है।

(iv) लाइनर सम्मेलन के लिए आवरण संहिता संबंधी सं० रा० अभिसमय, 1974— बीसवीं शताब्दी की प्रथम अर्धशती तक, समुद्रोद्भूत व्यापार साधारणतः विकसित देशों के वाणिज्यिक जहाजी बेड़ों द्वारा किया जाता था। जब विकासशील देशों ने अपने वाणिज्यिक बेड़ों का निर्माण प्रारंभ किया, तब विकासशील देशों के सामरपार व्यापार के लिए उनके राष्ट्रीय बेड़ों के बृद्धि के लिए विकासशील देशों की तौबाइन लाइन की सशक्त मांग हुई। परिणामस्वरूप, साम्यापूर्ण स्थोरा अंशव्यापार के प्रयोजन के लिए और समुद्रोद्भूत व्यापार संबंधी अन्य विषयों के लिए 1974 में लाइनर सम्मेलन के लिए आवरण संहिता संबंधी सं० रा० अभिसमय अंगीकार किया गया।

इस अभिसमय का मूल उद्देश्य व्यवस्थित समुद्रोद्भूत व्यापार को सुकर बनाना नियमित और दक्ष लाइनर सेवाओं के विकास के बढ़ावा देना और लाइनर पोत परिवहन सेवाओं के प्रयोगकर्ताओं और प्रदायकों के बीच हित का संतुलन सुनिश्चित करना है। इस अभिसमय के स्थोरा उपबंधों में यह उपबंध है कि दो देशों के बीच व्यापार प्रत्येक व्यापारकर्ता देश की 40% तक राष्ट्रीय लाइनों द्वारा किया जाएगा और तृतीय देश की लाइनों पर 20% तक किया जा सकता है।

भारत ने यह अभिसमय, 1978 में अनुसमर्थन किया था। तथापि, संहिता 6-10-83 से अंतरराष्ट्रीय रूप में प्रवर्तित हुई थी। केन्द्रीय सरकार द्वारा, 1986 में, संहिता के उपबंध को प्रभावी बनाने के लिए विधान पुरास्थापित करने का प्रस्ताव अनुमोदित किया गया था। तिर पर भी, वाणिज्य मंत्रालय द्वारा भारत के विदेशी व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव के बारे में व्यक्त की गई कुछ आरोक्षों को ध्यान में रखते हुए संसद में विधान पुरास्थापित नहीं किया जा सका था। अतः मंत्रालाय विचार विमर्श के आधार पर एक उपांतरित अविद्यायी स्थोरा समर्थक स्कीम तैयार की गई थी और सरकार ने अब इस स्कीम का कार्यान्वयन अनुमोदित कर दिया है। इस उपांतरित स्कीम में सं० रा० अभिसमय लाइनर संहिता के प्रति कोई निर्देश नहीं किया गया है।

खंड 4

विधि को अद्यतन बनाने के लिए प्रयत्न

7.1. पूर्ववर्ती अध्यायों में किए गए विचार विषय से इस देश में समुद्रीय विधि की पर्याप्त असंतोषजनक स्थिति प्रकाश में आ जाती है। यह केवल देश में हुए राजनीतिक और संवैधानिक परिवर्तनों के साथ कदम मिलाकर चलने में ही असफल नहीं रही है अपितु अन्य सामुद्रिक देशों से भी काफी पीछे रह गई है। समुद्रीय विषयों में विवाद, बहुधा, अंतरराष्ट्रीय प्रकृति के होने के कारण संप्रति, विधि की स्थिति, उपनीय है और देश की प्रभुत्वसंपन्न प्राप्तिका के लिए असम्मान जनक भी है। इन कमियों और खामियों पर उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय के दौरान अनेक विवादों पर खुलकर चर्चा की है, हम उन सभी विवादों पर युनः चर्चा करना आवश्यक नहीं समझते हैं।

7.2. परवीन तिह समिति—किन्तु उच्चतम न्यायालय को इस विषय पर कार्रवाई करने का अवसर मिलने के पहले से ही पोत परिवहन उद्योग समय समय पर भारत की नावधिकरण विषयक विधि अद्यतन बनाने की आवश्यकता को प्रकाश में लाता रहता था जो कि पोत परिवहन उद्योग का आवश्यकताओं की अनुक्रियात्मक तथा समुद्रीय विवादों के दश्ता और त्वरित निपटान की संचालक हो। विधि की इस शाखा की स्थिति की जांच करने की अत्यावश्यकता को मान्यता देने हुए, भारत सरकार के जल भूतल परिवहन मंत्रालय ने नावधिकरण विषयक अधिकारिता में प्रयोग में उच्च न्यायालयों की भूमिका पर दिसम्बर, 1986 में तत्कालीन पोत परिवहन महानिदेशक श्री परवीन सिंह की अध्यक्षता में, इस विषय की महन छानवीन करने के लिए एक समिति गठित की। समिति के निर्देश के निवंधन निम्नवत् थे :—

- (क) नावधिकरण विषयक अधिकारिता में संबंधित विभिन्न पक्षों का, जिनके अंतर्भूत अन्य देशों में हुई प्रगति और इस अधिकारिता पर अपनाए गए अंतरराष्ट्रीय अधिसमवय भी है, अध्ययन करना;
- (ख) कथनों, उद्देश्यों और कारणों की व्याख्यात्मक रिपोर्ट से समर्थित कौन सा अद्यतन समेकित समुद्रीय विधान पुरस्थापित किया जा सकेगा, उसकी सिफारिश करना; और
- (ग) नावधिकरण और समुद्रीय विवादों पर अधिक प्रभावी रूप से कार्रवाई करने के प्रयोजन के लिए पृथक नावधिकरण विषयक अधिकारिता/नावधिकरण विषयक न्यायालयों/अधिकरणों को स्थापित करने के लिए विनिर्दिष्ट सुझाव देना।"

समिति ने 1987 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। रिपोर्ट दो खंडों में थी। समिति ने अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य का सर्वेक्षण किया, भारत में लागू विद्यमान विधि पर और आधुनिक जरूरतों के लिए अनुवर्ती बनाने के लिए उसमें जल्दी परिवर्तनों पर विचार विषय किया। उसने नावधिकरण विषयक अधिकारिता के कार्यक्षेत्र को परिभ्रष्ट करने वाले एक विधान के अधिनियम की सिफारिश की और विचारार्थी भारतीय नावधिकरण विषयक अधिनियम का प्रारूप प्रस्तुत किया। समिति ने नावधिकरण विषयक अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालयों की भूमिका पर चर्चा की और तथा नावधिकरण विषयक विधि का प्रशासन करने वाले न्यायालयों की प्रकृति के पुनः नवीकरण का सुझाव दिया। निर्देश निवंधनों को अंतर्विष्ट करने वाला पक्ष और भारतीय नावधिकरण विषयक अधिनियम तथा नावधिकरण विषयक न्यायालय अधिनियम के दो प्रारूप रिपोर्ट के तीन उपावधियों के रूप में है³।

- (2) ऐसे अपर पक्षकारों के हितों का, जिनका कोई दावा हो सकता है, समाचार पत्रों में 90 दिन की सूचना देकर संरक्षण किया जाता चाहिए।
- (3) यदि एक बार न्यायालय के आदेश द्वारा किसी पोत का विषय किया जाता है तो क्रेता, दावों की बाबत बिना किसी दायित्व के सभी विवरणों से मुक्त हक पाएगा।
- (4) न्यायालय को, बंधकों और सामुद्रिक धारणाधिकारों के बीच की जांति आंतरिक अधिकान अधिकारियत करने के लिए सक्षमत होता चाहिए।
- (5) सूचना का उपर्युक्त, जहाँ किसी विदेशी पोत के विरुद्ध बाद फाइल किया जाता है। भारत में विदेश के काउसेल/मिशन को सूचना।

इन पहलुओं पर विचार करते हुए और उस विवाद से जो इस निमित्त यूनाहट किए गये, तिमाहुर और अन्य कामना ला देखों में अधिनियमित किए गए थे, कायदा उपाय करते हुए समिति ने अपना भारतीय नावधिकरण अधिनियम, ग्राहित किया था।

7.4. नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रबोच करते हाँसे न्यायालयों पर समिति के विचार—समिति ने इस तथ्य पर विचार किया कि उन्नति नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग केवल मुम्बई, कलकत्ता और मद्रास के उच्च न्यायालयों द्वारा ही किया जा रहा है तथा गुजरात, आंध्र प्रदेश और उड़ीसा के उच्च न्यायालयों ने राज्यों के पुनर्गठन⁸ से संबंधित अधिनियमियों के अधीन ऐसी अधिकारिता उपलब्ध कर देने का फ़िदा है। तथापि समिति का यह रह था कि केन्द्रीय सरकार के लिए नावधिकरण विषयक न्यायालय⁹ नाम से ज्ञात नावधिकरण विषयक स्वतंत्र न्यायालयों का गठन करना और विद्यमान उच्च न्यायालयों से नावधिकरण विषयक अधिकारिता को नियुक्त करना आवश्यक था कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सामुद्रिक दावे अविभक्त रूप से प्राप्त हों और विशेषज्ञ उन पर तुरंत ध्यान दे सकें। यह सुझाव दिया गया था कि नावधिकरण विषयक न्यायालयों में भिसनभिस विनियश्यों से अपवर्जन के लिए प्रधान अपील स्वीकार करने के लिए एकल नावधिकरण विषयक अपील न्यायालय गठित किया जाना चाहिए। केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम¹⁰ में अंतर्विट उपर्युक्तों के परिषेक्य में इन न्यायालयों के गठन के लिए सुझाव दिए गए थे। उच्च न्यायालय मुम्बई द्वारा विरचित नियमों के अंगीकारण के लिए और न्यायालय की सूची¹¹ और खर्च विहित करने के लिए नियमों की विरचना के लिए भी सुझाव दिए गए थे। नावधिकरण विषयक न्यायालय अधिनियम का एक आरूप भी, प्रस्तुत किया गया जिसमें इस विवार विमर्श को ध्यान में रखा गया था।

7.5. विधि अन्वयन की दिश्यमी—समिति की रिपोर्ट पर विधि अन्वयन में विचार किया गया था जहाँ कर्तियम पृष्ठाएं उठाई गई प्रतीत होती हैं—

- (1) क्या नावधिकरण विषयक न्यायालयों की अधिकारिता के धीतर करियम अन्य हेतुक शामिल नहीं किए जा सकते;
- (2) क्या नावधिकरण विषयक न्यायालयों की परिष्यमण क्राप्ट पर भी अधिकारिता होगी;
- (3) क्या सामुद्रिक दावे फाइल करने के लिए कोई परिसीमा विहित की जानी चाहिए;
- (4) क्या 1861, 1890 और 1891 के अधिनियमों को निरसित नहीं करना पड़ेगा और यदि ऐसा है तो क्या दोनों प्रस्तावित विद्यानों के उपर्युक्तों को, और तैयार करने के पश्चात् शामिल करके एक अधिनियम परिवर्तन नहीं होगा;
- (5) क्या प्रस्तावित विद्या उपर्युक्तों से विद्यमान परिनियमों अधीन समुद्र द्वारा माल बहन अधिनियम, 1925, वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958 और महापत्तन न्यास अधिनियम, 1963 का संशोधन आवश्यक होगा;

7.3. नावधिकरण अधिकारिता विषयक लिमिट—समिति ने, यह नोट किया कि इंग्लिश एडमिरलटी ऐक्ट के अधीन, जो भारतीय न्यायालयों की अधिकारिता के लिए आवार बना था, न्यायालयों के क्षेत्र को केवल निम्नलिखित वी बायल नावधिकरण विषयक अधिकारिता थी:—

- (क) पोतों के निम्नीय, साज-सज्जा या बरस्मत के लिए दावे;
- (ख) किसी पोत को आपूर्व आवश्यक बस्तुओं के लिए दावे;
- (ग) किसी पत्तन पर नियति किए गए स्थोरा के नुकसान के लिए दावे;
- (घ) किसी पोत द्वारा किए गए नुकसान के लिए दावे;
- (ङ) स्वास्थ्यव, नियोजन और उपायन संबंधी दावे;
- (च) उद्धारण;
- (ज) किसी पोत के मास्टर द्वारा प्रजटूरी और वितरण के लिए दावे; और
- (ज) दावों से उत्पन्न होने वाले दावे।

समिति ने नोट किया कि सामुद्रिक विषयों में दावेदार, प्रायः पोत के स्वामी के विरुद्ध ही अनुत्तोष लाने के लिए प्रबुद्ध नहीं होता है, अपितु वह बहुधा, दोत की गिरफ्तारी के रूप में भी अनुत्तोष चाहता है वयोंकि वह सबसे अधिक प्रशासी साधन है जिससे दावे और साथ ही समुद्रीय धारणाधिकार और अंधक भी प्रकृत किए जा सकते थे। एहसन समुद्रीय धारणाधिकार और समारासी पोतों की गिरफ्तारी के लिए प्रयास किए गए थे¹⁴ किन्तु वे असफल रहे। अंतरराष्ट्रीय समुद्रीय संगठन⁵ गोरक्ष एवं सीटी ए डी⁶ द्वारा कमेटी मैरिटाइम इन्टरनेशनल के प्रयास से एक न्याय प्रयास किया जा सकता था किन्तु न्याय अधिसमय अंगीकार किए जाने तथा उसे प्रवर्तन में लाने के लिए देशों की अधिकारिता संखा द्वारा अनुसमर्थित किए जाने में मजबूरन काफी समय लगने वाला था। इसी बीच, अनेक देशों ने समुद्रीय धारणाधिकार और दावों को शासित करने के लिए अपनी स्वीय विद्यान अपनायी थी। इंग्लैंड में भी न्याय विवाद अधिनियमित किया गया था। किन्तु भारत, एडमिरलटी ऐक्ट, 1861 में यथा पूर्वाभिन्न अप्रचलित विटिश ला का अनुसरण कर रहा था इसमें परिवर्तन लो होना ही था। विवाद के कार्यक्षेत्र को बड़ाना आवश्यक था ताकि उसमें तेल प्रदूषण, नुकसानी जीवन की हानि, दैहिक क्षति, पोत का कर्षण, शुल्क, पोत का संचालन, पत्तन इष्य, पोतों के पोत स्वामियों और अधिकारियों द्वारा किए गए संवितरण, साधारण माध्य, पोतबंधक बंधपद्धों, पोतों वा स्थोरा का समयहरण या इंडाइशन और अन्य विषय आ सकें। सर्वबंधी और व्यक्तिगती अधिकारिता के प्रयोग के लिए उपर्युक्त करना और केवल उस पोत की ही नहीं जो नुकसान करित करता है अपितु किसी सहपोत अर्थात् उसी स्वामी के फायदाप्रद स्वास्थ्यव के अधीन किसी पोत की भी गिरफ्तारी को भी समर्थ लाने वाले उपर्युक्त भी करना आवश्यक है। उन दावों के अधिसमयों की बाबत विधिक उपर्युक्त अधिकारित करना भी आवश्यक था जो किसी पोत के विषय आगम से विशिष्टत: किसी पोत के उद्धारण के दावों के स्वाप्त तभी उसी दावों पर कर्मी दल की मजबूरी के लिए कुछ सीमा तक अधिसमय की व्यवस्था को सुलझाने के लिए उद्दृश्य होते। स्वामियों के बाहे वे भारत के निवासी ही या विदेशों के थाएं वर्द्धकों तथा प्रभारों के भी, चाहे वे रजिस्ट्रीकृत हों या नहीं और चाहे भारत में सूचित हों या विदेश में, दावों को शामिल करना भी आवश्यक था। प्रस्थापित कुछ अन्य सहत्वदूर्यों उपर्युक्त निम्नवत् थे:—

- (1) चूंकि भारतीय पोत, वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958 के अधीन भारत सरकार के पूर्ण नियंत्रण के अंतर्गत हैं अतः किसी भारतीय पोत की गिरफ्तारी, तब तक प्रशासित नहीं की जानी चाहिए जब तक कि स्वामी को कम से कम छह दिन की सूचना न दे दी गई हो और वह दावों की पूर्ति के लिए न्यायालय को प्रतिशूलि की व्यवस्था करने में असफल न हो गया हो।

(6) क्या प्रस्तावित विधान से नावधिकरण विषयक अपराधों से संबंधित नावधिकरण विषयक अधिकारिता (भारत) अधिनियम, 1860 और नावधिकरण विषयक अपराध (बौपनिविशिक) अधिनियम, 1849 का निरसन आवश्यक हो जाएगा; और

(7) क्या एलिजाबेथ के मामले¹² में, उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय के परिणेश्य में प्रस्तावित विधानों के पुनरोक्तण की कोई आवश्यकता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों संबंधित मंत्रालयों के बीच कुछ पत्ताचार हुआ है और विषय विचाराधीन है, अभी तक कोई अंतिम विनिश्चय नहीं हुआ है।

7. 6. विधि आयोग का कार्य—इसी बीच, विधि आयोग ने, एलिजाबेथ के मामले¹³ में उच्च न्यायालयों के प्रेक्षणों और निर्देशों के मतवैभिन्न में, स्वप्रेरणा से इस विषय पर अध्ययन किया है और परवीन सिंह समिति के विचारों तथा उन पर ऊपर निर्दिष्ट टिप्पणी को ध्यान में रखकर यह रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहा है। जैसा पहले बताया गया है कि इस रिपोर्ट में सामूहिक विधि के सभी पक्षों पर या विधि के इस क्षेत्र को¹⁴ लागू विद्यमान परिनियमों के उपर्यांतों पर विचार नहीं किया गया है, इसके बजाय यह परवीन सिंह समिति रिपोर्ट में चर्चित निम्नलिखित दो प्रमुख बातों तक ही सीमित है—

(1) नावधिकरण विषयक अधिकारिता का क्षेत्र और विस्तार, और

(2) भारत के लिए नावधिकरण विषयक न्यायालय।

इन दोनों विषयों पर आयोग के विचार आगे के दो अध्यायों में अधिकरित हैं।

पाद-टिप्पण—अध्याय 7

- देखिए, एम० बी० एलिजाबेथ बनाम हार्वेन इन्वेस्टमेंट एंड ट्रेडिंग कंपनी सिमिटेक, जे टी (1992) 2 एस सी 65।
- समिति के अन्य सदस्य थे: श्री के० सी० सिध्वान, वरिष्ठ केन्द्रीय सरकार अधिवक्ता: डा० एस० एन० संकल्पा (इंडियन शिपजीनर्स एसोसियेशन के प्रतिनिधि): श्री एच० एन० फोरेवार (प्रबंध निदेशक, इंडियन पोर्ट्स एसोसियेशन): श्री एस बेकेटेक्स्टरन (अधिवक्ता): डा० लियो बनिस (महाराष्ट्र नेशनल यनियन आफ सी फेवरसें आफ इंडिया): और शोसंस भूला, केंगी ब्लॉट एंड केयल, सालिसिटर्स के श्री बी० एस० भेसनियाल; श्री सी० एम० शेटी, उपमहानियेशक और परिवहन, समिति के सदस्य के सचिव थे।
- वंदर्श की सुविधा के लिए समिति की रिपोर्ट के उपार्यांष, इस रिपोर्ट के उपार्यांष बनाए गए हैं।
- ये अधिसमय क्रमशः 1926 और 1952 में अंगीकार किए गए थे किन्तु अनुसमर्पित नहीं किए गए थे।
- अंतरराष्ट्रीय सामूहिक संगठन।
- संयुक्त राष्ट्र।
- कीमटी मैट्रिटाइम इंटरनेशनल।
- दावा, जो एलिजाबेथ के मामले में, जे टी 1992 (2) उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया था।
- आर्टिकल तौर पर, कलकत्ता, मुम्बई, मद्रास और कोचीन में ऐसे चार, न्यायालय ही पर्याप्त समझे गए थे।
- जैसा कि संपत्ति कुप्रार के मामलों में निर्वचन किया गया, ए आई आर 1987 एस सी 386।
- “कर्मीबल जलयानों” के लिए इन नियमों के शिथिलीकरण का सुझाव दिया गया था।
- जे टी 1992 (2) एस सी 65।
- देखिए पैरा 2.8 • पूर्वोक्त।

अध्याय 8

नावधिकरण अधिकारिता की प्रकृति और उसका विस्तार

8. 1. इस विषय पर भारतीय विधि की पुरातन स्थिति और उसकी अपर्याप्तता पर बार-बार जोर देने की आवश्यकता नहीं है। सौभाग्य वश जैसा कि प्रारंभ में ही उल्लेख किया गया है भारत में जब देश के राजनीतिक ढाँचे में परिवर्तन हुआ संक्रमणकालीन विधियां परित करके इस विषय में पूर्ण दुर्बोलस्था की स्थिति को हूर कर दिया गया। यह भी एक और अनेक उच्च न्यायालयों को नावधिकरण अधिकारिता न देकर तथा भारतीय न्यायालयस्त्र को 1891 के स्टेट्यूट के पूर्व तथा इंग्लैण्ड में निर्वचन विधि तक सीमित करने के प्रयास से लगभग प्राय समाप्त हो गया है। किन्तु सुप्रीम कोर्ट द्वारा एलिजाबेथ के मामले में दूरदृष्टि परक तथा उदयदृष्टिकोण अपनाने के कारण ही इस विषय पर भारतीय विधि द्वास्यास्पद तथा वेतुकापन के क्षेत्र में लगभग समाप्त होने से बच गई।

8. 2. अद्यपि उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पश्चात् सामान्य स्थिति ठोस रूप द्वारा कर्तृत्वकी है तथा कुछ-कुछ निश्चित हो गई है तथापि नावधिकरण अधिकारिता के परिक्षेप तथा विस्तार पर सदियों पुराने कानून के स्थान पर स्वतंत्र विधान अधिनियमित करने की आवश्यकता है।

8. 3. ऐसे विधान की विषय-वस्तु पर विचार करते समय हमारा कार्य हाल ही में यूनाइटेड किंगडम¹⁵ में पुरास्थापित विधान द्वारा अपेक्षाकृत सरल हो गया है। प्रवीन सिंह समिति ने, जिसने ऐसे विधान की सर्वाधिक आवश्यकता भहसूस की, उच्चतम न्यायालय के मार्गदर्शन के अधार में, यूनाइटेड किंगडम के विधान तथा सिंगापुर और अन्य देशों में पुरास्थापित विधानों पर विचार किया तथा नावधिकरण अधिनियम का प्रारूप तैयार किया जो कि इस रिपोर्ट¹⁶ में उपाबद्ध है। आयोग ने पूर्वगामी अध्याय में विभिन्न सुधारों और परिवर्धनों का उल्लेख किया है जो उक्त समिति ने हमारे देश की आवश्यकता को देखते हुए आवश्यक समझा। वह प्रारूप मुख्य रूप से यूनाइटेड किंगडम के सुप्रीम कोर्ट एकट, 1981 पर आधारित है और इसने उन पहलुओं और विशेषताओं को ध्यान में रखा है जिसे समिति ने विशेष उल्लेख या उपर्यांष के लिए आवश्यक समझा।

8. 4. विधि मंत्रालय द्वारा जलभूतल परिवहन मंत्रालय से इसके पत्ताचार में प्रारंभिक प्रक्रम पर उठाए गए विभिन्न प्रश्नों के संबंध में जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है, हम निम्नलिखित विचार व्यक्त करता चाहते हैं—

(1) वे कारण जिनकी बाबत नावधिकरण अधिकारिता का विस्तार किया जा सकता है यूनाइटेड किंगडम के 1981 के अधिनियम और अन्य हाल के विधानों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तावित कानून में व्यापक रूप से परिवर्णित किया गया है। यह आवश्यक प्रतीत नहीं होता कि प्रस्तावित धारा 2 में और कोई कारण जोड़ा जाएगा।

(2) इस प्रश्न के संबंध में कि क्या नावधिकरण अधिकारिता के परिक्षेप के बारे में और उसे शासित करने के लिए सशक्त-न्यायालय के बारे में पृथक् अधिनियमितयां होनी चाहिए, हमारा विचार है कि आगामी अध्याय में अंतर्विष्ट कारणों से ऐसा कोई पृथक् अधिनियमित आवश्यक नहीं है। संक्षेप में हमारी राय है कि इस समय नावधिकरण अधिकारिता उच्च न्यायालय में निहित होनी

चाहिए और भारत के सभी उच्च न्यायालयों में यह अधिकारिता विहित होनी चाहिए किन्तु यदि किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर यह पाया जाता है कि नावधिकरण अधिकारिता अन्य न्यायालयों की भी प्रदान की जानी चाहिए तो इस अधिकारिता को जिला के प्रधान सिविल न्यायालय को प्रदान करने के लिए कार्रवाई की जानी चाहिए। इसे समिति द्वारा प्रस्तावित भारतीय नावधिकरण अधिनियम की द्वारा 1 और 2(क) का संशोधन करके और समिति द्वारा प्रस्तावित नावधिकरण न्यायालय अधिकरण को छोड़कर प्रभावी बनाया जा सकता है।

- (3) इस प्रधन के बारे में कि क्या "होवरक्राफ्ट" को प्रस्तावित अधिनियमित के अंतर्गत लाया जाना चाहिए। हमारा विचार है कि संप्रति-उत्तर नकारात्मक होना चाहिए। निसंदेह १० के० सुप्रीम कोर्ट, एकट, 1981 ने शिप (जहाज) को परिभाषित किया है कि उसके अंतर्गत होवरक्राफ्ट भी है। किन्तु यह होवरक्राफ्ट एकट, 1968 के उपबंधों के अधीन रहते हुए हैं जो विधान के लागू होने को काउंसिल में आदेश द्वारा अपवर्जित या उपांतरित किए जाने योग्य बनाती है। इसके अतिरिक्त होवरक्राफ्ट के विनियमन का प्रभाव न केवल समुद्र द्वारा माल के बहन से संबंधित विधान पर पड़ेगा बरन उसका प्रभाव बायोलैंस से बहन से संबंधित विधान तथा सड़क यातायात संबंधी विधान पर भी पड़ेगा। भारत में इंगलैंड के होवरक्राफ्ट एकट, 1968 के समान कोई विधान नहीं है। इन पहलुओं की अभी और समीक्षा की जानी है। अतः हम तदनुसार ऐसा उचित नहीं समझते हैं कि "होवरक्राफ्ट" को इस समय नावधिकरण विधि के भागरूप में सम्बलित किया जाए। इसे यदि बाद के प्रक्रम पर आवश्यक समझा जाता है तो सरलता से किया जा सकेगा।
- (4) यह सत्य है कि १० के० एडविरल्टी एकट, 1861 का लागू बने रहना समाप्त किया जाए और कोलोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी (इंडिया) एकट, 1890, दि कोलोनियल एडमिरल्टी जुरिस्डिक्शन एकट, 1891 को निरसित करना पड़ेगा। इसे समिति द्वारा तैयार किए गए प्रारूप विधान में एक ऐसा उपर्युक्त उपबंध जोड़कर किया जा सकता है जैसा कि आगे बताया गया है। नावधिकरण अपराध (उचितवा) अधिनियम, 1849 और नावधिकरण अधिकारिता (भारत) अधिनियम, 1890 को भी निरसित किया जाना होगा किन्तु नावधिकरण अपराधों की बाबत अधिकारिता प्रदान करने के लिए प्रस्तावित विधान में एक उपबंध जोड़ा जाना आवश्यक है।

- (5) एलिजाबेथ के लाल्ले० में सुप्रीम कोर्ट के विनियम से प्रस्तावित विधान में किसी परिवर्तन की अपेक्षा नहीं है। पोत परिवहन अधिनियम, 1958 और विमान परिवहन अधिनियम, 1925 में विर्य के पैरा 81 और 82 में व्यक्त विचारों के प्रकाश में संशोधन अपेक्षित है। इस पर पृथक् रूप से बाद में तब विचार किया जा सकता है जब इन अधिनियमितियों पर विचार किया जाएगा।

8.5. उपर्युक्त विचार विमान से, यह स्पष्ट हो जाता है कि नावधिकरण विधि के क्षेत्र में संसद द्वारा विधान का अधिनियमन प्रतिष्ठा और आवश्यकता दोनों दृष्टियों से अनिवार्य है। भारत अब स्वतंत्र रह दूँ यह और यह इसकी प्रभुसत्ता के अनुरूप नहीं है कि एक शताब्दी से अधिक समय पूर्व अधिनियमित विद्युश स्टेट्यूट इसकी सामुद्रिक विधि को आसित करे। इसके अतिरिक्त हाल के वर्षों में भारत के सामुद्रिक व्यापार और बाणिज्य के व्यापक विस्तार से आर्थिक नीतियों के उदारीकरण के परिणामस्वरूप भविष्य में उनके और वि

करने की स्पष्ट संभावना और व्यापार के विश्व परिदृश्य के रूप में उभरने से विधि की इस शाखा को आने वाले वर्षों में अधिक भूल्ल भिल तथा यह आवश्यक और बोल्नीय है कि इसे विनिर्दिष्ट भारतीय विधान के अन्तर्गत लाया जाए। अतः हम परवीन सिंह समिति से सहमत हैं कि ऐसे विधान को प्रारूपित किए जाने का प्रयास किया जाए।

8.6. जैसा पहले उल्लेख किया गया है कि यह कार्य इस विधान पर हाल के १० के० विधान की विद्यमानता से काफी हृद तक लगता है। इस देश में शासित समुद्री विधि सर्वथा अग्रेजी विधि पर आधारित है तथा यह भी है कि उस विधि में संपूर्ण विश्व में संचालित विधि को काफी हृद तक प्रभावित किए हुए हैं। अतः यह केवल समीक्षीय ही नहीं बल्कि स्वाभाविक होगा कि हमारा प्रस्तावित विधान आधारित रूप से १० के० विधान पर आधारित हो किन्तु उसमें हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप सुधार और परिवर्धन भी किया जाए। १० के० के अधिनियम तथा परवीन सिंह समिति द्वारा गुजारे गए विधान के विधान पर विचार करने के पश्चात हमने प्रारूप नावधिकरण अधिनियम तैयार किया है जो इस रिपोर्ट के उपांत्य-viii के रूप में उपावधि है।

8.7. यद्यपि प्रस्तावित प्रारूप विधेयक स्वतः स्पष्ट है तथा प्रारूप विधेयक समझते हैं कि प्रस्तावित विधान की मुख्य विशेषताओं का संक्षेप में वर्णित किया जाए। इस पर दो भागों में विचार किया जा सकता है: (i) न्यायालय जो नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग करेंगे और (ii) उनकी अधिकारिता की परिधि और सीमा। इनमें से प्रथम विषय पर आगामी अध्याय 9 में पर्याप्त विस्तार से चर्चा की गई है। यहां हम दूसरे विषय में सुध्य पहलुओं पर चर्चा करेंगे।

8.8. अब अनेक विषय जो नावधिकरण अधिकारिता की परिधि में आते हैं वे सामुद्रिक दावे, संविदा, अपकृत्य आदि से विशेष रूप से संबंधित हैं। अनेक ऐसे पहलू हैं जो अवस्थिति, व्यक्ति, विदेशी, संपत्ति, वान, जलविधान के संबंध में नावधिकरण अधिकारिता से संबंधित तथा कुछ ऐसे सिद्धांत हैं जो नावधिकरण विधयों में अपकृत्य वायित्व को शासित करते हैं जो न्यायिक पूर्वव्यास द्वारा आसित होते हैं और जिसके बारे में इस विधान में चर्चा करना आवश्यक होगा। नावधिकरण कार्रवाई की मुख्य विशेषता सावधीम कार्यवाही और व्यक्तिगत कार्यवाही के बीच अंतर है। नावधिकरण विधि दावा करने वाले को किसी पोत वा पोतावार के विरुद्ध सार्वभौम अधिकार प्रदान करती है जो स्वामी के विरुद्ध व्यक्तिगत अधिकार से जिल्हा होता है। इस प्रकार की कार्रवाई की मुख्य विशेषताएं एलिजाबेथ के लाल्ले० में विस्तार से बताई गई हैं और उन्हें यहां विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है। न्यायालय ने उल्लेख किया है:—

"नावधिकरण की सार्वभौम कार्रवाई का जैसी इंगलैंड में या यूनाइटेड स्टेट में प्रचलित है, अनेक देशों द्वारा अनुसरण नहीं किया जाता है। अनेक देशों में जहां सिविल विधि अपनाई जाती है, उसी कार्यवाहियों व्यक्तिगत कार्रवाई द्वारा प्रारंभ की जाती है। इस विषय में सक्षम न्यायालय को पोत की कुर्की का आदेश देने की शक्ति होती है यदि उसे यह विश्वास हो जाता है कि वादी को उसकी प्रतिभूति को देने की संभावना है जब तक कि पोत को उसकी अधिकारिता में ही न रोके रखा जाए। न्यायालय के हाथ व्यक्तिगत कार्रवाई की तकनीकियों से बंधे नहीं होते और कार्यवाहियों की परिधि सामुद्रिक ग्रहणाधिकार वा दावे तक सीमित नहीं होती।

इंगलिश और सिविल दोनों विधि प्रणालियों में गिरफतारी का वास्तविक प्रयोजन डिक्टी की तुष्टि के किस प्रतिशूली प्राप्त करना है यद्यपि इंगलैंड में दिरफतारी अधिकारिता ग्रहण करने का आदार होती है जब तक कि स्वामी अधिकारिता के प्रति समर्पण नहीं करता है। किसी देश में जब एक वार गिरफतारी कर ली जाती है और स्वामी उपस्थित हो

जाता है तो कार्यवाही व्यक्तिगत रूप से चलती रहती है। सिविल ला में सभी कार्यवाहियां चाहे वे नावधिकरण की हों या नहीं—व्यक्तिगत होती हैं और धान की गिरफ्तारी गैर नावधिकरण कार्रवाई चाहे वह सार्वभौम हो या व्यक्तिगत हो सुपरिभावित सामुद्रिक धारणाधिकार और दावे तक सीमित होती है तथा वह (वस्तु) के (पोत, पोतभार तथा भारक) के विरुद्ध जो विवाद की विषयवस्तु है या विवादित (वस्तु) के रूप में उसी कायदाग्राही स्वामित्व में अन्य पोत के विरुद्ध निवेशित होती है।

इन संप्रेक्षणों के प्रकाश में और सामुद्रिक विषयों में पोत के विरुद्ध प्रभावी उपचार की महत्वा को ध्यान में रखते हुए हमने सार्वभौम कार्रवाई और व्यक्तिगत कार्रवाई के बीच भेद बनाए रखने का प्रस्ताव किया है। किन्तु उसी समय प्रस्तावित अधिनियमित न्यायालय को यह अधिकार प्रदान करती है कि किसी प्रक्रम पर और समुचित रूप का विनियन करे तथा और उचित निवेश तथा आदेश दे और यह सुनिश्चित करने के किस आवश्यक अनुतोष मंजूर करे कि कार्रवाई के रूप के बारे में तकनीकियों से पक्षकारों के विधिमान्य दावों और अधिकारों⁹ का हमन न हो। अन्य बातों के साथ-साथ यह सुनिश्चित करने के लिए अनुप्रुक्त उपबंध समाविट किए गए हैं कि नावधिकरण अधिकारिता के अंतर्गत भारतीय पोत के मंजूरी में मजदूरी के लिए दावाग्रहण करने की अधिकारिता है।¹⁰ किसी पोत संपत्ति के विकल की चोजबल तथा विकल के आगमों के वितरण की रीति तथा उसके संबंध में दावों की पूर्विकता के क्रम¹¹ की बाबत उपबंध भी सम्मिलित किए गए हैं। पूर्विकता पोत पर कर्मदिल को जोध्य मजदूरी और अन्य रकम को दी गई है, छह मास की अवधि के लिए मजदूरी इस प्रकार जोध्य मजदूरी के अतिशेष से उच्चतर पूर्विकता वाली होगी।¹² सामुद्रिक धारणाधिकार की कुर्की का विषय तथा उनके समापन के बारे में भी चर्चा की गई है।¹³ इसके अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार को नावधिकरण मामलों में न्यायालयों में प्रक्रिया और परिपाठी जिसके अंतर्गत न्यायालय फीस तथा खर्च भी हैं, शासित करने वाले नियम¹⁴ बनाने की जिकित प्रदान की गई है।

8.9. नावधिकरण मामलों में प्रक्रिया वही होगी जो सिविल न्यायालयों में बादों तथा अन्तसंबद्ध मामलों में होती है। अतः जहां तक हो सके इन कार्यवाहियों में सिविल प्रक्रिया संहिता (1908 का 5) लागू होगी। तथापि इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए कि कभी-कभी ऐसे कठिन विवादक जिनमें तकनीकि मूल्यांकन अंतर्वलित हों, उत्पन्न हो सकते हैं, न्यायालय को जहां आवश्यक हो, निर्धारक को सहायता प्राप्त करने में समर्थ बनाने का उपबंध किया गया है। प्रथम अपील के किस उपबंध और माध्यम को निवेशित करने में समर्थ बनने वाले उपबंध भी प्रस्तावित विधान में सम्मिलित किए गए हैं।¹⁵

8.10. इस स्थल पर एक अन्य पहलू का उल्लेख करना आवश्यक है। विद्यमान कानूनों में कुछ उपबंध हैं जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए। वाणिज्य पोत अधिनियम, 1958 में अधिकारिता के संबंध में उच्च न्यायालय की परिभाषा है तथा विदेशी पोत¹⁶ के रोके जाने को प्राधिकृत करने वाला उपबंध भी है। भारतीय समुद्र द्वारा माल का वहन अधिनियम, 1925 में माल ढोने वाले (कैरियर) पर कुछ दायित्व और जिम्मेदारियां अधिरोपित करने वाले तथा कुछ अधिकार उन्मुक्तियां प्रदान करने वाले उपबंध हैं। हमने इन उपबंधों को नहीं छुआ है क्योंकि वे इस रिपोर्ट द्वारा प्रस्तावित प्रारूप विधान की विषय-वस्तु पर प्रत्यक्षतः आक्रमण नहीं करते और उन पर तब विचार किया जा सकता है जब इन अधिनियमों का पुनरीक्षण किया जाए। तथापि प्रस्तावित विधान में कुछ विद्यमान कानूनों के निरसन की आग की गई है और इस संबंध में उपबंध किए गए हैं।¹⁷

8.11. हम आशा करते हैं कि प्रस्तावित प्रारूप विधान की विस्तृत रूप-रैखा प्रारूप (उपबंध VIII) के उपबंध के उचित मूल्यांकन को सुकर बनाएगी।

पाद-टिप्पणी—अध्याय 8

1. जे ई 1992 (2) एम सी 65।
2. ऐसा प्रतीत होता है कि बिभाषुर और अन्य देशों में इसी प्रकार के विधान हैं किन्तु यू. के. विधान की पूर्णता को ध्यान में रखते हुए उन पर विचार करना आवश्यक है।
3. और यह रिपोर्ट तथा उपबंध I से III तक।
4. देखिए पिछला अध्याय 7।
5. "होवरकाफ्ट" से ऐसा यान असियेत है जो इस प्रकार असिक्लिप्ट है कि वह जब गति में हो तो यान से निकली हवा जो कुप्रल बना देती है पूर्णतः या भागतः सहारा पाता है जिसकी सीमाओं के अंतर्गत यान के नीचे की भूमि जल या अन्य तक जाता है। धारा 4 यू. के. होवरकाफ्ट ऐक्ट, 1968।
6. जे ई 1992-2 एम सी 65।
7. यू. के. युप्रीम कोर्ट ऐक्ट, 1981।
8. जे ई 1992 (2) एम सी 65।
9. उपबंध I/III धारा 3 पर प्रस्तावित नावधिकरण अधिनियम।
10. धारा 9।
11. धारा 9, 11, 12।
12. धारा 12(2) (ख)।
13. धारा 13।
14. धारा 19।
15. धारा 15 से 18।
16. वाणिज्य पोत अधिनियम, 1958 की धारा 3 (15)।
17. पाद-टिप्पणी 9, धारा 20।

अध्याय 9

नावधिकरण न्यायालय

9.1. उन न्यायालयों के पदाधिकरण का प्रश्न जिनमें नावधिकरण अधिकारिता निहित होगी अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न है। भारत एक विशाल देश है जिसके समृद्धी तट की लम्बाई लगभग 5700 किमी^० है जो केवल उत्तर को छोड़कर उससे तीनों दिशाओं से सशक्त है। इसमें सर्वदा बहुत सीमा तक सामुद्रिक यातायात तथा व्यापार होता रहा है तथा इसके इतिहास से दर्शत होता है कि आरंभिक काल में अनेक सम्राटों तथा शासकों ने विभिन्न प्रकार के मामले अंतरराष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित किया है। हाल के बर्षों में भारत में और उसके बाहर भारत यातायात इतना अधिक बढ़ गया है कि इस समय देश में 11 महापत्तन तथा 163 लघुपत्तन हैं। ऐसे विदेशी लोडेकाले (फ्लेज) यानों की संख्या जिन्होंने विगत तीन बर्षों में माल को लदाई भा उत्तराई के लिए भारत के महापत्तनों की यात्रा की इस प्रकार है:—

बर्ष	यानों की संख्या
1990-91	5528
1991-92	5462
1992-93	6129

लघु पत्तनों पर माल की लदाई और उत्तराई की माला के संबंध में दूरी जानकारी तत्काल उपलब्ध नहीं है। विगत तीन बर्षों के दौरान भारतीय लोडा ले जाने वाले यानों द्वारा दोए गए समुद्र पारीय व्यापार की कुल टन माला इस प्रकार है:—

बर्ष	कुल व्यापार (दस लाख मीटरी टन में)
1990-91	38.86
1991-92	39.53
1992-93	42.66

अपर जो आंकड़े दोए गए हैं वे भारत के दात परिवहन व्यापार की माला के बारे में मोटे आंकड़े हैं। हाल के बर्षों में आयात और निर्यात से संबंधित भारतीय विधियों के उदारीकरण से, इसमें सदैह नहीं है कि आगामी बर्षों में इन क्रियाकलापों से अत्यधिक वृद्धि हो जाएगी। भारत और अन्य देशों के बीच यानों के आवागमन यात्रियों की माला और दोए जाने वाले माल की संख्या में वृद्धि के फलस्वरूप सामुद्रिक दावे, विवाद और मुकदमेबाजी में वृद्धि होना निश्चित है। अतः उन भारतीय न्यायालयों को स्पष्टरूप से परिभासित करना आवश्यक है जो नावधिकरण और सामुद्रिक मामलों में अधिकारिता का प्रयोग करें।

9.2. पिछले अध्याय 2 और अध्याय 3 में किए गए विचार विसर्जन से यह स्पष्ट रूप से दर्शत होता है कि इतिहास की विषमता से भारत के स्वतंत्र होने तक तथा उसके पश्चात् उसके सावधान गणतंत्र होने तक सामुद्रिक या नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग केवल मद्रास, मुंबई और कलकत्ता उच्च न्यायालयों द्वारा ही किया जाता रहा है। विभिन्न राज्यों के राज्यसभाओं के पुनर्गठन के आधार पर यह अधिकारिता उन उच्च न्यायालयों में भी निहित हो रही जिन पर राज्यसभाओं सम्बन्धित विभिन्न राज्यसभाओं के परिणामस्वरूप उक्त तीन उच्च

न्यायालयों की अधिकारिता विकसित हो रही थी।^१ उच्चतम न्यायालय द्वारा हाल में एलिंजाम्बेथ के लाभेश में निर्णय से यह स्थिति काफी हद तक हुई है किन्तु कुछ ऐसे संदिग्ध मुद्दे हो सकते हैं जिन पर यह सदैह हो कि ऐसे मामले में इनमें किस उच्च न्यायालय को अधिकारिता का प्रयोग करना चाहिए। मुद्दे के इस पहलू पर जिसका स्पष्टीकरण आवश्यक है ध्यान देने के पहले वह आवश्यक है कि इस बिल्कुल भिन्न सिफारिश पर चर्चा की जाए जो परवीन स्थिति की रिपोर्ट भी की गई है। जैसा कि पहले बताया गया है कि समिति ने सुझाव दिया है कि नावधिकरण उच्च न्यायालयों से ले ली जानी चाहिए और उसे विशेष रूप से गठित किए गए नावधिकरण न्यायालयों में निहित किया जाना चाहिए उसे विशेष रूप से गठित किए गए नावधिकरण न्यायालयों में निहित किया जाना चाहिए तथा उनका एक अधीन न्यायालय हो जो उनके विनियमों से अपील सुनने के लिए सशक्त हो। यह एक क्रांतिकारी सुझाव है जो शासनिक अधिकरणों के गठन के हाल के रूप से अनुप्रमाणित है तथा इस पर विचार और इसकी समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है।

9.3. पहले तो यह आवश्यक है कि समिति द्वारा नावधिकरण न्यायालयों के गठन^२ के लिए उसकी सिफारिशों में दिए कारणों का विश्लेषण किया जाए और उनकी समीक्षा की जाए समिति ने जिस स्कीम की परिकल्पना की है वह निम्न आधार पर है:

(1) इस सभ्य नावधिकरण अधिकारिता केवल मद्रास, मुंबई और कलकत्ता के उच्च न्यायालयों में निहित है और इस प्रश्न पर विचारित राय है कि क्या ये न्यायालय स्वयं नावधिकरण अधिनियमों के स्पष्ट और संरक्षित उपबंधों के अधाव में प्रभावी अधिकारिता का प्रयोग कर सकते हैं।

(2) किसी न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता केवल उस राज्यक्षेत्र तक निर्वाचित नहीं की जा सकती जहां वह न्यायालय अवस्थित है और इसे भारत के संपूर्ण तटीय क्षेत्र और अन्तः समुद्री सीमा तक होना चाहिए क्योंकि सामुद्रिक विवादों के पक्षकार संपूर्ण भारत में कैले हैं।

(3) नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग और इससे संबंधित विधि का समायोजन एक अन्यथा विशेषता है और यह आवश्यक है कि विशेषज्ञता के क्षेत्र में पर्याप्त विशिष्टता विकसित की जाए। वर्तमान प्रणाली जिसके अधीन वह न्यायाधीश को जिसमें नावधिकरण अधिकारिता निहित होती है, उच्च न्यायालय के समक्ष अत्य मुकदमों में भी कार्यवाही करनी पड़ती है, अतः उसे इस विषय पर ध्यान के लिए करने इस क्षेत्र में विशेषज्ञता पूर्णज्ञान अर्जित करने के लिए पर्याप्त समय नहीं मिलता है।

(4) नावधिकरण अधिकारिता का अंतरराष्ट्रीय शाखा प्रशास्त्राएं हैं क्योंकि न्यायालय को अंतर्वलित यान को जाहे वह भारतीय हो या विदेशी प्रिफ़्लाटर करने तथा विक्रय करने की शक्तियां हैं। यह न केवल विधि के क्षेत्र में सुविज्ञान की आवश्यक मांग है, यह केन्द्रीय सरकार के लिए आवश्यक बनाती है कि नावधिकरण के स्वतंत्र न्यायालय गठित करे और यह सुनिश्चित करे कि सामुद्रिक दावों को उनके निपटारे में अविभाजित ध्यान मिले। हमारे देश जैसे सामुद्रिक देश ऐसी अप्रचलित विधि पर निर्भर नहीं बला रह सकता। जो हमारी पोत परिवहन उद्योग को वांछित रूप में वृद्धि के रास्ते में अड़ा है।

(5) समिति के निर्धारण के अनुसार जो उसके सदस्यों के अनुभव पर आधारित है उच्च न्यायालय सामान्यतया किसी बाद के निपटारे में छह वर्ष से अन्यून समय लेते हैं। समझा जाता है कि सिविल न्यायालयों में तो और विलंब होगा। नावधिकरण न्यायालयों की अधिकारिता का विस्तार करके जैसा कि यू० के० और सिंगापुर में है, भारत नावधिकरण मुकदमेबाजी का केन्द्र हो सकता है तक मूल्यवान विदेशी मुद्रा कमाने वाला हो सकता है जब न्यायालयों में विलंब कम हो जाए।

- (6) गठित किए जाने वाले नावधिकरण न्यायालय किसी रूप में उच्च न्यायालय से अब नहीं होने चाहिए। इन न्यायालयों में न्यायाधीशों की अहंताएं, अनुभव और नियुक्ति की पद्धति एकदम संविधान के उपबंधों के अनुरूप होनी चाहिए। उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 का जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने निर्वचन किया है, उपयोग किया जा सकता है।
- (7) परस्पर विरोधी निर्णय से बचाने के लिए इन न्यायालयों में प्रक्रिया संबंधी मामलों को शासित करने वाले नियम केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाए जाने चाहिए। मुंबई उच्च न्यायालय के विद्यमान नियमों द्वारा उपबंधित सुरक्षोपाय भी नियम बनाने में समाविष्ट किए जाने चाहिए।
- (8) विभिन्न नावधिकरण न्यायालयों में भिन्न-भिन्न निर्णय में बचाने के लिए यह आवश्यक है कि प्रथम बार नावधिकरण न्यायालयों के विनिश्चय में एक एकल नावधिकरण अपील न्यायालय को अपील का उपबंध किया जाए। आगे किसी उच्च न्यायालय को विधि, अधिकारिता या राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय महत्व के विवादों के प्रेषण पर उच्चतम न्यायालय द्वारा विशेष अपील के लिए मंजूरी के अधीन रहते हुए अपील के उपबंध के सिवाय और किसी अपील या पुनरीक्षण के लिए उपबंध नहीं किया जाना चाहिए।
- (9) केन्द्रीय सरकार को विभिन्न न्यायालय फीस और व्यय का उपबंध करना चाहिए किन्तु ऐसी कोई फीस/व्यय बान के कर्मदल द्वारा संदेह नहीं होगा।

9.4. आयोग ने उक्त समिति को सिफारिशों पर सभी पहलुओं से ध्यानपूर्वक विचार किया है और समिति की यह सिफारिश स्वीकार करने में असमर्थ है कि नावधिकरण अधिकारिता को उच्च न्यायालयों से हटा दिया जाए और नावधिकरण न्यायालयों में निहित की जाए। आयोग सिफारिशों में अंतर्वलित साधारण मुद्दों पर पहले अपने व्यापक विचार प्रस्तुत करना चाहेगी और तब समिति द्वारा बताई गए विनिर्दिष्ट बातों पर विचार करेगी।

9.5. यह सत्य है कि भारत के संविधान के परिणामस्वरूप और सामान्यजन की उसको उपलब्ध विद्याधिकार तथा विधिक उपचार के बारे में जागरूकता बढ़ने से देश के न्यायालयों में और विशेष रूप से उच्च न्यायालयों में मुकदमों का अभूतपूर्व विस्फोट द्वारा है। इससे तथा इसके साथ उच्च न्यायालयों के बीच राय के बराबर भास्त्रेद के उद्भूत होने वाले परिणाम के विलंब की समस्या से केन्द्रीय सरकार ऐसी संभावना पर विचार करने के लिए प्रेरित हुई कि नागरिक के लिए उसके कष्ट को विशेष रूप से विशेषज्ञता के क्षेत्र में कष्ट दूर करने के लिए अनुकूली मंच हो। संविधान के 42वें संशोधन ने संविधान में अनुच्छेद 323 और 323ख को समाविष्ट करते हुए आगे 14क का अधिनियमन करके और प्रशासन के कुछ क्षेत्रों के संबंध में न्यायालयों के स्थान पर राष्ट्रीय या राज्य स्तर के अधिकरणों का गठन प्राधिकृत करके इस विचार को मान्यता प्रदान की।

यह कहना पर्याप्त है कि इन दोनों उपबंधों में से किसी के अधीन अधिकरण गठित करने वाले विधान की अतिमहत्वपूर्ण विशेषताएं यह हैं—

- (क) कि इसमें उच्च अधिकरण की अधिकारिता के भीतर आने वाले किसी या सभी मामलों की बाबत सिवाय अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय के सभी न्यायालयों की अधिकारिता के अपवर्जन के लिए उपबंध किया जाएगा।
- (ख) कि इसमें अधिकरण की स्थापना के समय सभी मामलों के जो उस समय प्रश्नगत विधि द्वारा अधिकरण को सौंपे गए मामलों के संबंध में न्यायालयों या किसी अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित हैं ऐसे अधिकरण को अंतरित करने के लिए उपबंध किया जाए।

परबीन सिंह समिति ने स्पष्टतया सिफारिश करने में लम्बत कुमार के भास्त्रेद में निश्चित रूप में पूर्वोक्त उपबंधों से प्रेरणा प्रहण किया था। समिति ने सुझाव दिया था कि नावधिकरण न्यायालयों का सुझाव दिया था न कि नावधिकरण कोई ऐसा विषय नहीं है जिसके बारे में उक्त दोनों में से किसी उपबंध के अधीन अधिकरण गठित किया जा सके।

9.6. इस प्रस्ताव के संबंध में कि नावधिकरण का अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन उच्च न्यायालयों के अपवर्जन में गठन किया जाए एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या यह संविधान के विद्यमान उपबंधों के अधीन अनुज्ञेय है। हमने अनुच्छेद 323 (क) और (ख) का उल्लेख किया है जो समुचित विधान मंडल को उच्च न्यायालयों का अपवर्जन करके विधियां अधिनियमित करने की प्रक्रिया प्रदान करता है। अनुच्छेद 323 (क) और (ख) की गठन संबीक्षा से यह स्पष्ट हो जाएगा कि पूर्वतर उपबंध में कि संघ या किसी राज्य या किसी स्थानीय या किसी अन्य प्राधिकारी के कार्यकलाप के संबंध में लोक सेवा या पदों पर व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की जरूरतों की बाबत विवाद और शिकायतों के अधिनिर्णय के लिए प्रशासनिक अधिकरणों के गठन के लिए उपबंध है। अनुच्छेद 323 (ख) भी समुचित विधान मंडल को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह खंड (2) में विनिर्दिष्ट समीक्षा किसी विषयों की बाबत जो कर के उद्ग्रहण, संग्रहण और प्रवर्तन, विदेशी मुद्रा, सीमाशुल्क सीमांतों के आर-पार आयात और निर्यात, औद्योगिक तथा श्रम विवादों, भूमि मुद्राओं, नगर संपत्ति की अधिकतम सीमा, संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य विधान मंडल के सदन के निर्वाचन, खाद्य पदार्थों तथा अन्य माल के उत्पादन, उपापन और प्रदाय तथा वितरण के संबंध में विवादों, शिकायतों और अपराधों के अधिकरण द्वारा अधिनिर्णय या विचारण के लिए विधि अधिनियमित करे। कल्पना का कितनी ही खीचतान की जाए नावधिकरण अधिकारिता से संबंधित कोई विधि अनुच्छेद 323(ख) के खंड (2) में विनिर्दिष्ट मामलों के अन्तर्गत नहीं आएगी।

(क) नावधिकरण अधिकारिता की बाबत विधि संविधान की सूची 1 की प्रविष्टि 24, 25 और 95 के अन्तर्गत आती है। इन तीनों प्रविष्टियों में जिसके अन्तर्गत संपूर्ण नावधिकरण विधियक अधिकारिता आती है, विनिर्दिष्ट विषयों की बाबत विधि अधिनियमित करने की अनन्य अधिकारिता संसद को है। सूची 1 की प्रविष्टि सं० 24, 25 और 95 में विनिर्दिष्ट विषय अनुसूची 323 (क) या 323(ख) के अधीन नहीं आते। अतः इस निष्कर्ष से कोई बचाव नहीं है कि उच्च न्यायालयों का अपवर्जन करके नावधिकरण संबंधी विषयों के अधिनिर्णय के लिए किसी अधिकरण का गठन नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त यह व्यापक धारणा है कि उच्च न्यायालयों के स्थान पर अधिकरण अन्तर्गत नहीं हो सकते। उच्चतम न्यायालय के आर० कें० जैनै के भास्त्रेद में कुछ संग्रहण और न्याय-मृति श्री अहंशदी द्वारा हाल में अहमदाबाद आय-कर बार एसोसिएशन९ में दिए गए भाषण में किए गए संक्षेप से ऐसी धारणा अभिव्यक्त होती है। हाल ही में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय९ के भी यह उल्लेख किया है कि अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन उच्च न्यायालयों में निहित न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति संविधान का बुनियादी ढांचा है जो संविधान के संशोधन द्वारा भी नहीं लिया जा सकता। उच्च न्यायालय ने उस मामले को एक रिट याचिका को ग्रहण किया और प्रशासनिक अधिकरण के आदेशों में हस्तक्षेप किया। एक विशेष इजाजत अर्जी उच्चतम न्यायालय में फाइल की गई और मामला संपूर्ण विवाद्यक पर विचार करने के लिए एक बड़ी न्यायपीठ को निर्देशित किया गया है। इन बातों से यह उपर्युक्त नहीं होता कि नावधिकरण विधियक न्यायालयों या अधिकरणों में आदेशों के विरुद्ध उच्च न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति न दी जाए जैसा कि परबीन सिंह समिति ने सुझाव दिया है, न तो उचित होगा न बांधनीय होगा।

(ख) नावधिकरण अधिकरणों के बजाए नावधिकरण न्यायालयों के गठन के सुझाव से भी स्थिति में कोई सुधार नहीं होगा संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन सभी न्यायालय और अधिकरण उच्च न्यायालयों की पर्यवेक्षण अधिकारिता के अधीन हैं

और उनके आदेशों की उच्च न्यायालयों द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन होते हैं। इस प्रकार यदि नावधिकरण न्यायालय गठित कर दिए जाते हैं तो भी उनके आदेश उच्च न्यायालयों के न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन होंगे।

(ग) किसी सांविधानिक उपबंध के अभाव में, संसद् को अथवा राज्य विधान मंडल को उच्च न्यायालयों की अधिकारिता को अपवर्जित करने वाली विधि अधिनियमित करने की विधायी क्षमता नहीं है। उच्चतम् न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया है कि नावधिकरण संबंधी अधिकारिता, इसके उद्भव और विकास की विशिष्टता के बावजूद उच्च न्यायालय में अभिलेख के वरिष्ठ न्यायालय के रूप में निहित है। उच्च न्यायालय संविधान के अधीन असीमित अधिकारिता और सभी न्यायिक शक्तियों का केवल उन्हें छोड़कर जो अपवर्जित है निवान है, और वह नावधिकरण मामलों में कार्यवाही करने में सक्षम है। संविधान विधान मंडल पर उच्च न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता में कभी करने की शक्ति प्रदान नहीं करता अतः परवीन यही समिति की उच्च न्यायालयों की अधिकारिता के अपवर्जन के लिए तिकारिश स्वीकार नहीं की जा सकती।

9.7. किन्तु हम द्वारे चाहे न्यायालय कहें या अधिकरण कहें ऐसे निकाय को केवल अकाद्य कारणों से उच्च न्यायालय की विद्यमान अधिकारिता को प्रतिस्थापित करने के लिए अनन्नत किया जा सकता है। वह मुख्य कारण कि क्यों विद्यमान न्यायालयों के स्थान पर अधिकरण बनाने का विचार पैदा हुआ यह है कि वे एक विशेषज्ञ निकाय उपबंध करते हैं जो मामलों का शीघ्र निपटारा सुनिश्चित करते हुए विशेष विशेषज्ञता के प्रति आकर्षण प्रस्तावित करता है। यदि अधिकरण कराधान के क्षेत्र में बेहतर माना जाता है तो यह इस कारण से कि यह ऐसा अधिकरण जिसमें न्यायिक सदस्य और लेखाकार या लकड़ीकी सदस्य से गठित करना संभव है। इसमें से पूर्वतर को उच्च अधीनस्थ न्यायपालिका, बकीलों की वृत्ति और केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार की विधिक सेवाओं से किए जाते हैं जब कि पश्चात्त्वर्ती सदस्य लेखाकारों की वृत्ति से अथवा सुसंगत सरकारी विभागों से लिए जाते हैं। इस समिश्रण से अब विधियों की विशेष जानकारी और जात तथा विशेषज्ञता बाला निकाय बनाना संभव हो जाता है। इसी प्रकार, प्रशासनिक अधिकरण में न्यायिक सदस्य न्यायाधीश, विधि व्यवसायी और विधिक व्यक्ति होते हैं जब कि प्रशासनिक सदस्य सेवा की उच्चतर पंक्ति से किए जाते हैं जिसमें यह आशा की जाती है कि उन्होंने सेवा नियमों और सेवा न्यायशास्त्र के प्रशासन में उन्हें प्रत्यक्ष ज्ञान और अनुभव है। यद्यपि इन परीक्षणों को भी सार्वभौम मान्यता नहीं मिली है और वृद्ध राय यह भी है कि ऐसे मामलों में न्यायालयों की अधिकारिता बापस न की जाए। दुर्भायिता, नावधिकरण विषयों के क्षेत्र में ऐसी कोई विशेषज्ञता प्राप्त निकाय नहीं है जिसके बारे में सोचा जा सके। कोई विचार कर सकता है कि इस क्षेत्र में विशेषज्ञ वकील अत्यल्प हैं और यह सभाव्यता नहीं है कि वे इस प्रकार की सेवा स्वीकार कर। वास्तव में अन्य अधिकरणों के मामलों में भी यह पाया जाता है कि विधि व्यवसाय करने वाले वकीलों की प्रतिक्रिया अत्यंत अनुत्साह दर्शने वाली है। अन्य कोई सेवा नहीं है जो इन न्यायालयों में कार्य करने के लिए इस क्षेत्र में विशेष ज्ञान या अनुभव रखने वाले व्यक्ति दे सके। वास्तव में परवर्त्त यही समिति ने भी केवल सुझाव दिया था कि नावधिकरण न्यायालय उसी प्रकार गठित किए जाएं जैसे उच्च न्यायालय किए जाते हैं। स्थिति की अपेक्षानुसार विधि की इस शाखा में विधि व्यवसाय करने वाले वकीलों की भर्ती यथासंभव उच्च न्यायालय की न्यायपीठों में की जाए न कि अनेक नावधिकरण न्यायालय स्थापित करने के लिए ऐसे कार्मिकों की खोज में लगा जाए। केवल नाम परिवर्तन को छोड़कर स्थिति में कोई वास्तविक सुधार नहीं होगा।

9.8. इसके अतिरिक्त विशेषज्ञ निकाय सुनिश्चित करने की आवश्यकता के जो ऐसी अपेक्षा है जैसा हमने ऊपर बताया है, जिसके यहां पूरी होने की संभाव्यता नहीं है, न्यायालयों (उच्च न्यायालयों) से मुकदमों की किसी विशेष शाखा को विनिच्छन करने के

लिए सोचा गया औचित्य यह है कि उच्च न्यायालयों में अत्यधिक मामले लित हैं और उनके समक्ष नियमित तथा लामान्य मुकदमों के निपटारे में उनकी ओर से विलेव होता है। व्यायोग की राय है कि ऐसा कोई आधार विद्यमान है इस पर विचार करने के लिए कोई आंकड़ा उपलब्ध नहीं कराया गया है। समिति ने जिन आंकड़ों¹¹ का उल्लेख किया है वे अपूर्ण हैं और वे केवल एक उच्च न्यायालय अर्थात् मुंबई उच्च न्यायालय¹² की स्थिति के प्रति निर्देश करते हैं। ये आंकड़े¹³ कुल लित मामलों से तुलना करने पर इनमें अमरत्वपूर्ण हो जाते हैं कि उनमें अति गंभीर आशंका पैदा नहीं होती जिससे उच्च न्यायालयों से अधिकारिता ले लेने का औचित्य हो। विलंब के प्रश्न पर हरे यह तथ्य ध्यान में रखना होगा कि सामुद्रिक मामलों में कुछ विलंब इस तथ्य की दृष्टि से अपरिहर्य है एक मुकदमे में हितबद्ध कई पक्षकार हों और अक्सर विदेशी राष्ट्रियों और कंपनियों को आदेशिका की तामील अपेक्षित होती है जो समय लेने वाली प्रक्रिया है। इसके अतिरिक्त समिति ने अपनी स्कीम के अंदर एक अपील न्यायालय का अधिदार रूप में सुझाव दिया है और यह शीघ्र निपटारे में सहायक नहीं होगा। सत्य यही प्रतीत होता है कि अभी तक नावधिकरण मामलों के शीघ्र निपटारे के बारे और साधन की युक्ति निकालने के लिए कोई यह शीघ्र निपटारे में सहायक नहीं होगा। इस प्रकार के मुकदमों के निपटारे पर विशेष प्रयोग से मामलों में शीघ्रता होगी और यह विवास करने का कोई कारण नहीं है कि विद्यमान कठिनाइयों पर विजय नहीं मिल सकती। वास्तव में समिति का यह सुझाव कि भारत में चार नावधिकरण न्यायालय¹⁴ पर्याप्त होंगे, स्पष्ट कारण देता है कि विधि के इस क्षेत्र में माता और विलंब की समस्या कोई बहुत गंभीर नहीं है।

9.9. यह सत्य है कि विधि की कुछ शाखाओं में विभिन्न उच्च न्यायालयों के बीच न्यायिक राय में मतभेद विधि के शीघ्र निपटारे के रास्ते में रोड़े अटकाते हैं और एक एकल न्याय का सूजन मतभेदों को दूर करने तथा बड़ी न्यायपीठ सूजन स्वयं उनका पता लगाने में सहायक हो सकती है। किन्तु यह आलोचना यूल आशंका पर आधारित हो सकती है। हमारे संविधान में न्याय प्रदान करने की जो प्रणाली है वह न्यायालयों के बीच परस्पर विरोधी राय होना निश्चित है और इससे बचा नहीं जा सकता। भारत एक विशाल देश है उसमें अनेक राज्य हैं तथा एक ही विधि तथा भिन्न-भिन्न विधि का संचालन करने वाले अठारह उच्च न्यायालय हैं, उनमें विभिन्न विषयों पर भिन्न-भिन्न विचार होना निश्चित है। यह संघीय राज्यों में निहित होता है और विलियनों में विभिन्नता होना निश्चित है। वल्कि इसारा विचार है कि विनिश्चयों को एकदम समाप्त करने का कोई रास्ता नहीं है। वल्कि इसारा विचार है कि विनिश्चयों की भिन्नता कुछ समय बांधनीय होती है क्योंकि उन प्रक्रिया से विधि का विकास हुआ है तथा यह विशेष रूप से नावधिकरण संबंधी अधिकारिता के मामले में भी होती जिसे हमारे देश में अभी विकसित होता है। इसके अतिरिक्त आयोग ऐसा नहीं सोचता कि इस समस्या में नावधिकरण मामलों में ऐसा कोई आयाम प्राप्त कर जिया है। यह तथ्य कि भारत शासन अधिकारियम, 1935 के पश्चात् 57 वर्ष व्यतीत होने पर भी कोई ऐसा मतभेद उत्पन्न हुआ प्रतीत नहीं होता है जो फेडरल न्यायालय या उच्चतम् न्यायालय तक ले जाने योग्य पाया जाता है इससे प्रतीत होता है कि आशंका व्यावहारिक नहीं सैद्धांतिक है। यह हो सकता है कि समय अतीत होने पर लित मामलों की संख्या और राय में परस्पर विरोध की समस्याएं अधिक बढ़ जाएं और उनको भुलजाने के लिए समुचित उपाय करने पड़ें। अत्योग का विचार है कि कम से कम इस समय ये इसने बड़े आकार की नहीं हो गई है कि इन मामलों में उच्च न्यायालयों की अधिकारिता छीन ली जाए।

9.10. इसके विपरीत ऐसे महबूर्ण कारण है कि क्यों उच्च न्यायालय की अधिकारिता बनाए रखी जाए। ग्रन्थम यह ऐसा अधिकार देता है जिसमें पिछली दशाब्दी में भी यह आवश्यक समझा गया कि इनकी अधिकारिता केवल उच्च न्यायालयों¹⁵ में ही निहित की जाए। दूसरा अभी इस क्षेत्र में न्यायशास्त्र विकसित किया जाना है, अन्य देशों की निर्णयन विषयों, सांगर की विविधता प्रया तथा अंतर्राष्ट्रीय अधिकारिय का नाम प्रबलित¹⁶

विधि का बल रखते हैं, निवंचन किए जाने की आवश्यकता है और इस उद्देश्य को प्राप्त करने में उच्च न्यायालय की प्राप्तिकता वे इकार नहीं किया जा सकता। तीसरे इस क्षेत्र में न्यायालय अधिकारिता की भुजाएं लड़ी और समावेश हैं। यह विषय के विभिन्न भागों के राष्ट्रियों को गिरफ्तार और संपत्ति को अब्रुद्ध कुर्क और विक्रय कर सकती है। जैसा समिति ने उल्लेख किया है यह अंतरराष्ट्रीय प्रकृति का है और इसके बारे में एक सुस्थापित न्यायिक निकाय द्वारा कार्यवाही की जानी चाहिए जिसकी देश के संविधान में तथा विदेशी राष्ट्रियों की दृष्टि में भी प्राप्तिकर हो वास्तव में नावधिकरण मामलों में उच्च न्यायालयों की अधिकारिता बनाए रखने के पक्ष में परमोच्च विचारणीय बात।

9.11. इस समय नावधिकरण मामलोंमें मामले के वित्त रहने का एक अन्य पहलू भी है जिस पर विचार किया जाना आवश्यक है। यह पहले उल्लेख किया जा चुका है कि मुंबई उच्च न्यायालय में लंबित भागों की संख्या से भयभीत होने का कोई कारण नहीं है। इसके अतिरिक्त इन बातों के प्रभाव को कम करने का एक सरल मार्ग है। इस समय केवल कुछ उच्च न्यायालय ही नावधिकरण मामलों में अधिकारिता का प्रयोग करते हैं। जैसा कि समिति ने स्वयं उल्लेख किया है कि न्यायालयों की नावधिकरण विषयक अधिकारिता केवल उस राज्यक्षेत्र तक विस्तृत नहीं की जानी चाहिए। जहां यह अवस्थित है किन्तु इसे भारत के संपूर्ण मध्यम तट तथा अंतरिक समुद्र तक विस्तृत किया जाना चाहिए। उसके आधार पर कि नावधिकरण विषयक अधिकारिता भारत के ऐसे भी उच्च न्यायालयों में जो मूल अधिकारिता रखते हैं, निहित की जानी है और यह कि अधिकारिता उस राज्यक्षेत्र तक विस्तृत नहीं है जहां उच्च न्यायालय अवस्थित है, एक उपवंश उच्चतम न्यायालय को इस बात में समर्थ बनाने के लिए जोड़ा जाना चाहिए कि उच्चतम न्यायालय स्वप्रेरणा से या आवेदन किए जाने पर देश के एक उच्च न्यायालय से नावधिकरण बाद को ऐसे कारणों के आधार पर जैसा वह पक्षकारों को मुनाफे के पश्चात उचित समझे अंतरित कर सकेगा। तीन उच्च न्यायालयों में विद्यमान मुकदमों को ही सभी भारतीय उच्च न्यायालयों में वितरित किए जा सकते हैं और उन्हें उससे इस समय से अधिक तीव्रता से निपटाया जा सकता है।

9.12. ऊपर की गई चर्चा में परवीन सिंह समिति में वचे मुद्दों पर पहले कार्यवाही की जा चुकी है और हम यह नहीं समझते हैं कि उस पर प्रत्येक मुद्दे के प्रति निर्देश से पृथक् रूप से विचार-विमर्श करने की आवश्यकता है अतः आयोग की राय है कि नावधिकरण अधिकारिता सभी उच्च न्यायालयों को जारी रखा जाना चाहिए।

9.13. उच्च न्यायालय विषयक अधिकारिता में कार्यवाही करेंगे जैसे कि कंपनी और वसीयती तथा अन्य मामलों में मूल पक्ष में करते हैं। सामान्यतः कंपनी और वसीयती मामलों में भूत अधिकारिता का प्रयोग उच्च न्यायालय के एकक न्यायाधीश द्वारा किया जाता है और उसके अद्वेष और निर्णय से अपील न्यायालय की खंड न्यायपीठ को की जाती है। यह नावधिकरण विषयक मामलों में भी सही स्थिति होनी चाहिए इससे परवीन सिंह समिति द्वारा बताए गए अपील मंच होने की आवश्यकता की पूर्ति हो जाएगी।

9.14. परवीन सिंह समिति ने एक आशंका व्यक्त की है कि शायद उच्च न्यायालयों में मामलों की अधिकता के कारण वह नावधिकरण मामलों में शीघ्रता से कार्यवाही करने में समर्थ न हो। जैसी कि पहले चर्चा की गई है निर्खेद उच्च न्यायालयों में मुकदमों का कुछ विस्फोट हो रहा है और मामलों के निपटारे में विलंब हो रहा है परन्तु केवल इसी आधार पर उच्च न्यायालयों को कम से कम इस समय नावधिकरण विषयक अधिकारिता से विशेष रूप से इस अधिकारिता में वकाया मामलों के संबंध में पूरे आंकड़े के अभाव में वंचित करने का अौचित्य नहीं है अतः समिति की राय है कि इस समय उच्च न्यायालयों को अन्य रूप से नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग करते रहना चाहिए। इदि बाद में यह पता चलता है कि कार्य की मात्रा अत्यंत अधिक है कि उच्च न्यायालय कार्य

पूरा करने में असमर्थ नहीं है तो केंद्रीय वरकार भारत के मूख्य न्यायमूर्ति और संबंधित उच्च न्यायालय से परामर्श करके सुझाव जिता के प्रधान सिविल न्यायालय को ऐसी नावधिकरण विषयक अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए सशक्त करने के लिए कदम उठा सकेगी जैसी उस समय अधिकारिता परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक समझी जाए। ऐसी किसी दृष्टि में नावधिकरण न्यायालय के अद्वेष के विषय तथ्यों और विधि दोनों पर अपील उच्च न्यायालय में की जा सकेगी। किन्तु इस समय हम इस रूप पर दृढ़ हैं कि उच्च न्यायालय को अन्य रूप से नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग करना चाहिए। प्रस्तावित प्राप्ति प्रधान में उपर्युक्त आधार पर आवश्यक उपर्युक्त किए गए हैं।

9.15. अभी तक हम सिविल मामलों में नावधिकरण विषयक अधिकारिता पर चर्चा कर रहे थे। नावधिकरण अपराधों में दाढ़िक अधिकारिता विभिन्न बातों द्वारा प्राप्ति होती है। भारतीय दंड संहिता^{१५} की धारा ४ भारत में जैसी सामान्य न्यायालय को उसकी सामान्य अधिकारिता में किसी भारतीय नाशिक द्वारा भारत के भीतर या बाहर किसी स्थान पर किए गए अपराध का विचारण करना संभव बनाती है। यह भारत में रजिस्ट्री-ट्रीकृत किसी पोत या बायुदान पर किए गए किसी अपराध के किए किसी व्यक्ति का अपराध के समय बायुदान की अवधिकरिता चाहे कुछ भी हो, भारत में अभियोजन और विचारण भी प्राधिकृत करती है। यह अधिकारिता इस मिलान पर आधारित है कि भारत में रजिस्ट्री-ट्रीकृत पोत विधि में भारतीय राज्यक्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाला संघर हुआ दीप है। इस सामान्य अधिकारिता के अतिरिक्त कुछ कानून भी "नावधिकरण अपराधों" के संबंध में भारतीय न्यायालयों को अधिकारिता प्रदान करते हैं। ऐडमिरेली आफेसेज (कोलोनियल) ऐक्ट, 1949^{१६} को जो क्रिटिश उपनिदेशों में समुद्र पर या जलमार्गों पर जहां ऐडमिरल को अधिकारिता है, किए गए अपराधों के विचार में अधिकारियों और न्यायालयों को समर्थ बनाता है, भारत को जैसे वह उस समय था ऐडमिरेली ज्युरिस्डिक्शन (इंडिया) ऐक्ट, 1869 द्वारा इस परंतु के साथ लागू किया गया था कि भारत में या भारत में लाया गया इन अपराधों का अधियुक्त कोई व्यक्ति यह दावा कर सकता है कि उसका विचारण प्रवृत्तनगत प्रेसिडेंसी के मुत्रिम कोई द्वारा ही किया जाए। यह उपर्युक्त भारत में प्रचलित बना रहा।

9.16. ऐसा प्रतीत होता है कि यूनाइटेड किंगडम का मर्चेंट शिपिंग ऐक्ट, 1894 ने भी ऐसे अपराधों को इंगलैंड तथा भारत में सामान्य दाढ़िक न्यायालयों द्वारा विचारणीय बनाया। उक्त अधिनियम की धारा 684 से 687 इस संबंध में सुसंगत हैं। किन्तु यहां उनके विस्तार से परिवर्णित करने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि अब मर्चेंट शिपिंग ऐक्ट, 1958^{१७} द्वारा निरसित कर दिया गया है। इस अधिनियमित में अधिनियम^{१८} के अधीन अपराधों में संबंधित कई उपर्युक्त हैं किन्तु उनमें से कोई सुर्वकथित ब्रिटिश ऐक्ट की धारा 684 से 687 के तत्स्थानी नहीं है।

9.17. यह स्पष्ट है कि ऐडमिरेली आफेसेज (कोलोनियल) ऐक्ट, 1949 और ऐडमिरेली ज्युरिस्डिक्शन (इंडिया) ऐक्ट, 1860 का लागू होना निरसित कर दिया जाना चाहिए। उन विधानों को उस समय अधिनियमित किया गया था जब भारत ब्रिटिश कळजे में था। उनका भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात तथा भारत के गणतंत्रात्मक संविधान के पश्चात भी लागू बने रहना भारत की प्रभुसत्ता के लिए असम्पानजनक है। अतः उन विधानों अधिनियमों को तत्काल प्रभाव में निरसित किया जाना है।

9.18. तथापि यह प्रश्न बार-बार उठता है कि क्या हमें भारत में या भारत की राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता से परे किसी स्थान में अपराध के शोधी व्यक्तियों की गिरफ्तारी, अभियोजन, विचारण और दंडादेश को सुकर बनाने के लिए ऐसे कुछ उपर्युक्त अधिनियमों के तत्स्थानी हों। हमने इस प्रश्न पर विचार किया है और हमारी राय है कि उपरोक्त उपर्युक्त अधिनियमों को अधिनियमित करना आवश्यक है क्योंकि

उनमें जिन स्थितियों की बात शोधी गई है वे हृषि प्रक्रिया संहिता की धारा 3 और 4 के उपर्योगों के अंतर्गत आ जाती है। इस प्रकार यह होगा कि विविध नावधिकरण के मामलों के बारे में जब तक ऐसे मामलों के बारे में कार्यवाही करने के लिए अन्य न्यायालयों को समर्थ बनाने वाले उपब्रह्म भी बनाए जाते हैं तक तक अन्य रूप से उच्च न्यायालयों द्वारा कार्यवाही की जाएगी किन्तु खुला समुद्र और नाव्य उत्तर क्षेत्र में किए गए दांडिक अपराधों पर देश की सामाजिक विधि के अधीन कार्यवाही की जाएगी।

पांच टिप्पणी — अध्याय 9

1. इसमें स्पष्टतः अधिक प्रदेश, उड़ीसा, गुजरात और केरल के तथा कुछ अन्य उच्च न्यायालय भी शामिल होंगे।
2. एनिलांको का वापसी, जे टी 1992 (2) एस सी पृ. 65।
3. संविधान का अनुच्छेद 323 के बारे ख देखिए। केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण और राज्यीय कर विभिन्न, जिसके गठन का प्रस्ताव विचारादीन है। यह दस्तावेज़ के उदाहरण हैं।
4. ऐसे न्यायालयों के गठन के लिए प्रारूप विवान भी समिति द्वारा तैयार किया गया है जो इस रिपोर्ट के साथ भी संलग्न है।
5. सम्पत्ति कुमार का शास्त्रीय, ए आई बार एस सी 386।
6. ए आई बार 1987 एस सी 386।
7. यह पता लगेगा कि समिति ने कोई विमेद स्तर में नहीं रखा था।
8. (1993) 4 एस सी सी 119।
9. जे टी 1994 (2) जरनल सेक्सन।
- 9क. एस हरिनाथ बनाम अंग्रेज प्रदेश राज्य, 1993 (3) अंग्रेज एल टी 471।
10. जे टी 1994 (2) जरनल सेक्सन।
11. उसकी रिपोर्ट के पैरा 13 में।
12. समिति का कथन है कि "वाणिज्यिक विधि के अधीन विभिन्न विविध न्यायालयों में काइल किए गए बादों की संभवा काफी बढ़ी है", किन्तु इस समय केवल तीन उच्च न्यायालयों में ही नावधिकरण विधायक अधिकारिता निर्हित होने के कारण यह स्पष्ट नहीं है कि यहां समिति क्या निर्दिष्ट करती है।
13. संचया और रकम, दोनों निर्दिष्ट हैं। खेत है कि और भी नवीनतम अकड़े उद्धरण: उपलब्ध नहीं है।
14. रिपोर्ट का पैरा 16।
15. अरंभ में ऐसा रहा होमा व्यौंकि पोत और पोतों के स्वामी यू के के ही के और वे अपने हितों की रक्षा करना चाहते थे। किन्तु, वैकल्पिक विचार से यह महसूस होगा कि यह भी बोधगम्य है।
16. उदाहरणार्थ, पहले उद्धृत 19 जे टी 1992 (2) एस सी 65 के पृष्ठ 105 पर कोट्ड़ थायन जस्टिस के संप्रेक्षण देखिए।
17. भारतीय दंड संहिता (1860 का अधिनियम सं. 45), भारा 4।
18. नावधिकरण अपराध (अधिनियमिक) अधिनियम, 1849 (12 और 13 विक्टोरिया, सी 96)।
19. नावधिकरण अधिकारिता (भारत) अधिनियम, 1860 (23 और 24 विक्टोरिया, सी 88) धारा।
20. वही धारा 2।
21. वाणिज्य पोत विवरण अधिनियम, 1958, धारा 461 (2) और उसकी अनुसूची का धारा 2।
22. वही धारा 436।

अध्याय 10

विभिन्न और विकासीरण

10.1. किसी राज्य में न्यायालयों वाली अधिकारिता उद्दृत के रूप में राज्य को स्वतंत्र संप्रभुत्वाद्वित का प्रकटीकरण है। राष्ट्र की अधिकारिता उद्दृत के भीतर अनिवार्य रूप से अनन्य और अस्त्विक है जब तक कि राज्य द्वारा रवर्द्ध ही लीभा अधिरोपित न की जाए। इसीलिए नावधिकरण अधिकारिता, न्यायिक संप्रभुता का एक अनिवार्य पक्ष है कि जिसका संविधान और विधियों के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा उसकी अधिकारिता के भीतर व्यक्तियों और वस्तुओं के संबंध में न्याय प्रशासन के लिए उच्च अधिकारिता नावधिकरण अधिकारिता का वावश्यक संघटक है और इसकी ऐसे पोतों पर जब वे विरपतार करने और निश्चल करने वाले उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर है, उपधारणा होती है।

10.2. उच्चतम न्यायालय ने हाल में यह उपर्योग किया है कि¹ किसी राज्य के जलक्षेत्र के भीतर सभी व्यक्ति और वस्तुएं जब तक कि दिनिदिष्टतः अंतर्राष्ट्रीय विधि² के नियमों द्वारा बदाई या विनियमित न की जाए, उस राज्य की अधिकारिता के भीतर है। किसी विदेशी जलयान को, जब वह तटवर्ती राज्य के जलक्षेत्र में है, विरपतार करने की शक्ति, सामुद्रिक मामले की बाबत जब कभी वह उत्पन्न होता है, एक प्रशासन अधिव्यवित है और राज्यक्षेत्रीय संप्रभुता का वावश्यक संघटक है। यह शक्ति अनेक अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों द्वारा मान्यताप्राप्त है। इन अभिसमयों में विभिन्न विधिक प्रणालियों से ली गई विधि के एक रूप नियम अंतर्विष्ट हैं। यद्यपि, उनमें से अनेक अभिसमयों का अभी भी भारत द्वारा अनुसमर्थन किया जाना है, फिर भी उनमें सामुद्रिक राज्यों की बहुताशत द्वारा मान्य विधि के फिरांत शामिल हैं और इसीलिए उन्हें हमारी सामाजिक विधि के भाग के रूप में माना जासकता है। इन अभिसमयों के अनुसमर्थन का अभाव स्पष्टतः किसी नीति की असहमति के कारण नहीं है जैसा कि अभिसमयों द्वारा अपनाए गए नियमों के सूचीकरण में, सक्रिय और सफल भारतीय अंगीदारी से स्पष्ट है, किन्तु संस्करण: अन्य परिस्थितियों जैसे कि सकार के संबद्ध विभागों के समन्वय द्वारा विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों के कार्यान्वयन के लिए समुचित और विशेषित तंत्र का अभाव, के कारण है। विधिक और तकनीकी विशेषज्ञों का ऐसा कोई विशेषित निकाय, राष्ट्रीय विधान द्वारा अंतर्राष्ट्रीय रूप से एक रूप नियमों का अंगीकरण सुकर बना सकता है। यह ठीक होता कि संबद्ध प्राविकारियों द्वारा विषय के इस पहलू पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए। संश्वरतः पर्याप्त प्राविकार, प्रास्त्रियता और स्वातंत्र्य से संपर्क भारत का विधि आयोग, जैसा कि उसे होना चाहिए, इस संबंध में भूत्यवान सहायता प्रदान कर सकता है। अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों के, जो व्यापार को सुकर बनाने के लिए आशयित हैं, अंगीकरण में विलंब, राष्ट्र की आर्थिक वृद्धि में बाधा डालती है।³

10.3. आयोग ने, इस रिपोर्ट में, पहले उन विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों/न्यायाचारों और करारों पर विस्तृत रूप में चर्चा की है जिसमें भारतीय सरकार एक पक्षकार रही है और वह सीमा भी उपर्योग की है जिस तक हमारे देश ने इन अभिसमयों, न्यायाचारों और करारों को कार्यान्वयित किया है। इसमें वे प्रक्रम भी उपर्योग की हैं जिन पर इन विभिन्न न्यायाचारों और अभिसमयों में से हर एक का कार्यान्वयन का मुद्दा है। पूर्वतर उद्धृत उच्चतम न्यायालय के संप्रक्षेत्र के आलोक में इस निमित्त अब जो भी किया जाना है, वह है स्थिति के पुनर्विलोकन की त्वरित कार्रवाई और यांगे विलंब किए जिन अभिसमयों, करारों और न्यायाचारों के

कार्यान्वयन में शीघ्रता। उच्चतम न्यायालय ने विभिन्न अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों के कार्यान्वयन के लिए समुचित विशेषित तंत्र की कमी पर टिप्पणी की है। इन अभिसमयों की तारीखों और पहले निर्विष्ट कार्यान्वयन के प्रक्रम के अनुकूलन से पता चलेगा कि सरकार ने इन विषयों में अनुवर्ती कार्रवाई को पर्याप्त अधिमान नहीं दिया है। हमें उस निस्पृहता और उदासीनता से अत्यधिक चिन्ता है जो इस निमित्त सरकार की कार्यालयों की विशेषता बन गई है तथा विनियोग करने की प्रक्रिया, अधिकारिता संबंधी विलम्बों और उलझनों में जकड़ गई है। हमने इस निमित्त अपने प्रत्यक्ष योगदान की संभावनाओं पर विचार किया है तथापि, हम इसी निश्चय पर पड़ूचे हैं कि अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों का अनुसर्वर्णन (या अन्यथा) प्राथमिक रूप से राज्य की नीति का विषय होगा और इस मुद्दे पर विनियोग अन्य देशों के दृष्टिकोण की बाबत अद्यतन जानकारी, उन प्रक्रियात्मक और अन्य कठिनाइयों, जो देश और व्यापार के सामने आ सकती है और तकनीकी डाटा के मूल्यांकन पर निर्भर करेगा, अतः स्वयं आयोग के लिए यह प्रयास करना शक्य या अवश्यक नहीं होगा। अतः हम यह सिफारिश करेंगे कि यह कार्य आरंभ करने के लिए सरकार को तत्काल एक पुनर्विलोकन समिति का गठन करना चाहिए। समिति में गृह मंत्रालय, विदेश भंडालय के विधि और संघि विभाग, जलभूतल परिवहन मंत्रालय और विधि मंत्रालय के विधि कार्य विभाग के अपर सचिव और प्राप्तियति के अधिकारी हीने चाहिए। समिति विस्तृत रूप में, उन अनेक अभिसमयों/न्यायाचारों और करारों में प्रत्येक की जिन्हें भारत द्वारा अनुसमर्थित किया गया है किन्तु अभी कार्यान्वयन किया जाना शेष है, विलंब के लिए कारणों की जांच कर सकेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि और विलंब किए बिना इन अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों को कार्यान्वयन करने के लिए शीघ्र कार्रवाई की जाए। समिति उन अन्य न्यायाचारों और अभिसमयों की बाबत नवीनतम स्थिति का भी पुनर्विलोकन कर सकेगी जो अन्य देशों द्वारा अपनाए गए हैं और अंतरराष्ट्रीय रूप से प्रवर्तन में हैं और जिन्हे भारतीय सरकार द्वारा निकट भविष्य में उनके अनुसर्वर्णन या अन्यथा के लिए सिफारिशों करेगी।

10.4. पहले इस बात की ओर संकेत किया जा चुका है कि नावधिकरण अधिकारिता, अपने उद्भव और विकास की विलक्षणताओं के बाबजूद वरिष्ठतम अभिलेख न्यायालय के रूप में उच्च न्यायालय में निहित अधिकारिता की समग्रता का एक भाग है और यह एक विशिष्ट और पृथक् अधिकारिता नहीं है जैसी कि एक समय न्यायालयों के एकीकरण के पूर्व इंग्लैंड में स्थिति थी। 1890 और 1891 के अधिनियमों में विनियोग रूप से भारतीय उच्च न्यायालयों पर नावधिकरण अधिकारिता, उनके असीमित अधिकारिता वाले न्यायालय होने के कारण प्रदान की थी। इन अधिसिद्धियों ने किसी पृथक् या विशिष्ट और पृथक् अधिकारिता का सूचन नहीं किया था अपितु, भारतीय उच्च न्यायालयों की अधिकारिता के भीतर नावधिकरण अधिकारियों के प्रयोग के लिए उनको भाल इंग्लिश हाईकोर्ट (जो उस न्यायालय के रूप में 1875 से एकीकृत और समेकित किया गया है) की स्थिति के तुल्य किया था। पहले निवेशित उच्च न्यायालयों के कुछ विनियोगों में अभिवक्ता विरोधी विचार स्वष्टि: गलत था। हमने इस बात का भी उल्लेख किया है कि नावधिकरण विषयों में उच्च न्यायालयों की अधिकारिता को वापस लेना और उसे परवीन सिह समिति की सिफारिश के अनुसार उस प्रयोजन के लिए गठित पृथक् न्यायालयों में विहित करना अनुच्छय या वांछनीय नहीं है। जैसा कि यह प्रस्तावित है कि नावधिकरण अधिकारिता का विस्तार देश में सभी नाव्यजल पर होना चाहिए, अतः केवल उन उच्च न्यायालयों तक ही, जिनके क्षेत्रों में तटीय पट्टी है, सीमित करना आवश्यक नहीं है। इसीलिए, यह सिफारिश की जाती है कि सभी भारतीय उच्च न्यायालयों में नावधिकरण अधिकारिता, उनकी मूल अधिकारिता के भाग रूप में इस उपबंध के साथ बनी रहनी चाहिए कि यदि अधिष्ठय में आवश्यकता उत्पन्न हो तो उस दशा में इस अधिकारिता का विस्तार अन्य प्रधान सिविल न्यायालयों पर करने की अनिवार्यता है। इस सिफारिश पर अध्याय 9 में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है।

10.5. आयोग ने इस बात की ओर पहले ही संकेत किया है कि यदि एक बार कोई विदेशी पोत, भारतीय जल में, उच्च न्यायालय के परिनियम द्वारा उसमें विहित या अभिलेख न्यायालय के रूप में उसमें अंतर्विहित किसी वाणिज्यिक दावों की बाबत उसके स्वामी के

बिल्ड, बाद हेतुक जाहे कहीं भी उत्पन्न हुआ हो, नावधिकरण अधिकारिता के प्रयोग में, आदेश द्वारा गिरपतार किया जाता है और जाहे वह पोत तत्पश्चात् स्वामी द्वारा प्रतिभूति देकर निर्मुक्त कराया जाता है या नहीं, किसी अन्य बात के ही समान स्वामियों के विरुद्ध कार्यवाही चालू रहेगी। संबद्ध उच्च न्यायालय के आदेश द्वारा जलयान की, जब वह भारतीय जल में है, गिरफ्तारी सक्षम न्यायालय की अधिकारिता को विचारण के लिए वैसे ही आकर्षित करती है जैसा किसी अन्य बाद की दशा में जैसे किसी स्वामी के विरुद्ध कार्रवाई और वादी द्वारा अभिशाप्त कोई छिकी, उसकी अधिकारिता के भीतर उपलब्ध स्वामी भी किसी संपत्ति के विरुद्ध, जिसमें जलयान की निर्मुक्ति के लिए स्वामी द्वारा दी गई प्रतिभूति भी है। निष्पादन योग्य होनी चाहिए। तथापि, जैसी कि पहले चर्चा की गई है, यह सिफारिश की जाती है कि यह प्रश्न कि क्या सर्वंदीय आव्यक्तिवंदी कोई कार्रवाई संस्थित की जानी चाहिए अथवा बनी रहनी चाहिए, संबद्ध उच्च न्यायालय पर छोड़ देनी चाहिए, जो हर मामले की गृणागृण के आधार पर जांच करेगा और न्याय के हित में समुचित कार्रवाई करेगा। इस पक्षपत्र और नावधिकरण विषयों में न्यायालय की अधिकारिता की प्रकृति और विस्तार संबंधी अन्य सिफारिशों पर अध्याय 8 में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है।

10.6. इस रिपोर्ट में पहले न्यायालयों में विलंब के प्रश्न की ओर निर्देश किया गया है जिस पर परवीन सिह समिति ने ध्यान केंद्रित किया है। इस पर पहले अध्याय 9 में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। विलंब की समस्या का मुकाबला करने के एक और प्रक्रम के रूप में हम नावधिकरण विषयों में कार्यवाही में माध्यस्थम् के लिए एक उपबंध के निगमन की सिफारिश करते हैं, जिसे हम समझते हैं कि सम्प्रति प्रत्येक स्थान पर प्रचलित इस परिवेश में प्रभावी होगी जिसमें सुकदमें बाजी के अधिमान में माध्यस्थम् द्वारा विवादों को मुलझाने की प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है। प्रस्तावित विधान की एक और विशिष्ट लक्षण, न्यायालय को, तकनीकी विषयों में असेसर की सहायता लेने के लिए समर्थ बनाने वाला सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 140 में अनुरूप उपबंध किया जाना है।

10.7. इस रिपोर्ट के पूर्ववर्ती अध्यायों में अंतर्विष्ट परिचर्चा के परिशेष्य में, वह भी सिफारिश की जाती है कि —

- (i) विषयों का व्यापक क्षेत्र जो अब निश्चित रूप से भारतीय नावधिकरण अधिकारिता के भीतर है, विशेष रूप से वे ऐसे तामुद्रिक अपराधों, संविदाओं, बपकूत्यों आदि में संबद्ध है, नावधिकरण न्यायालयों में भी रहनी चाहिए;
- (ii) भारतीय नावधिकरण न्यायालयों की अधिकारिता का विस्तार ऐसे सभी जल पर है जो इस बात पर ध्यान देते हैं कि वे ज्वार द्वारा प्रभावित हैं या भूबद्ध हैं या खूले हैं या लबणित हैं या स्वच्छ हैं नाव्य जल है;
- (iii) भारतीय नावधिकरण अधिकारिता का विस्तार खुले समुद्र पर सभी पोतों पर (शावरेन पोतों को छोड़कर) और खुले समुद्र पर किए गए छतिकारक हत्यों पर है, यदि कोई भारतीय तत्व अंतर्गत है।

10.8. उपर्युक्त सिफारिशों और सुझावों का समावेश करते हुए, एक प्रारूप विधान, रिपोर्ट के साथ संलग्न है। इस प्रारूप को तैयार करने में परवीन सिह समिति द्वारा प्रस्तावित प्रारूप भारतीय नावधिकरण अधिनियम में अंतर्विष्ट विभिन्न उपबंधों को और साथ ही, विषय पर ब्रिटिश परिनियम अर्थात् सुप्रीम कोर्ट ऐक्ट, 1981 के मुसंगत उपबंधों को सम्यक् रूप से ध्यान में रखा गया है। तथापि, यहां पर, प्रारूप विधान के विभिन्न उपबंधों पर विस्तृत रूप से परिचर्चा नहीं की जा रही है क्योंकि प्रारूप अधिनियमिति में, इस रिपोर्ट में विस्तृत रूप से पूर्वं चर्चित निष्कर्ष हो, समाप्तिष्ठ है।

एक सौ इष्टवाचकार्त्ती रिपोर्ट

10.9. इस बात की ओर संकेत करना आवश्यक है कि यदि प्रस्तावित प्रारूप विधान स्वीकार और अधिनियमित किया जाता है तो इस विषय पर कठिन विद्यमान विधान अनावश्यक हो जाएगे। अतः यह सिफारिश की जाती है कि निम्नलिखित अधिनियम विरपित किए जाने चाहिए:

1. ऐडमिरलटी अफेसेज (कोलोनियल) ऐक्ट, 1849।
2. ऐडमिरलटी ज्यूरिसडिक्शन (इंडिया) ऐक्ट, 1860।
3. ऐडमिरलटी कोर्ट ऐक्ट, 1861।
4. कोलोनियल कोट्स आफ ऐडमिरलटी (इंडिया) ऐक्ट, 1891।
5. मुम्बई, कलकत्ता और मद्रास उच्च न्यायालयों में संबंधित लेटर्स पेटेंट में नावधिकरण अधिकारिता से संबंध खंड।

प्रारूप विधान में इस आशय का एक उपबंध शामिल किया गया है।

10.10. तात्त्विकतः हमारी श्रमिकों मात्र दो हैं:

- (i) नावधिकरण अधिकारिता के प्रयोग करने वाले न्यायालयों और इस रिपोर्ट के उपबंध VII में अंतर्विष्ट उपरांधी के अनुसार उनकी अधिकारिता और प्रकृति से संबंधित विधान अधिनियमित किया जाना चाहिए; और
- (ii) अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों, न्याचारों और करारों के कार्यान्वयन की प्रक्रिया का पुनर्विलोकन करने और उसमें शीघ्रता करने के लिए उच्च विभागीय अधिकारियों की एक समिति गठित की जाए।

इन दोनों सुधारों को बहुत पहले किया जाना था और उच्चतम न्यायालय ने भी एलिजेक्शन के अन्दर में उनका अत्यावश्यकता पर जोर दिया है। हमें आशा है कि सरकार इस रिपोर्ट को शीघ्र अधिग्रान देगी और उसके अनुसरण में शीघ्र कार्रवाई करेगी।

(न्यायमूर्ति के ०५० लिङ्ग)

अध्यक्ष

(न्यायमूर्ति एवं रंगराजन)

सदस्य

(धी०५० वर्षी)

सदस्य (अंशकालिक)

(सौ० प्रभाकर राव)

सदस्य—सचिव

पाद टिप्पण—अध्याय 10

1. एलिजाबेथ का नाम्बला (1992) 2 जे टी (एस बी) 65
2. दैसे सावरेन और राजनीतिक उन्मुक्तियां, आवि
3. वही, पृ० 1

उपबंध 1]

सत्रधिकारण विषयक अध्याय (अधिनियमिक) अधिनियम, 1849

(12 और 13 विक्टोरिया, सौ० 95)

नावधिकरण विषयक अधिकारिता के भीतर किए गए अपरांधों के हर मेजेस्टी के उपनिवेशों में अभियोजन और विचारण के लिए उपायांद्र बनाने के लिए अधिनियम।

(1 अगस्त, 1849)

(निरसित)

(उद्देशिका—53 और 55 विक्टोरिया, सौ० 67 द्वारा निरसित)

1. उपनिवेशों में नावधिकरण विषयक अपरांधों का विचारण—यदि किसी उपनिवेश के भीतर कोई व्यक्ति समुद्र पर या किसी बदरगाह, नदी, निवेशिका या रक्षाल पर, जहां ऐडमिरल या ऐडमिरलों का किसी भी प्रकार का प्रधिकार या अधिकारिता है, हुए किसी राजद्वारा, समुद्री डकैती, महायात्रा, बूदमार, हत्ता, वडयांत्र या किसी भी प्रहृति या किसी के, वह चाहे जो हो, अन्य अपराध के किए जाने के लिए आरोपित किया जाएगा या यदि समुद्र पर या किसी ऐसे बदरगाह, नदी, निवेशिका या स्थान पर किसी ऐसे अपराध के किए जाने से आरोपित किया जाएगा तो उसे विचारण के लिए किसी उपनिवेश पर लाया जाएगा।

तब और प्रयेक ऐसे मामले में ऐसे उपनिवेश के सभी सजिस्टेटों, जस्टिस आफ पीस, लोक अभियोजकों, ज्युरियों, न्यायाधीशों, न्यायालयों, लोक अधिकारियों और अन्य व्यक्तियों को ऐसे अपरांधों की जांच करने, विचारण, सुनवाई अवधारण और न्यायनिर्णयन के लिए वही अधिकारिता और प्रधिकार होये और वे उसका प्रयोग करें तथा वे इसके द्वारा यथा पूर्वोंत इस प्रकार आरोपित ऐसे व्यक्ति को लाने के लिए ऐसी सभी कार्यवाहियां संस्थित करने तथा उन्हें चलाने के लिए और किसी ऐसे अपराध के लिए किसी ऐसे व्यक्ति के विचारण के लिए और उसके आनुषंगिक तथा परिणामिक जिससे वह यथा पूर्वोंत ऐसे उपनिवेश की विधि होता होना और होना चाहिए यदि ऐसा अपराध वहाँ होता और ऐसा व्यक्ति उन्हें कठिनय के लिए आरोपित किया गया होता जो किसी ऐसे उपनिवेश की सीमाओं के भीतर अवस्थित जल पर हुआ हो और ऐसे उपनिवेश के दालिक न्यायालयों की स्थानीय अधिकारिता की सीमाओं के भीतर है तो क्रमशः प्रयुक्त संस्थिति और चलाई गई होती, क्रमशः प्राप्तिकृत, सलकत और अपेक्षित है।

(क) प्रारंभिक शब्द 54 और 55 विक्टोरिया सौ० 67 द्वारा निरसित कर दिए गए थे।

2. (54 और 55 विक्टोरिया सौ० 67 द्वारा निरसित)

3. उपबंध आदि, जहां सूत्यु, किसी उपनिवेश में या समुद्र आदि पर होती है, समुद्र आदि पर पहुंचाई गई क्षतियों से अनुसरित होते हैं। जहां किसी व्यक्ति की समुद्र पर या किसी बदरगाह, निवेशिका या ऐसे स्थान पर जहां ऐडमिरल या ऐडमिरलों की जाकित, प्राप्तिकार या अधिकारिता है, किसी उपनिवेश में या ऐसे उपनिवेश से बाहर किसी स्थान पर ऐसे व्यक्ति को नीचतापूर्वक आवाल विष देने या उपहृति करने के कारण किसी आघात, विषपान या उपहृति से सूत्यु होती वहाँ किसी ऐसे मामले के संबंध में किया गया प्रत्येक अपराध चाहे वह हत्या या मानवबन्ध के तुल्य हो, या हत्या के तथ्य के पूर्व का उपसाधन हो या तथ्य हत्या अथवा सानकबन्ध के

बाद का हो, ऐसे उपनिवेश में उसी शैति से और अब बातों में व्यवहृत, जांच विचारित, अवधारित और दंडित किया जा सकेगा, मानो ऐसा अपराध पूर्वरूप से उस उपनिवेश में किया गया हो।

और यदि किसी उपनिवेश में यथापूर्वोक्त किसी ऐसे अपराध के लिए किसी व्यक्ति को किसी ऐसे व्यक्ति की मृत्यु की बाबत आरोपित किया जाएगा जो नीचतापूर्वक आधात पहुंचाने, विष देने या अन्यथा उपहृति के कारण, समृद्ध पर या किसी बन्दरगाह, नदी, निवेशिका में या ऐसे स्थान पर जहां एडमिरल या एडमिरलों की शक्ति, प्राधिकार या अधिकारिता है ऐसे आधात, विषपान या उपहृति से मृत्यु हुई होगी, वहां ऐसा अपराध इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए पूर्णरूप से समृद्ध पर किया गया अवधारित किया जाएगा।

(क) प्रारंभिक शब्द, 54 और 55 विक्टोरिया सी० 67 द्वारा निरसित।

4. (लागू न होने के कारण लोप किया गया)।

5. "उपनिवेश" का निर्वचन—इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए "उपनिवेश" शब्द से, यूनाइटेड किंगडम के भीतर के किसी द्वीप और मान, गर्नमे, जर्सी, एल्डरली और शाकं द्वीप तथा क्रमशः उनके पार्श्वस्थ भूमि को छोड़कर हर मैजस्टी का कोई द्वीप, बगान, उपनिवेशी अधिक्षेत्र किला या कारखाना अभिप्रेत है।

(क) प्रारंभिक शब्द, 54 और 55 विक्टोरिया, सी० 67 द्वारा निरसित किए गए।

(ख) और ब्रिटिश भारत शामिल है, देखिए 23 और 24 विक्टोरिया, सी० 88 एवं 122 क पूर्वोक्त।

(ग) शब्द 44 और 45 विक्टोरिया सी० 59 द्वारा निरसित।

6. 41 और 42 विक्टोरिया सी० 72 द्वारा निरसित।

नावधिकरण विषयक अधिकारिता (भारत) अधिनियम, 1860
(23 और 24, विक्टोरिया सी० 88)

भारत में हर मैजेस्टी के राज्यशेष पर उपनिवेशों में नावधिकरण अधिकारिता के लिए कठिन उपबंधों के विस्तार के लिए अधिनियम

[13 अगस्त, 1860]

(उद्देशिका वाचन 12 और 13 विक्टोरिया सी० 96 एवं 5 और अधिनियम शब्द, 35 और 56 विक्टोरिया सी० 67 द्वारा निरसित किए गए)।

1. मूल अधिनियम का जिटिश भारत और जिटिश बर्मा को लागू होना—नावधिकरण विषयक अपराध (औपनिवेशिक) अधिनियम, 1849 जैसे उपनिवेशों को लागू होता है वैसे ही ब्रिटिश भारत और बर्मा को लागू होगा।

(क) ए.ए.पी ओ 1937 द्वारा प्रतिस्थापित।

2. किसी प्रेसिडेन्सी के मुश्रीम कोई द्वारा विचारण किए जाने के लिए हक्कदार व्यक्तियों के मामले में कार्यकारी—परन्तु सदैव यह कि जहां भारत में किसी स्थान के भीतर कोई व्यक्ति किसी ऐसे अपराध के किए जाने के संबंध में, जिसकी बाबत उक्त अधिनियम द्वारा अधिकारिता दी गई है, आरोपित है या जहां ऐसे किसी अपराध के किए जाने से आरोपित कोई व्यक्ति उक्त अधिनियम के अधीन विचारण के लिए भारत में किसी स्थान पर लाया जाता है, यदि अपने विचारण के दौरान किसी समय उस स्थान पर जहां वह इस प्रकार आरोपित किया गया है, या विचारण के लिए लाया गया है, दाँड़िक अधिकारिता का प्रयोग करने वाले न्यायालय को यह प्रतीत करवा देता है कि यदि अपराध ऐसे स्थान पर किया गया होता तो उस दशा में उसका विचारण की तीन प्रेसिडेन्सियों में से किसी एक के मुश्रीम कोई द्वारा ही किया जा सका और तदनुसार ऐसे किसी मुश्रीम कोई द्वारा विचारण किए जाने का दावा करता है तो यथापूर्वोक्त दाँड़िक अधिकारिता का प्रयोग करने वाला न्यायालय तथ्य और दावा, ऐसे स्थान के गवर्नर या उसके, मुख्य स्थानीय प्राधिकारी को प्रमाणित करेगा और तदुपरि ऐसा गवर्नर या मुख्य स्थानीय प्राधिकारी आदेश देगा और आरोपित व्यक्ति को अभिरक्षा में ऐसी किसी प्रेसिडेन्सी में भिजवाएगा जिसे ऐसा गवर्नर ऐसी प्रेसिडेन्सी में सभी लोक अधिकारी और अन्य व्यक्ति ऐसे अपराध से आरोपित व्यक्ति के संबंध में वैसी ही अधिकारिता और प्राधिकार रखेंगे और कार्रवाई करेंगे भाने वह ऐसे मुश्रीम कोई की सामान्य अधिकारिता की सीमाओं के भीतर किया गया होता या मूल रूप से किए जाने पर आरोपित किया गया होता।

उपांत्ति III

एडमिरेल्टी कोर्ट एकड़, 1861
(24 और 25 विक्टॉरी सी. 10)

1861 ई०

नावधिकरण उच्च न्यायालय की अधिकारिता में बढ़ि करने तथा प्रथा में सुधार के लिए
अधिनियम

[17 मई, 1861]

(उद्देशिका)

1. संक्षिप्त नाम—इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सभी प्रयोजनों के लिए एडमिरेल्टी
कोर्ट एकड़, 1861 है।

2. पदों का निर्वचन—इस अधिनियम के निर्वचन में और सभी प्रयोजनों के लिए (जब तक संदर्भ या विषय से असंगत न हो) निम्नलिखित पदों का वही अर्थ होगा जो उनके
इसमें इसके पश्चात् दिए गए हैं, अर्थात्—

“पोते” के अन्तर्गत चर्चे में न नोचित होने वाले नौचालन में प्रयुक्त किसी प्रकार के
यान है;

“मामलों” के अन्तर्गत नावधिकरण न्यायालय में कोई मामला, वाद, अनुयोग या अन्य
कार्यवाही है।

* * * * *

16. जहां निष्पादन में लिए गए माल के लिए कोई दावा किया जाता हो वहां कार्य-
वाही—यदि नावधिकरण उच्च न्यायालय की किसी प्रक्रिया के अधीन निष्पादन में लिए गए
माल या जंगम वस्तु के लिए या उसके अभिग्रहण या उससे संबंधित किसी कार्य या
ऐसे किसी माल या जंगम वस्तु के आगम या मूर की बाबत भूस्वामी द्वारा किए गए के लिए
या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो ऐसा पक्षकार नहीं है जिसे आदेशिका जारी की गई है, कोई
दावा किया जाएगा तो उस न्यायालय का रजिस्ट्रार आदेशिका के निष्पादन के भारसावक अधिकारी के आवेदन पर, ऐसे अधिकारी के विरुद्ध कोई कार्रवाई किए जाने से पूर्व या पश्चात् ऐसे
आदेशिका जारी करने या दावा करने वाले पक्षकार दोनों को उच्च न्यायालय के समक्ष उपस्थित
होने का समन जारी कर सकता है और तब ऐसा कोई अनुयोग जो हर भजेस्टी के सुपीरियर
कोर्ट आफ रिकार्ड में या किसी स्थानीय या अवर न्यायालय में ऐसे दावा, अभिग्रहण, पूर्वोक्त
कार्य या बात की बाबत लाया गया होगा उस पर रोक लग जाएगी और वह न्यायालय जिसमें
ऐसा अनुयोग लाया गया होगा या उसका न्यायाधीश ऐसे समन के जारी किए जाने के तथा यह
कि माल और जंगम वस्तु के निष्पादन में इस प्रकार किए जाने के सबूत पर अनुयोग लाने
वाले पक्षकार पक्षकार को यह आदेश दे सकेगा कि वह उक्त नावधिकरण न्यायालय से समन
जारी किए जाने के पश्चात् अनुयोग पर सभी कार्यवाही का खर्च दे; और दावा पर अधिनियम
देगा और उनकी बाबत पक्षकारों के बीच और कार्यवाही के खर्च के बाबत ऐसे आदेश
देगा जो वह उचित समझे वह आदेश उसी प्रकार प्रवृत्त होगा मानो वह उच्च न्यायालय में
लाए गए किसी वाद के न्यायालय में होता है। जहां पूर्वोक्त रूप में ऐसा कोई दावा किया जाएगा
तो दावेदार आदेशिका के निष्पादन के भारसावक अधिकारी के पास दावा किए गए माल की
रकम या मूल्य जमा करेगा, मूल्य के बारे में विवाद की दशा में उसका मूल्यांकन द्वारा किया
जाएगा, यह मूल्य दावा पर न्यायाधीश के निर्णय का अनुपालन करने के लिए वह रकम
जो वह अधिकारी ऐसा निर्णय होने तक कभी बनाए रखने के लिए खर्च के रूप में प्रभारित
करने के लिए अनुचाल किया जा सकता है। अधिकारी द्वारा न्यायालय में संदर्भ तियां
और दावेदार के ऐसा करने में असफल होने की दशा में, वह अधिकारी, माल को बेच सकता है मानो उसके
लिए कोई दावा न किया गया हो और विक्रय का आगम न्यायालय के निर्णय का अनुपालन करने
के लिए न्यायालय में संदर्भ करेगा।

* * * * *

एक सौ इक्यावनवें रिपोर्ट

18. नावधिकरण न्यायालय में पक्षकार ट्रिनिटी मास्टर्स आदि द्वारा निरीक्षण
के लिए आदेश हेतु आदेश कर सकता है—नावधिकरण उच्च न्यायालय में किसी मामले में
कोई पक्षकार किसी पोत, या अन्य वैयक्तिक या पूर्व स्वामिक स्थायी संपत्ति के, जिसका निरीक्षण
मामले के विवादक के लिए तात्पर्य होगा, उक्त मामले के विचारण के लिए नियुक्त ट्रिनिटी
मास्टर्स या अन्य व्यक्तियों से निरीक्षण किए जाने के आदेश के लिए उक्त न्यायालय से आवेदन
करने को स्वतंत्र होगा और न्यायालय ऐसे आदेश में उससे उद्भूत होने वाले खर्च आदि को
ठीक समझे, आदेश कर सकेगा।

* * * * *

25. रजिस्ट्रार, उपरजिस्ट्रार, सहायक रजिस्ट्रार की वाक्तियाँ—नावधिकरण उच्च न्यायालय
का रजिस्ट्रार उच्च न्यायालय में किसी मामले या प्रकरण के संदर्भ में वैसी ही वाक्तियों का
प्रयोग कर सकेगा जैसी कि उक्त न्यायालय के न्यायाधीश का कोई प्रतिनिधि अपने चैम्बर
में बैठकर इससे पहले विधिपूर्वक करता होता, तथा नावधिकरण उक्त उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार
को इस अधिनियम द्वारा किसी अन्य अधिनियम द्वारा प्रदत्त या उसमें निहित सभी वाक्तियों
और प्राविकारों का प्रयोग उक्त न्यायालय के उप रजिस्ट्रार या सहायक रजिस्ट्रार द्वारा किया
जा सकेगा।

26. रजिस्ट्रार शब्द दिला सकता है—नावधिकरण उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार को
उक्त न्यायालय में लंबित किसी मामले या प्रकरण में शपथ दिलाने की शक्ति होगी;

* * * * *

28. परीक्षकों की अहंता—कोई अधिवक्ता (एडब्ल्यूकेट) बैरिस्टर-एट-ला, प्राक्टर, अठनी
या सालिस्टर नावधिकरण उच्च न्यायालय का परीक्षक नियुक्त किया जा सकता है।

* * * * *

33. नावधिकरण न्यायालय/अपील न्यायालय अदि के लिए जमानत दी जा सकती है—
नावधिकरण उच्च न्यायालय में किसी मामले में उक्त न्यायालय तथा अपील न्यायालय के
निर्णय के उत्तर में जमानत दी जा सकती है और उक्त नावधिकरण उच्च न्यायालय उसकी
गिरफ्तारी के अधीन की गई किसी संपत्ति का निर्वाचन तब तक रोके रख सकता है जब तक
जमानत न दी गई हो और किसी अपील में या नावधिकरण उच्च न्यायालय के आदेश में अपील
न्यायालय अपने आदेश के ऐसे प्रतिभूत या प्रतिभूतों के विरुद्ध जिन्होंने जमानत पक्त पर हस्ताक्षर
किए हैं इस प्रकार प्रवृत्त कर सकता है मानो जमानत अपील न्यायालय में दी गई है।

34. प्रतिवाद में सुनवाई—नावधिकरण उच्च न्यायालय नुकसानी के किसी मामले में
प्रतिवादी के आवेदन पर और उसी टक्कर की बाबत उसके द्वारा उठाई गई नुकसानी के
लिए प्रतिवाद संस्थित किए जाने पर यह निदेश दे सकता है कि मूल मामले और प्रति
मामले की सुनवाई एक ही समय की जाए और यदि मूल मामले में प्रतिवादी का पीत गिरफ्तार
किया गया है तो उसके द्वारा न्यायालय के उत्तर में प्रतिभूति दी गई है और प्रतिवाद
में बादी का पीत गिरफ्तार नहीं किया जा सकता और उसमें न्यायालय का उत्तर देने के लिए प्रति-
भूति नहीं दी गई है तब न्यायालय यदि उचित समझे सूल बाद में कार्यवाही तब तक लंबित कर
सकता है जब तक प्रतिवाद में निर्णय के उत्तर के लिए प्रतिभूति नहीं दी जाती है।

कालोनियल कोर्ट्स आक एडमिरलटी ऐक्ट, 1890
(53 और 54 विक्टॉरी 27)

हर मजेस्टी की डोमिनियनों में और यूनाइटेड किंगडम के बाहर अमेरिका नावधिकरण अधिकारिता के प्रयोग के संबंध में विधि का संशोधन करने के लिए अधिनियम

इस अधिनियम को कालोनियल कोर्ट्स आफ एडमिस्लटी कहा जाएगा।

2. (i) ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में ऐसा प्रत्येक न्यायालय, जिसे तत्समय इस अधिनियम के अनुसरण में नावधिकरण न्यायालय के रूप में घोषित किया जाता है, या जिसे, यदि कब्जाधीन क्षेत्र में ऐसी कोई घोषणा प्रवर्त्त नहीं है, तो उसमें उसे आरंभिक असीमित सिविल अधिकारिता है, इस अधिनियम में उल्लिखित अधिकारिता वाला नावधिकरण न्यायालय होगा और उस अधिकारिता के प्रयोजन के लिए उन सभी शक्तियों का प्रयोग कर सकेगा, जिन्हें वह अपनी अन्य सिविल अधिकारिता के प्रयोजन के लिए रखा है और ऐसे न्यायालय को इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के प्रतिनिर्देश में इस अधिनियम में कोई आफ एडमिरलटी कहा गया है। जहां ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में गवर्नर राज्यपाल एकमात्र न्यायिक प्राधिकारी है वहां इस कार्रवाई के प्रयोजन के लिए “न्यायालय” पद के अन्तर्गत ऐसा राज्यपाल भी है।

(ii) किसी कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी की अधिकारिता इस अधिनियम के उपर्युक्तों के अधीन रहते हुए, वैसे ही स्थानों, व्यक्तियों, विषयों और वस्तुओं पर होगी, जैसे इंग्लैण्ड में उच्च न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता, वह किसी कानून के कारण है या अन्यथा है, और कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी उसी रीति में और उसी पूर्ण विस्तार तक ऐसी अधिकारिता का प्रयोग कर सकेगा, जिस रीति और विस्तार तक इंग्लैण्ड में उच्च न्यायालय करता है और उतनी ही सावधानी बरतेगा जितनी वह न्यायालय अन्तरराष्ट्रीय विधि और राष्ट्रों के सीहाई के लिए बरतता है।

(iii) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उप-नावधिकरण न्यायालय का निर्देश करने वाली अधिनियमिति, जो इस्पीरियल पार्लियामेंट के अधिनियम में या किसी कालो-नियल विधि में अन्तर्विष्ट है, कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी को लागू होगी और उसे इस प्रकार पढ़ा जाएगा मानो क्रमशः “उप नावधिकरण न्यायालय” या ऐसे उन नावधिकरण न्यायालयों या उसके न्यायाधीश का निर्देश करने वाले अन्य पदों के स्थान पर उसमें “कालो-नियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी” पर रखा गया है और कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी को लदनसार अधिकारिता होगी :

प्रदूष इसके अन्तर्गत निम्नलिखित है :

(क) इंग्लैंड में उच्च न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता का निर्देश करने वाली इम्पीरियल पालियार्मेंट के किसी अधिनियम में कोई अधिनियमिति को जब वह किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में किसी कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी को लागू की गई है, इस प्रकार पढ़ा जाएगा भानो इंग्लैंड और वेल्स के स्थान पर उसमें उस कब्जाधीन क्षेत्र का नाम रखा गया है, और

(ख) कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी को नेवल प्राइज एक्ट, 1864, और स्लेव ट्रैड एक्ट, 1873 के अधीन और किसी व्यवसाय पर, उन अधिनियमों द्वारा उप नावधिकरण न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता होगी न कि उनके द्वारा अनन्य रूप से नावधिकरण उच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता होगी;

किन्तु जब तक तत्समय सम्यक् रूप में प्राधिकृत न किया गया हो, इस अधिनियम के कारण नेवल प्राइज एक्ट, 1864 के अधीन या प्राइज के संबंध में अस्वीकृति किसी अधिकारिता का प्रयोग नहीं करेगा; और

(ग) किसी कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी को इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के लिए किसी ऐसे व्यक्ति का विचारण करने या उसे दंड देने की अधिकारिता नहीं होगी, जो इंस्लैड की विधि के अनुसार अभ्यारोपण के बारे में दंडनीय है; और

(c) सुपरिषद् आदेश डारा किसी कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरलटी को समय-समय पर प्रदत्त अधिकारिता से, ऐसे न्यायालय को समुद्र में हर मजेस्टी की नौसेना से संबंधित विधियों और विनियमों के बारे में या हर मजेस्टी की नौसेना के अनु-शासन के लिए उपबंध करने वाले किसी अधिनियम पर विचार करने की गृहतर अधिकारिता नहीं होगी ।

(iv) जहाँ किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में कोई न्यायालय किसी देश के मुख्य भाग के बाहर या ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के वैसे ही अन्य भाग के बाहर उत्पन्न विषयों के बारे में इस अधिनियम के अधीन प्रयोक्तव्य किसी अधिकारिता का प्रयोग करता है, वहाँ वह अधिकारिता इस अधिनियम के अधीन प्रयोग की गई समझी जाएगी, न कि अन्यथा।

3. नावधिकरण अधिकारिता के द्वारे में उपनिवेशिक विधान मंडल की शक्ति—विटिष कष्टाधीन श्रेत का विधान मंडल किसी उपनिवेशिक विधि द्वारा—

(क) उस कब्जाधीन क्षेत्र में असीमित सिविल अधिकारिता, जहाँ आरम्भिक हो या अपीली, किसी न्यायालय को कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी घोषित कर सकेगा और इस अधिनियम के अधीन ऐसे न्यायालय द्वारा उसकी अधिकारिता के प्रयोग के लिए उपबंध कर सकेगा और ऐसी अधिकारिता के विस्तार को प्रादेशिक रूप में या अन्वया सीमित कर सकेगा, और

(ख) उस कब्जाधीन क्षेत्र में किसी कनिष्ठ या अधीनस्थ न्यायालय को ऐसी आंशिक या सीमित नावधिकरण अधिकारिता ऐसे विनियमों के अधीन और ऐसी अपील सहित (यदि कोई हो), जो रांक प्रतीत हो प्रदान कर सकेगा।

परन्तु ऐसी कोई उपनिवेशिक विधि कोई ऐसी अधिकारिता प्रदान नहीं करेगी जो इस अधिनियम द्वारा कालोनियल कोई आप एडमिरल्टी को प्रदान नहीं की गई है।

4. हर मजेस्टी की सम्मति के लिए उपनिवेशिक विधि का आरक्षण—इस अधिनियम के अनुसरण में बनायी गई प्रत्येक उपनिवेशिक विधि को, जो इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के बारे में ऐसे कब्जाधीन क्षेत्र के किसी न्यायालय की अधिकारिता या पद्धति या प्रक्रिया में प्रभाव डालती है या जो इस द्वारा में उल्लिखित यथापूर्वोक्त ऐसी किसी उपनिवेशिक विधि को परिवर्तित करती है, जो पहले ही पारित की जा चुकी है, जब तक कि वह सेंट्रोरी आफ स्टेट के माध्यम से हर मजेस्टी द्वारा पहले ही अनुमोदित न की गई हो, या तो उस पर हर मजेस्टी की इच्छा के संज्ञापन के लिए उसे आरक्षित रखा जाएगा या उसमें वह उपर्यंथ करने वाला निलम्बन खंड होगा कि ऐसी विधि तब तक प्रवृत्त नहीं होगी जब तक उस पर हर मजेस्टी की इच्छा उस विटिश कब्जाधीन क्षेत्र में सार्वजनिक रूप से संज्ञापित न की गई हो, जिस में वह पारित की गई है।

(यह बारा भारतीय विधि को लागू नहीं होगी)

5. स्थानीय नावधिकारण अपील—इस अधिनियम के अधीन न्यायालय के नियमों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम द्वारा न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता के प्रयोग में बिट्ठा कब्जाधीन स्थेत्र में उसके द्वारा दिए गए या किए गए निर्णय उसी प्रकार स्थानीय अधिकारिता के

वहि कोई है, अधीन-होंगे जैसे न्यायालय की सामान्य सिविल अधिकारिता के प्रयोग में उसके निर्णय होते हैं, और ऐसी अपील का संज्ञान करने वाले न्यायालय को उस प्रयोजन के लिए, कालोनियल कोट आफ एडमिरलटी को इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त सभी अधिकारिता होगी।

6. सपरिषद् क्वीन को नावधिकरण अपील—(1) इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के प्रयोग में किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के किसी न्यायालय के निर्णय से अपील, या तो जहां साधिकार स्थानीय अपील नहीं है या स्थानीय अपील पर विनिश्चय के पश्चात् अपील, सपरिषद् क्वीन की हर मजेस्टी को हो सकेगी।

(2) सपरिषद् क्वीन की हर मजेस्टी द्वारा किसी विशिष्ट मामले में विनिर्दिष्ट अन्यथा अनुज्ञात के सिवाय द्वारा के अधीन अपील विम्नलिखित मामलों में अनुज्ञात नहीं की जाएगी—

(क) किसी ऐसे निर्णय का नहीं है तब तक जब तक उस न्यायालय ने जिसके विनिश्चय अपील की गई है, ऐसी अपील के लिए इजाजत न दी हो, या

(ख) किसी ऐसे निर्णय से, जब तक कि अपील की अर्जी नियमों द्वारा विहित समय के भीतर न की गई हो, या यदि कोई समय विहित नहीं किया है तो उस निर्णय की तारीख से छह मास के भीतर न की गई हो या यदि अपील के लिए इजाजत दी गई है तो ऐसी इजाजत की तारीख से।

(3) इस अधिनियम के अधीन अपीलों के इस प्रयोजन के लिए सपरिषद् क्वीन की न्यायिक समिति को इस द्वारा के अधीन, नियमों के अधीन रहते हुए निर्णय करने और उन्हें प्रवृत्त करने, चाहे वे अन्तर्वर्ती हों या अंतिम, अवधान के लिए दण्ड देने, न्यायालय में धन के संदर्भ की अध्ययेका करने, या किसी ऐसे अन्य प्रयोजन के लिए, जो सपरिषद् हर मजेस्टी को हाई कोर्ट और कॉलिंग्टस की शक्तियों का अन्तरण करने वाले अधिनियम को पारित करने के पूर्व ऐसे न्यायालय द्वारा धारित थीं या जो इंसैड में उच्च न्यायालय द्वारा या उस न्यायालय द्वारा, जिससे ही विषयों के संबंध में अपील की गई है, जैसे इस अधिनियम के अधीन अपीलों की विषय-वस्तु गठित करते हैं, तत्समय धारित है।

(4) इस अधिनियम के अधीन अपीलों के बारे में पूर्वोक्त प्रयोजनों के लिए या अन्यथा सपरिषद् क्वीन या प्रिवि कौसिल की न्यायिक समिति के सभी आदेशों का हर मजेस्टी के डोमिनियनों के सम्पूर्ण पर, और उन सभी स्थानों में, जिनमें हर मजेस्टी की अधिकारिता है, पूर्ण प्रभाव होगा।

(5) यह द्वारा इस अधिनियम के अधीन से अन्यथा उत्पन्न सपरिषद् हर मजेस्टी या प्रिवि कौसिल की न्यायिक समिति के प्राधिकार के अतिरिक्त है न कि उसके अल्पीकरण में, और सपरिषद् हर मजेस्टी को अपीलों के संबंध में या सपरिषद् हर मजेस्टी या प्रिवि कौसिल की न्यायिक समिति की शक्तियों के संबंध में सभी अधिनियमितियां, चाहे वे नियम बनाने और आदेश करने के लिए हो या अन्यथा, सपरिषद् हर मजेस्टी द्वारा अन्यथा निर्देशित के सिवाय, इस अधिनियम के अधीन सपरिषद् हर मजेस्टी की अपीलों को विस्तारित होगी।

7. न्यायालय के नियम—(1) इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता, चाहे आरंभिक या अपीली हो, के प्रयोग में किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में किसी न्यायालय में प्रक्रिया और पद्धति (जिसके अंतर्गत फीस और खर्च भी है) को विनियमित करने के लिए न्यायालय के नियम, उसी प्राधिकारी द्वारा और उसी रीति में बनाए जा सकेंगे जैसे उक्त न्यायालय में अपनी साधारण सिविल अधिकारिता के प्रयोग में पद्धति-प्रक्रिया, फीस और खर्च से संबंधित नियम बनाए जाते हैं।

परन्तु इस द्वारा के अधीन नियम, इस अधिनियम द्वारा यथा उपबंधित के सिवाय, दास व्यापार से संबंधित विषयों को विस्तारित नहीं होंगे और (इस द्वारा द्वारा यथा उपबंधित के सिवाय) तब तक प्रवृत्त नहीं होंगे जब तक वे सपरिषद् हर मजेस्टी द्वारा अनुमोदित नहीं कर दिए जाते हैं, किन्तु प्रवृत्त होने पर उनका पूर्ण प्रभाव होगा मानो इस अधिनियम में अधिनियमित किए गए थे और उससे असंगत कोई भी अधिनियमिति, जहां तक वह इस प्रकार असंगत है, निरसित की जाएगी।

(2) सपरिषद् हर मजेस्टी के लिए इस द्वारा के अधीन बनाए गए नियमों का अनुमोदन करने में यह धोषणा करना विधिपूर्ण होगा कि व्यारे के या स्थानीय महत्व के किन्हीं विषयों के बारे में इस प्रकार बनाए गए नियम, इस द्वारा द्वारा अपेक्षित अनुमोदन के दिन उन्हें प्रतिसंहृष्ट, फेरफारित, या उनमें अधिबर्धन किया जा सकेगा।

(3) ऐसे नियम इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी अधिकारिता का पूर्ण न्यायालय द्वारा, या उसके किसी न्यायाधीश या किन्हीं न्यायाधीशों द्वारा प्रयोग करने के लिए उपबंध कर सकेंगे और किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुए, जहां न्यायालय की साधारण सिविल अधिकारिता किसी भी दशा में प्रयोग किसी एकल न्यायाधीश द्वारा प्रयोग की जा सकती है और इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता वैसी ही दशा में किसी एकल न्यायाधीश द्वारा प्रयोग की जा सकेगी।

8. नावधिकरण और क्राउन के अधिकार—(1) इस द्वारा के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम की कोई भी बात ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में नावधिकरण के या क्राउन के किन्हीं अधिकारों को परिवर्तित नहीं करेगी; और अधिनियम में ऐसे अधिकारों और समपहरणों के विशद् जब किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के किसी न्यायालय द्वारा निर्णय दिया जाता है, तब वे, किसी अन्य अधिनियम द्वारा अन्यथा उपबंधित को छोड़कर अधिसूचित किए जाएंगे, उनका हिसाब दिया जाएगा और उनके बारे में ऐसी रीति में कार्रवाई की जाएगी, जैसी खजाना समय-समय पर निर्देशित करे और प्रत्येक कालोनियल कोट आफ एडमिरलटी के और ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग करने वाले प्रत्येक अन्य न्यायालय के अधिकारी उक्त अधिकारों और समपहरणों के बारे में ऐसे निर्देशों का अनुपालन करें, जो खजाना समय-समय पर दिए जाएं।

(2) सपरिषद् क्वीन की हर मजेस्टी के लिए आदेश द्वारा यह निदेश देता विधिपूर्ण होगा कि किन्हीं गतों, अपवादों, सीमाओं और आदेश में अंतर्विष्ट विनियमों के अधीन रहते हुए, ऐसे उक्त अधिकार और तम्पहरण, जिनके विशद् ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में न्यायालय द्वारा निर्णय दिया गया है, उक्त कब्जाधीन क्षेत्र के राजस्व का या तो सदैव के लिए अथवा ऐसी सामित अवधि के लिए भाग होंगे या ऐसे विष्णुवत् के अधीन होंगे, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किया जाए।

(3) यदि और जब तक ऐसे अधिकारों या समपहरणों में से कोई इस अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम के कारण उक्त कब्जाधीन क्षेत्र के राजस्व का भाग रूप है, तो उसको तत्समय लागू किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कब्जाधीन क्षेत्र की सरकार द्वारा उन्हें निर्देशित किया जाएगा और खजाना को उसके संबंध में कोई शक्ति नहीं होगी।

9. उप नावधिकरण न्यायालय स्थापित करने की शक्ति—(1) हर मजेस्टी के लिए बैट सील के अधीन कमीशन द्वारा नावधिकरण को किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में उप नावधिकरण न्यायालय स्थापित करने के लिए साशक्त करना विधिपूर्ण होगा।

(2) ब्रिटिश कब्जाधीन में उप नावधिकरण न्यायालय की स्थापना पर नावधिकरण स्व-हस्ताक्षरित लेख द्वारा और नावधिकरण के कार्यालय की मुद्रा से ऐसे प्रूफ में, जो नावधिकरण निर्देशित करे, एक न्यायाधीश, रजिस्ट्रार मार्शल और न्यायालय के अन्य अधिकारी

नियुक्त कर सकेगा और किसी नियुक्ति को रद्द कर सकेगा; और ऐसे न्यायालय की किसी अन्य अधिकारिता के अतिरिक्त, (इस अधिनियम या हर मजेस्टी से उक्त कमीशन द्वारा अधिरोपित परिसीमाओं के अधीन रहते हुए), ऐसे न्यायालय में, उस ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के किन्हीं न्यायालयों को इस अधिनियम द्वारा या उसके कारण प्रदत्त सम्पूर्ण अधिकारिता या उसके किसी भाग को निहित कर सकेगा और ऐसे विधान को फेरफारित या विचारित कर सकेगा तथा जब ऐसा विधान प्रवृत्त हो, तो ऐसे अंतिम उल्लिखित न्यायालयों की इस प्रकार निहित अधिकारिता के प्रयोग करने की शक्ति को निर्वाचित कर सकेगा:

परन्तु—

(क) इस द्वारा की कोई वात, भारत में (..... या किसी अन्य ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में), जिसमें किसी अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए कोई प्रतिनिधित्व वाला विधान मंडल है, प्राइज, हर मजेस्टी की नौसेना, दास व्यापार, ऐसे मामलों, जिनके संबंध में दि फारेन एन्टिस्टमेंट एक्ट, 1870 या दि पैसिफिक आईलैंड्स प्रोटेक्शन एक्ट्स, 1872 और 1875 द्वारा कार्रवाई की जानी है, या ऐसे मामलों के संबंध में, जिनमें विदेशों के साथ संधियों या अभिसमयों के बारे में प्रश्न उत्पन्न होते हैं, या अन्तरराष्ट्रीय विधि से संबंधित कुछ प्रयोजन को छोड़कर, इस प्रकार स्थापित किसी उप नावधिकरण न्यायालय को प्राप्तिकृत नहीं करेगी; और

(ख) किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में किन्हीं उप नावधिकरण न्यायालयों के न्यायाधीश, रजिस्टर, मार्शल या अधिकारी के पद की किसी रिक्ति की दशा में इस कब्जाधीन क्षेत्र का गवर्नर तब तक रिक्ति को भरने हैं लिए उपयुक्त व्यक्ति नियुक्त कर सकेगा, जब तक नावधिकरण द्वारा उस पद के लिए नियुक्त नहीं की जाती है।

(3) इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के प्रयोग में ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्रों में न्यायालयों से सपरिषद् हर मजेस्टी को अपीलों के संबंध में इस अधिनियम के उपबंध उप नावधिकरण न्यायालयों से अपीलों को लागू होंगे, किन्तु उप नावधिकरण न्यायालयों से अपीलों के बारे में बनाए गए नियम और आदेश, ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्रों में उक्त न्यायालयों से अपीलों के संबंध बनाए गए नियमों से मिल हो सकेंगे।

(4) यदि हर मजेस्टी किसी समय ग्रेट सेल के अधीन कमीशन द्वारा ऐसे नियंत्रित करती है, तो नावधिकरण स्वहस्ताक्षरित लेख द्वारा और नावधिकरण के कार्यालय की मुद्रा द्वारा इस द्वारा के अधीन किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में स्थापित किसी उप नावधिकरण न्यायालय को समाप्त कर सकती और ऐसी समाप्ति पर उस कब्जाधीन क्षेत्र में किसी कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी की अधिकारिता, जो पहले निर्वाचित कर दी थी, पुनरीक्षित की जाएगी।

10. उप एडमिरल की नियुक्ति करने की शक्ति—इस अधिनियम की कोई वात किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र या उसमें किसी स्थान में और उसके लिए उप एडमिरल नियुक्त करने की किसी शक्ति को प्रशारित नहीं करेगी; और जब किसी किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र या उस में किसी स्थान में कोई औपचारिक नियुक्त उप एडमिरल नहीं है तो कब्जाधीन क्षेत्र का गवर्नर उसका पदेन उप एडमिरल होगा।

11. चैनल आइलैंड और अन्य कब्जाधीन क्षेत्र का अधिकार—(1) कालोनियल कोर्ट्स आफ एडमिरल्टी के संबंध में इस अधिनियम के उपबंध चैनल आइलैंड को लागू नहीं होंगे।

(2) सपरिषद् क्वीन के लिए किसी ब्रिटिश विधान मंडल के संबंध में आदेश द्वारा यह घोषित करना विधिपूर्ण होगा कि इस अधिनियम द्वारा कालोनियल कोर्ट्स आफ एडमिरल्टी को प्रदत्त अधिकारिता ऐसे कब्जाधीन क्षेत्र के किसी न्यायालय में निहित नहीं होगी या आदेश में विनियिष्ट आधिक या सीमित वित्तार तक ही निहित होगी।

12. जिवेसी अधिकारिता वाले व्यायालयों के अधिनियम का लागू होना—सपरिषद् क्वीन की हर मजेस्टी के लिए आदेश द्वारा यह नियम होगा कि यह अधिनियम, हर मजेस्टी के डोमिनियनों के बाहर किसी स्थान में, जो आदेश में नामित है, अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए हर मजेस्टी द्वारा स्थापित किसी न्यायालय को आदेश में अन्तर्विष्ट शर्तों, अपवादों और परिशीकारों (यदि कोई हों) के अधीन रहते हुए, लागू होगा, मानो वह न्यायालय एक कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी था और ऐसे लागू करने को प्रभावी करने के लिए उपबंध करना भी विधिपूर्ण होगा।

13. दास व्यापार के सम्बलों में प्रक्रिया के बारे में नियम—(1) सपरिषद् क्वीन की हर मजेस्टी के लिए आदेश द्वारा दास व्यापार के संबंधित विषयों में कालोनियल कोर्ट्स आफ एडमिरल्टी और उप नावधिकरण न्यायालयों की अपनी अधिकारिता के प्रयोग में अनुपालन की जाने वाली पद्धति और प्रक्रिया (जिसके अन्तर्गत फीस और खर्च भी है) और उन से प्राप्त विवरणियों, तथा स्लेच ट्रैड (ईस्ट अफ्रीकन कोर्ट्स) एक्ट्स, 1873 और 1879 द्वारा यथा परिभाषित ईस्ट अफ्रीकन कोर्ट्स में अनुपालन की जाने वाली पद्धति और प्रक्रिया (जिसके अन्तर्गत फीस और खर्च भी है) और उनसे प्राप्त विवरणियों के बारे में नियम बनाना विधिपूर्ण होगा।

(2) किसी कालोनियल कोर्ट आफ एडमिरल्टी या उप नावधिकरण न्यायालय में तस्समय प्रवृत्त न्यायालय के नियम, उसको छोड़कर, जब वे ऐसे सपरिषद् आदेश से असंयत हैं, जहां तक लागू हो, दास व्यापार से संबंधित विषयों में ऐसे न्यायालयों में कार्यवाहियों को विस्तारित होंगे।

(3) इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के प्रयोग में ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्रों में न्यायालयों से सपरिषद् हर मजेस्टी को अपीलों के बारे में इस अधिनियम के उपबंध, स्लेच ट्रैड (ईस्ट अफ्रीकन कोर्ट्स) एक्ट्स, 1873 और 1879 के अधीन अधिकारिता के प्रयोग में किसी ईस्ट अफ्रीकन कोर्ट के निर्णयों से की गई या की गई रामब्री गई अपीलों को आवश्यक उपांतरणों के साथ लागू होंगे।

14. सपरिषद् आदेश—सपरिषद् हर मजेस्टी के लिए इस अधिनियम द्वारा प्राप्तिकृत प्रयोजनों के लिए समय—समय पर आदेश करना और ऐसे आदेशों को विचारित और फेरफारित करना विधिपूर्ण होगा, और ऐसे प्रत्येक आदेश का, जब वह प्रवृत्त हो, इस प्रकार प्रभाव होगा मानो वह इस अधिनियम का भाग हो।

15. निर्वचन—इस अधिनियम के अन्वयन में, जब तक संझर्म से अन्यथा अपेक्षित न हो,—

किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के संबंध में “प्रतिनिधि विधान मंडल पद से ऐसा विधान मंडल अभियेत है जिसको एक ऐसा विधायी निकाय है जिसका कम से कम आधा ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के निवासियों द्वारा निर्वाचित किया गया हो।”

“असीमित सिविल अधिकारिता” पद से विवाधक की दिवय वस्तु के मृत्यु के बारे में या उस रकम के बारे में, जो दावा की जा सकती वस्तु की जा सकती, असीमित सिविल अधिकारिता अभियेत है।

“निर्णय” पद के अन्तर्गत कोई डिक्री, आदेश और दंडादेश है। “अपील” पद से कोई अपील, पुनः सुनवाई या पुनर्विलोकन अभियेत है; और “स्थानीय अपील” पद से सपरिषद् हर मजेस्टी से अवर किसी न्यायालय को कोई अपील अभियेत है।

“उपनिवेशिक विधि” पद से कोई ऐसा अधिनियम, अध्यादेश या अन्य विधि अभियेत है, जिसका किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में विधायी अधिनियमिति का बल है और जो इसीरियल पालियामेंट या सपरिषद् हर मजेस्टी से भिन्न ऐसी क्रांतिकारी द्वारा बनाया गया है, जो ऐसे कब्जाधीन क्षेत्र के लिए विधियां बनाने के लिए सक्षम है।

16. अधिनियम का प्रारंभ—(1) यह अधिनियम, इस अधिनियम में अन्यथा उप-
बंधित के सिवाय, प्रत्येक ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में अंगारह सौ इकाइयांचे की जुलाई के प्रथम
दिन को प्रवृत्त होगा :

परतु—

- (क) यह अधिनियम, इस अधिनियम की पहली अनुसूची में नामित ब्रिटिश कब्जाधीन
क्षेत्रों में से किसी भी तब तक प्रवृत्त नहीं होगा, जब तक हर मजेस्टी सपरिषद्
आदेश द्वारा इस प्रकार निर्देश न दे जाए और जब तक ऐसे आदेश में उस नियमित दिन
नामित न किया गया हो; और
- (ल) यदि ऊपर उल्लिखित किसी दिन के पूर्व किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में कालो-
नियम कोई आफ एडमिरल्टी के लिए न्यायालय के नियम सपरिषद् हर मजेस्टी
द्वारा अनुमोदित किए जा चुके हैं, तो यह अधिनियम उस कब्जाधीन क्षेत्र में
उसके गवर्नर द्वारा उद्घोषित किए जा सकेंगे और ऐसी उद्घोषणा, उस उद्घोषणा
में नामित दिन को अवृत्त होगी।

(2) उस दिन को, जिसको यह अधिनियम किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में प्रवृत्त
होगा उस ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र के बारे में उस अधिनियम का प्रारंभ समझा जाएगा।

(3) यदि किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में इस अधिनियम के प्रारंभ पर न्यायालय के
नियम इस अधिनियम के अनुसरण में हर मजेस्टी द्वारा अनुमोदित नहीं किए गए हैं तो वाहर
एडमिरल्टी कोर्टस ऐक्ट, 1961 के अधीन ऐसे प्रारंभ पर प्रवृत्त नियम, और भारत में संबंधित
उन नावधिकरण न्यायालयों को नियमित करने के लिए ऐसे प्रारंभ पर नियम, जिनके अंत-
र्गत हर मजेस्टी के पोतों की ओर से संस्थित कार्यवाहियों के प्रतिनिवेश से बनाए गए कोई
नियम भी हैं, जहां तक लागू हों, ऐसे कब्जाधीन क्षेत्र के कालोनियल कोई या नावधिकरण
न्यायालयों से, और इस अधिनियम के अधीन स्थापित किसी उप नावधिकरण न्यायालय में
प्रवृत्त होंगे और इस अधिनियम के अधीन न्यायालय के नियमों के रूप में उस कब्जाधीन
क्षेत्र में तदनुसार विभिन्न और फेरकारित किए जा सकेंगे; और ऐसे नियमों के अधीन संवेद
सभी कीस ऐसी रीत में ही जा सकेंगी, जैसी उपनिवेशिक न्यायालय निर्देशित करे, किन्तु इस
प्रकार कि ऐसी प्रत्येक कीस की रूपम, उतनी व्यापाराध्य निकटतम्, जितनी व्यवहार्य हो, ऐसे
अधिकारी या व्यक्ति को संबंधित की जाएगी जो, यदि यह अधिनियम पारित न किया गया होता
तो उसी प्रकार के कारबाह के संबंध में उसे प्राप्त करने के लिए हकदार होता। जहां तक
कोई ऐसे नियम लागू नहीं होते हैं या उनका निर्माण नहीं है, किसी न्यायालय द्वारा अपनी
साधारण सिविल अधिकारिता के प्रयोग के लिए न्यायालय के नियम, इस अधिनियम द्वारा
प्रदत्त अधिकारिता के उसी न्यायालय द्वारा प्रयोग करने के लिए नियमों के रूप में प्रभागी
होंगे।

(4) इस अधिनियम के पारित किए जाने के पश्चात् किसी भी समय कोई भी उपनिवेशिक
विधि पारित की जा सकेगी और कोई भी उपनावधिकरण न्यायालय स्थापित किया जा सकेगा
तथा ऐसे न्यायालय में निर्हित अधिकारिता, किन्तु ऐसी कोई विधि, स्थापित या विधान, इस
अधिनियम के प्रारंभ तक प्रभागी नहीं होगी।

17. उप नावधिकरण न्यायालयों की स्थापित—किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में
इस अधिनियम के प्रारंभ पर, किन्तु इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए उस कब्जा-
धीन क्षेत्र में प्रत्येक उन नावधिकरण न्यायालय निम्नलिखित के अधीन रहते हुए समाप्त कर
दिया जाएगा :

- (1) ऐसे उप नावधिकरण न्यायालय के सभी निर्णय निष्पादित किए जाएंगे और उसी
रीति में उनसे अपील की जा सकेगी भानो वह अधिनियम पारित नहीं किया गया
था और इस अधिनियम के प्रारंभ पर लम्बित किसी उप नावधिकरण से सभी

अपीलों की सुनवाई की जाएगी और उन्हें अवधारित किया जाएगा तथा उन पर
निर्णय व्यापाराध्य निकटतम् उसी रीति में निष्पादित किए जाएंगे मानो यह अधि-
नियम पारित नहीं हुआ था :

- (2) इस अधिनियम के प्रारंभ पर किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में उप नावधिकरण
न्यायालय में लम्बित सभी कार्यवाहियों, इस अधिनियम द्वारा किसी अधिनियमिति के
निरसन के होते हुए भी, न्यायालय के नियमों द्वारा निर्देशित रीति में कब्जाधीन
क्षेत्र के किसी कालोनियल कोई आफ एडमिरल्टी में, और, जहां तक ऐसा कोई
नियम विस्तारित नहीं होता है, व्यापाराध्य निकटतम् उसी रीति में, जारी रखी
जाएगी भानो वे ऐसे न्यायालय में भूलत् आरंभ हुई थी;
- (3) जहां कोई ऐसा पद ध्यारण करने काला कोई व्यक्ति, जो किसी ब्रिटिश कब्जाधीन
क्षेत्र में किसी ऐसे उप नावधिकरण न्यायालय में, वह व्यापारीश, रजिस्ट्रार
या मार्गल का अधिकारी कोई अन्य पद हो, ऐसे न्यायालय की समाप्ति के परिणामस्वरूप
कोई घटनीय हानि उठाता है, वहां ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र की सरकार ऐसे व्यक्ति
की शिकायत पर यह उपबंध करेगी कि ऐसा व्यक्ति वापनी हानि के बारे में वैसे
ही कर्तव्यों के जैसे ऐसी समाप्ति के पूर्व थे, वालन के, यदि उक्त सरकार द्वारा
अपेक्षित हो, अध्यधीन रहते हुए, भी समुचित प्रतिकर / वैतन की वृद्धि या पूँजी
राशि के रूप में या अन्यथा प्राप्त करेगा;
- (4) इस अधिनियम के प्रारंभ पर किसी उप नावधिकरण न्यायालय की या उससे
संबंधित सभी पुलकों, कागजपत्र, दस्तावेज, कार्यालय फर्नीचर और अन्य चीजें
कालोनियल कोई आफ एडमिरल्टी के मुख्य कार्यालय की परिदृश्य की जाएगी,
जो इर मजेस्टी से किन्हीं निदेशों के अधीन रहते हुए गवर्नर निर्दिष्ट करे;
- (5) जहां किसी ब्रिटिश कब्जाधीन क्षेत्र में इस अधिनियम के प्रारंभ पर कोई व्यक्ति
इस अधिनियम द्वारा समाप्त किए गए किसी उप नावधिकरण न्यायालय में अधि-
वक्ता के रूप में कार्य करने के लिए प्राधिकार द्वारा दिया गया है, वहां ऐसे प्राधि-
कार का इस अधिनियम के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उसी ब्रिटिश
कब्जाधीन क्षेत्र के प्रत्येक न्यायालय में वही प्रयोजन होगा भानो ऐसा न्यायालय
ऐसे प्राधिकार में उल्लिखित या उसमें निर्दिष्ट न्यायालय था।

उपांध V

प्रारूप

भारतीय नावधिकरण अधिनियम, 1987
(1987 का अधिनियम)

नावधिकरण विषयक अधिकारिता, पोतों और पोतों की गिरन्तारी और अन्य संपत्ति के संबंध में विधिक कार्यवाहियों से संबंधित और उससे संबद्ध प्रयोजनों के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के अड़तालीसवें वर्ष में संभद्ध द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो:—

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और लागू होना— (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम भारतीय नावधिकरण अधिनियम, 1987 है।

(2) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे।

(3) यह केन्द्रीय सरकार द्वारा समय-समय पर इस अधिनियम (नावधिकरण न्यायालय अधिनियम) के अधीन गठित नावधिकरण विषयक न्यायालय को लागू होता है।

2. परिचयांश—इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो:

(क) “नावधिकरण न्यायालय” से नावधिकरण न्यायालय के रूप में गठित कोई न्यायालय या भारत में कोई अन्य ऐसा उच्च न्यायालय, जिसमें नावधिकरण अधिकारिता निहित की गई है, अभिप्रेत है;

(ख) “पोत” के अंतर्गत मानव प्राणी की मुख्यतः (जल मार्ग द्वारा) सवारी के लिए या किसी संपत्ति के बहन के लिए बनाया गया कोई जलयान भी है किन्तु चलता जलयान या जलयानों का कोई ऐसा वर्ग जो केन्द्रीय सरकार द्वारा राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अधिसूचित किया जाए, जामिल नहीं है।

अध्याय 2

नावधिकरण अधिकारिता और पोतों से संबंधित अन्य उपांधन

3. न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता— (1) न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता निम्नवत् होगी, अर्थात् निम्नलिखित में से किसी प्रश्न या दावा की सुनवाई और उसके अवधारण की अधिकारिता :

- (क) किसी पोत के कब्जे या स्वामित्व का या उसमें शेयर के स्वामित्व का कोई दावा;
- (ख) किसी पोत के सहस्वामियों के बीच, उस पोत के कब्जे, नियोजन या उपार्जन के संबंध में उद्भूत कोई प्रश्न;
- (ग) किसी पोत या उसमें किसी शेयर के बंधक या उस पर भार की बाबत कोई दावा;

(घ) किसी पोत द्वारा किए गए नुकसान के लिए कोई दावा, जिसके अंतर्गत बाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम, के भाग 1ख के अधीन तेल प्रदूषण नुकसानी के लिए सिविल दायित्व भी है;

(इ) किसी पोत द्वारा प्राप्त किए गए नुकसान के लिए कोई दावा;

(ज) किसी पोत में या उसके परिवान या उपस्कर में किसी खराबी के परिणामस्वरूप या स्वामियों, चार्टरकर्ताओं या उन व्यक्तियों के जो पोत का कब्जा या नियंत्रण रखते हैं या उसके मास्टर या कर्मीदल के या किसी अन्य व्यक्ति के जिसके सदोष कृत्यों, उपेक्षाओं या वृत्तियों के लिए किसी पोत के स्वामी, चार्टरकर्ता या कब्जा अथवा नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति उत्तरदायी हैं, सदोष कृत्य, उपेक्षा या वृत्ति के परिणामस्वरूप, जो नौवहन या पोत के प्रबंध में, पोत पर या उसमें या उससे माल के लदान वहन या निर्वहन में या पोत पर या उसमें या उससे व्यक्तियों के आरोहण, परिवहन या अवरोहण में उपेक्षा या वृत्ति का कृत्य है, हुई प्राण की हानि या दैहिक क्षति के लिए कोई दावा;

(झ) किसी पोत पर वहन किए गए माल की हानि या नुकसान के लिए कोई दावा;

(ज) किसी पोत में माल के बहन या किसी पोत के उपयोग या भाड़ से संबंधित किसी करार से उद्भूत कोई दावा;

(झ) प्राण, जलयान, स्थौरा संपत्ति, उपस्कर या ध्वस्तपोत सामग्री के उद्धारण या उनके संरक्षण की प्रकृति का कोई दावा;

(ञ) किसी पोत या वायुयान की बाबत अनुरूपण की प्रकृति का कोई दावा;

(ट) किसी पोत या वायुयान की बाबत पत्तन न्यन की प्रकृति का कोई दावा;

(ठ) किसी पोत के प्रचालन या अनुरक्षण के लिए उसको आपूर्त माल, सामग्री, डंकर या अन्य आवश्यक वस्तुओं की बाबत कोई दावा;

(ड) किसी पोत के सन्निर्णय, मरम्मत या उपस्कर की, या भारतीय पत्तन अधिनियम, 1908 या महापत्त न्याय अधिनियम, 1963 के अधीन पत्तन प्राधिकारियों के किन्हीं प्रभारों या देयों की बाबत कोई दावा;

(ढ) किसी पोत मास्टर या कर्मीदल के सदस्य द्वारा मजदूरी के लिए कोई दावा या पोत के मास्टर या कर्मीदल के सदस्य द्वारा या उसकी बाबत ऐसी रकम या संपत्ति के लिए कोई दावा जो किसी विधि के उपबंधों के अधीन मजदूरी के रूप में और उस रीत में जिसमें मजदूरी वसूल की जा सकती है, वसूलनीय है;

(ण) मास्टर, शिपर, चार्टरकर्ता या अभिकर्ता द्वारा पोत मद्दे किए गए वितरण की बाबत कोई दावा;

(त) किसी ऐसे कृत्य से, जो साधारण औलत कृत्य है या जिसके ऐसा होने का दावा किया जाता है, उत्पन्न होने वाला कोई दावा;

(थ) पोतबन्ध से उत्पन्न होने वाला कोई दावा;

(द) किसी पोत को, उसके प्रचालन या अनुरक्षण के लिए प्रदत्त सेवाओं के लिए कोई दावा;

(घ) किसी पोत के या ऐसे माल के जो पोत में वहन किया जा रहा है या वहन किया गया है या जिसके बहन करने का प्रयास किया जा रहा है, समपहरण या जब्ती के लिए, या किसी पोत के या किसी ऐसे माल के अधिग्रहण के पश्चात् पुनर्स्थापन के लिए कोई दावा; और

(म) पोत स्वामियों या अन्य अधिकारी द्वारा संबंधित वाणिज्य पोत अविवाहन अधिनियम, 1958 (1958 का 44) भाग 10ब के अधीन पोत या अन्य संपत्ति के संबंध में उसके वायित्व की रकम के परिमाण के लिए कोई कार्रवाई और साथ ही कोई अन्य अधिकारिता जो एडमिरल्टी एड्ड, 1841 तथा 1961 और कोलोनियल कोट्स आफ (इंडिया) एक, 1891 के अधीन, नावधिकरण अधिकारिता युक्त न्यायालय होने के कारण या तो मुक्त हो, कलशत्ता और मद्रास स्थित होई कोट्स आफ एडमिरल्टी में निहित थी और मुक्त हो, कलशत्ता और मद्रास स्थित उच्च न्यायालयों में निहित कोई अन्य नावधिकरण अधिकारिता ।

(2) इह आरा की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन नावधिकरण न्यायालयों की अधिकारिता में किसी पोत के संबंध में पक्षकारों के बीच किसी बकाया और अनसुलझी रकम को सुलझाने की, और वह विदेश देशों की कि पोत या उसका कोई शेयर विक्री किया जाएगा, और ऐसा आवेदन करने की, जो न्यायालय द्वारा समझे, शक्ति सम्मिलित है ।

(3) इह आरा के पूर्ववर्ती उपबंध निम्नलिखित को लागू होते हैं—

- (क) सभी पोतों के संबंध में, जाहे वे भारतीय हों या नहीं, और जाहे रजिस्ट्रीकूट हों या नहीं, और उनके स्वामियों का विवास या अधिवास जाहे कही भी हो;
- (ख) सभी दावों के संबंध में, जाहे वे कही भी उत्पन्न होते हों (जिनके अंतर्गत, स्थोरा या उद्धारणा के पोत व्यक्ति की दशा में भूमि पर पाए गए स्थोरा या पोत व्यक्ति की बबत दावे भी हो); और
- (ग) जहां तक वे बधक या प्रभारों से संबद्ध हैं, सभी बधकों या प्रभारों को, जाहे वे रजिस्ट्रीकूट हों या नहीं, और जाहे विधिक या साम्यापूर्ण हों, जिसमें विदेशी विधि के अधीन सूजित बधक और प्रभार भी हैं ।

4. नावधिकरण अधिकारिता के प्रयोग की पद्धति—(1) इस अधिनियम की आरा 5 के उपबंधों के अधीन रहते हुए नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता का, सभी नामलों में, अनिवार्यी कार्रवाई द्वारा अवलंब लिया जा सकता है ।

(2) इस अधिनियम की आरा 3 की उपधारा (1) के पैरा (क) से (ग) तक और पैरा (घ) में उल्लिखित नामलों में, नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता का, प्रश्नगत पोत या संपत्ति के विषद्द उसकी गिरफ्तारी द्वारा संबंधित कार्रवाई द्वारा अवलंब लिया जा सकता है ।

(3) किसी ऐसे मामले में जिसमें किसी पोत या अन्य संपत्ति पर सामुद्रिक धारणा विकार या अन्य प्रभार है, जिसके अंतर्गत दावा की गई रकम के लिए बंकर भी है, न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता का प्रश्नगत उस पोत या संपत्ति के विषद्द, उसकी गिरफ्तारी द्वारा, संबंधित कार्रवाई द्वारा अवलंब लिया जा सकता है ।

(4) किसी ऐसे दावे की दशा में, जैसा कि इस अधिनियम की आरा 3 की उपधारा (1) के पैरा (घ), और पैरा (च) से पैरा (द) तक में उल्लिखित है, जो किसी देश के संबंध में उत्पन्न होने वाला दावा है, जहां वह व्यक्ति, जो व्यक्ति वंशी किसी कार्रवाई में दावे पर दायी होगा जब बाद हेतुक उत्पन्न हुआ था, पोत का स्वामी, या चार्टरकर्ता था या पोत उसके कब्जे या निर्वाचन में था (जहां दावा पोत पर सामुद्रिक धारणाधिकार को उत्पन्न करता हो या नहीं) प्रथमप्रीवेल निम्नलिखित के विषद्द गिरफ्तारी द्वारा, संबंधित कार्रवाई द्वारा विलंब अवलंब ले सकता ।

(क) उस पोत के, अदि उस समय जब कार्रवाई की जाती है, उस व्यक्ति द्वारा उसमें सभी शेयरों की बाबत फायदाप्रदरूप से स्वामित्वाधीन है या चार्टरकर्ता द्वारा, यदि वह सूत्र द्वारा किसी चार्टरकर्ता के अधीन है ।

या

(ख) कोई अन्य पोत जो उस समय जब कार्रवाई की जाती है, उस दौर उसके सभी शेयरों की बाबत फायदाप्रद रूप से स्वामित्वाधीन है ।

(5) इस आरा के पूर्ववर्ती उपबंधों में अंतिमिष्ट किसी दावे के होते हुए की नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता का ऐसे किसी दावे की दशा में, जो इस अधिनियम की वारा 3 की उपधारा (2) के खंड (ह) में उल्लिखित है, संबंधित कार्रवाई द्वारा तब तक अवलंब नहीं लिया जाएगा जब तक कि दावा पूर्ण हो या अलातः केवल मजदूरी ये संबंधित न हो ।

(6) जहां, नावधिकरण न्यायालय अपनी अधिकारिता के प्रयोग में किसी पोत या संपत्ति का विक्रय किए जाने का आवेदन करता है वहां नावधिकरण न्यायालय को, विक्रय के आवायों के हक के बारे में उत्पन्न होने वाले किसी प्रयत्न की सुविधाई करने और उसे अवधारित करने का अधिकार होगा ।

(7) इस आरा की उपधारा (4) के प्रयोजनों के लिए यह अवधारित करने में कि कोई अकिल किसी अनियन्त्रित वंशी कार्रवाई में किसी दावे पर दायी होगा, वह उपधारणा की जाएगी कि उस व्यक्ति का भारत के भीतर आपासिक निवास या कारबाह या स्थान है ।

(8) इस अधिनियम में अंतिमिष्ट किसी दावे के होते हुए भी किसी ऐसे पोत की दशा में, जो भारतीय पोत के रूप में भारत में रजिस्ट्रीकूट है, पोत की गिरफ्तारी द्वारा संबंधित कार्रवाई द्वारा नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता का तब तक अवलंब नहीं लिया जाएगा जब तक कि कार्रवाई किए जाने के लिए आशयित पोत के रजिस्ट्रीकूट स्वामियों या भास्टर को लिखित रूप में छह स्पष्ट दिनों की ऐसी सूचना तात्पील नहीं कर दी जाती है जिसमें बाद हेतुक, और दावे की गिरफ्तारी और गिरफ्तारी के लिए न्यायालय को आवेदन की तारीख तथा समय और गिरफ्तारी के बदले नावधिकरण न्यायालय के सम्बादानप्रद रूप में दावे के लिए प्रतिभूति की व्यवस्था करने के लिए स्वामियों या भास्टर को कहा जाएगा और जहां ऐसी प्रतिभूति की व्यवस्था कर दी जाती है वहां न्यायालय, पोत की गिरफ्तारी किए जिनका कार्रवाई करेगा और पोत की गिरफ्तारी का आवेदन केवल ऐसी प्रतिभूति की व्यवस्था करने में असफल होने की दशा में किया जाएगा ।

5. व्यक्ति वंशी अधिकारिता—(1) नावधिकरण न्यायालय, किसी ऐसे दावे को प्रत्यक्षित करने के लिए जिसको यह आरा लागू होती है, तब तक व्यक्ति वंशी कार्रवाई नहीं करेगा जब तक कि—

(क) प्रतिवादी, कार्रवाई के आरंभ पर बस्तुतः भारत में निवास नहीं करता है या कारबाह नहीं करता है या अवित्तगत रूप से अभिलाल के लिए कार्य नहीं करता है;

(ख) बादहेतुक, पूर्णतः या भागतः भारत में जिसमें भारत का अंतर्देशीय जल भी है, या भारत के घटनाओं के भीतर उत्पन्न नहीं होता है;

या

(ग) उसी घटना या घटनाओं की श्रृंखला से बादहेतुक उद्भूत नहीं होता है जिसकी कार्रवाई नावधिकरण न्यायालय में चल रही है या उसकी नावधिकरण न्यायालय में उत्पन्न की गई है और अवधारित किया रखा है ।

(2) नावधिकरण न्यायालय किसी ऐसे दावे को प्रवार्तित करने के लिए, जिसको यह आरा लागू होती है, तब तक व्यक्ति वंशी कार्रवाई नहीं करेगा जब तक कि उसी घटना या घटनाओं की श्रृंखलाओं की बाबत उसी प्रतिवादी के विषद्द भारत के बाहर किसी न्यायालय में बादी द्वारा कोई पहले संस्करण कार्रवाई हक नहीं गई है या अवधारित समाप्त नहीं हो गई है ।

एक सौ इक्यावन्दीं रिपोर्ट

(3) इस धारा के पूर्ववर्ती उपबंध प्रतिदावों को (जो उसी घटना या घटनाओं की शूखला से उत्पन्न कार्रवाहियों से प्रतिदावे नहीं हैं) वैमे ही लागू होंगे जैसे वे व्यक्ति वंधी कार्रवाई में लागू होते हैं किंतु मनो इस वादी और प्रतिदावी के प्रतिनिर्देश क्रमशः प्रतिदावा में वादी और प्रतिदावा में प्रतिवादी के प्रति निर्देश होंगे।

(4) इस धारा के पूर्ववर्ती उपबंध किसी कार्रवाई या प्रतिदावे को लागू नहीं होंगे यदि उसकी प्रतिवादी, नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता मान लेता है या मानने के लिए सहमत हो जाता है।

(5) इस धारा की उपधारा (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, नावधिकरण न्यायालय को किसी ऐसे दावे को, जिसको यह धारा लागू होती है, प्रवर्तित करने के लिए व्यक्ति वंधी कार्रवाई करने की अधिकारिता होती, जब कभी इस धारा की उपधारा (1) के खंड (क) से खंड (ज) तक की किसी शर्त का समाधान हो जाता है और अधिकारिता के बाहर प्रक्रिया की सक्षियत से संबंधित न्यायालय के नियम ऐसे उपबंध करेंगे जो नियम निर्माता प्राधिकारी को इस उपधारा के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए समुचित प्रतीत होते हैं।

(6) वे दावे जिनको यह धारा लागू होती है, दो पोतों के बीच टक्कर से या एक अथवा दो से अधिक अथवा अधिक पोतों में युक्ति भालन करने से अथवा करने का लोप करने से, या टक्कर विनियमों के भीतर एक अथवा दो से अधिक अथवा अधिक पोतों के पक्ष में अनुनुलत से उत्पन्न होने वाले नुकसान प्राण की हानि या दैहिक क्षति के दावे हैं।

(7) इस धारा में—

“अंतदौशीय जल” में भारत गणराज्य की राज्यक्षेत्रीय संप्रभुता के भीतर भारत के तट के पार्श्वस्थ समुद्र का कोई भाग सम्मिलित है; “पत्तन” से कोई पत्तन, बदरसाह नदी मुहाना, आथ्रथ, डाक, नहर या अन्य स्थान अभिप्रेत है जब तक कि कोई व्यक्ति या व्यक्ति निकाय अधिनियम द्वारा या उसके अधीन, उसमें प्रवेश करने वाले या उसमें सुविधाओं का उपयोग करने वाले पोतों की बाबत प्रश्नार लेने के लिए सक्षकत है; और “पत्तन की सीमाओं” से भारतीय पत्तन अधिनियम या महापत्तन न्याय अधिनियम द्वारा या उसके अधीन यथा नियत उसकी सीमाएं अभिप्रेत हैं; “टक्कर विनियम” से वापिय पोत परिवहन अधिनियम के अधीन बनाए गए विनियम और नियम तथा भारतीय पत्तन अधिनियम, 1963 के अधीन बनाए गए कोई नियम उपविधि और/या विनियम अभिप्रेत हैं।

6. मजदूरी के लिए अधिकारिता—(1) वागिज्य पोत परिवहन अधिनियम, 1958 की धारा 146 में अंतविष्ट उपबंधों के होते हुए भी नावधिकरण न्यायालय को मजदूरी के लिए कार्रवाई करने की अधिकारिता होगी।

(2) अधिनियम के इस भाग की कोई भी बात का अर्थ किसी पोत के, जो भारतीय पोत नहीं है, मास्टर या कर्मीदत्त के सदस्य द्वारा मजदूरी के लिए कोई कार्रवाई करने का न्यायालय की अधिकारिता को सीमित करने वाला नहीं लगाया जाएगा।

7. (1) जहां किसी व्यक्ति वंधी बाद में, नावधिकरण न्यायालय ने उस संपत्ति का जिस पर कार्रवाई की जानी है, विक्रय किए जाने का आदेश किया है, वहां कोई पक्ष की जिसने उक्त संपत्ति के विरुद्ध या उसके विक्रय आगम के विरुद्ध डिक्री या आदेश प्राप्त कर लिया है या प्राप्त कर लेता है, निर्णय अभिप्राप्त कर लेने के पश्चात् नावधिकरण न्यायालय को उक्त संपत्ति के विक्रय के आगमों के प्रति अधिमान क्रम अवधारित करने के लिए आदेशार्थ, प्रस्ताव की सूचना द्वारा आवेदन कर सकेगा।

(2) जहां किसी सर्वबंधी बाद में नावधिकरण न्यायालय उस संपत्ति का, जिस पर कार्रवाई की जानी है, विक्रय किए जाने का आदेश करता है, वहां वह और आदेश करेगा कि सूचना एक अन्तरराष्ट्रीय और एक राष्ट्रीय समाचार पत्र को, जैसा कि नावधिकरण

एक सौ इक्यावन्दीं रिपोर्ट

न्यायालय विनिर्दिष्ट करे, दो जाएं कि सर्वबंधी बाद में नावधिकरण न्यायालय के आदेश द्वारा संपत्ति का विक्रय कर दिया गया है, सूचना में बाद संख्या, बाद के पक्षकारों के नाम भी हो, और विक्रय के सकल आगम, उसकी रकम विनिर्दिष्ट करते हुए, नावधिकरण न्यायालय को संदर्भ कर दिए गए हैं और उक्त आगम के दावों का अधिमानक्रम, उक्त सूचना के प्रकाशन की तारीख से नव्वे दिन के अवसान के पश्चात् किया जाएगा, और संपत्ति के या उसके विक्रय आगम के प्रति दावा रखने वाले किसी पक्षकार को, न्यायालय को हस्तक्षेप की मंजूरी और नावधिकरण न्यायालय के समक्ष अपना दावा सावित करने के लिए आवेदन करना चाहिए और बाद फाइल करके उस अवधि के अवसान के पूर्व डिक्री अभिप्राप्त कर लेनी चाहिए।

(3) नावधिकरण न्यायालय उस पक्षकार के आवेदन पर नव्वे दिन की अवधि को बड़ा सकेगा जिसने उपधारा (2) में पथा उपबंधित न्यायालय के समक्ष या भारत में सक्षम अधिकारिता के किसी अन्य नावधिकरण न्यायालय के समक्ष, संपत्ति या विक्रय के आगम के विरुद्ध डिक्री अभिप्राप्त करने के लिए कार्रवाई संस्थित की है और न्यायालय उक्त बाद या उसमें फाइल की गई किसी अपील के निपटान के पश्चात् तीस दिन तक उक्त विक्रय आगम का वितरण आगे/या उसके अधिमान का अवधारण नहीं करेगा।

(4) ऊपर उपधारा (3) में जो कथित है उसके होने हुए भी नावधिकरण न्यायालय ऐसे पक्षकार के आवेदन पर अधिमान अवधारित कर सकेगा और विक्रय आगम में से संदाय का निदेश दे सकेगा जिसने उपत्ति का विक्रय आगम के विरुद्ध कोई डिक्री अभिप्राप्त कर ली है यदि नावधिकरण न्यायालय की यह राय है कि आवेदक का दावा किसी भी दावा में उस दावे के अधिमान में है जिसके लिए बाद संस्थित किया गया है, परन्तु यह कि नावधिकरण न्यायालय अधिमान के अवधारण और विक्रय आगम से वितरण का निदेश देने के पूर्व उन सभी पक्षकारों को सुनेगा जिन्होंने दावे किए हैं और 90 दिन की निहित अवधि के भीतर संपत्ति या विक्रय आगम के विरुद्ध बाद फाइल किए हैं।

8. पोत के विक्रय का अधिकार निहित करना—किसी नावधिकरण न्यायालय द्वारा पोत के विक्रय पर, पोत, सभी विलंबगमों से मुक्त जिसमें बंधक, प्रभार, आडमान और सामुद्रिक धारणाधिकार भी है, केता में निहित हो जाएगा।

9. नियम इनामों को इक्विटी—केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के अधीन नावधिकरण न्यायालयों के समक्ष लाए गए मामलों में प्रक्रिया और प्रथा के विनियमन के लिए नियम बना सकेगी।

10. सामुद्रिक धारणाधिकार—(1) सामुद्रिक धारणाधिकार किसी पोत या संपत्ति पर निम्नलिखित दावाओं में लागू होंगे और ऐसे सामुद्रिक धारणाधिकार के प्रोद्धवन की तारीख वह होगी जिसको वह सक्रिय हुई थी जिससे उक्त दावा उत्पन्न हुआ था:

- प्राण, पोत या संपत्ति के उद्धारण के लिए दावा;
- पोत के मास्टर या कर्मी दल के लदस्य को पोत पर उनके नियोजन की बाबत देय मजदूरी और अन्य राशि;
- पत्तन और नहर तथा अन्य जलमार्ग देय और पत्तन नयन देय;
- पोत के प्रचालन के प्रत्यक्ष संबंध में प्राण की हानि या दैहिक क्षति;
- साधारण औसत के अधिकार के लिए दावा;
- पोत पर वहन किए गए स्थोरा, आधान और यादी चीज़वस्तु को हुई हानि या तुकसानी से भिन्न, पोत के प्रचालन द्वारा कारित आरीरिक हानि या तुकसानी से उत्पन्न होने वाले अवकृत्य पर आधारित दावा।

(2) सामूहिक धारणाधिकार उप तारीख से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति पर पर्यवर्तित हो जाएगा जिस तारीख को संपत्ति पर धारणाधिकार लगा था, परन्तु परिसीमन विधि द्वारा अनवरुद्ध दावा, यदि कोई है, व्यक्तिबंधी कारंवाई द्वारा प्रवर्तित किया जा सकेगा। एक वर्ष की इस अधिकारी को आगे बढ़ाया जाएगा यदि धारणाधिकार का दावेदार, इसके नियंत्रण से परे कारणों से परे जलवान के विशुद्ध धारणाधिकार के प्रवर्तन की कारंवाई आरंभ करने में असमर्थ है।

11. दावों का अधिकारण क्रम—(1) नावधिकरण कारंवाई में पारस्परिक अधिकारण अवधारण के लिए दावा का क्रम निम्नवत् होगा:

(क) वह दावा जहाँ किसी पोत या अन्य संपत्ति पर जिसमें बंकर भी है, जिसके विशुद्ध कारंवाई की जानी है, सामूहिक धारणाधिकार है;

(ख) पोत या अन्य संपत्ति पर जिसके विशुद्ध कारंवाई की जानी है बन्धक और प्रभार;

(ग) सभी अन्य दावे।

(2) ऊपर खंड 1(क) में पारस्परिक दावों के मध्य अधिकारण निम्नवत् होगा:

(क) प्राण, पोत या संपत्ति का उद्धारण अन्य उद्धारणों पर अधिकारी होगा;

(ख) पोत के मास्टर या कमिल के सदस्यों को पोत में उनके नियोजन की बाबत बार भार मास से अनधिक की मजदूरी और देय अन्य राशियाँ;

(ग) पत्तन, नहर और अन्य जलमार्ग देय तथा उत्तन नयन देय;

(घ) पोत के मास्टर या कमिल के सदस्यों को ऊपर खंड के अधीन संदर्भ रकम हटाने के पश्चात् पोत पर उनके नियोजन की बाबत देय मजदूरी और अन्य राशियों का अतिरिक्त;

(ङ) (i) पोत के प्रचालन के प्रत्यक्ष संबंध में प्राण की हानि या दैहिक अति;

(ii) साधारण औसत के लिए अधिकारी का दावा;

(iii) किसी पोत पर वहन किए गए स्थोरा, आधान और यांत्री चीजेवस्त से भिन्न पोत के प्रचालन द्वारा कारित शारीरिक नुकसान या नुकसानी से उत्पन्न होने वाली अपकृत्य पर आधारित दावा।

(iv) पोत बन्ध।

(3) (i) अधिकारण क्रम में पूर्व दावा पश्चात्वर्ती दावे को अपर्याप्त करेगा।

(ii) यदि अधिकारण के प्रत्येक प्रवर्ग में एक से अधिक दावे हैं तो वे उसी क्रम में होंगे।

(iii) विभिन्न उद्धारणों के लिए दावे समय के प्रतिलिपि क्रम में होंगे जब उससे दावा उद्भूत हुआ हो।

(iv) उद्धारण, पत्तन, देय, मजदूरी और साधारण औसत की प्रकृति के दावे ऊपर खंड (घ) में उल्लिखित अन्य उन सभी दावों पर अधिकारी होंगे जो उस समय में पूर्व पोत से संबद्ध हैं जब उनके दावों को उत्पन्न करने वाले प्रचालन किए गए थे।

12. इस अधिनियम के अधीन सभी दावों में उस पोत की राष्ट्रिकता जिसके विशुद्ध कारंवाई की जानी है, बाद पत्र में बताई जाएगी और यदि पोत कोई विदेशी पोत है तो बाद की सूचना या संस्थित उस राज्य के काउसेल को दी जाएगी जिसका वह पोत है, यदि कोई उस नगर में निवास करता है जहाँ नावधिकरण न्यायालय अवस्थित है। ऐसी सूचना या कथन की तामिल का विवरण कि ऐसा कोई काउसेल उस नगर में उपस्थित नहीं है, पोत की गिरफ्तारी के लिए किसी आवेदन के समर्थन में शपथपत्र में दी जाएगी। यदि काउसेल पर कोई सूचना तामिल की जाती है तो उक्त सूचना की एक प्रति शपथपत्र के साथ संलग्न की जाएगी।

उद्धोषिका

यह पोतों और किसी पोत और अन्य संपत्ति की गिरफ्तारी से संबंधित नावधिकरण विषयक न्यायालयों का गठन करने और उससे संबंधित प्रयोजनों के लिए और उसके लिए विशेष न्यायालय स्थापित करने के लिए अधिनियम है।

भारत गणराज्य के अड्डोंमें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो:

1. इस अधिनियम का संभिलत नाम “भारतीय नावधिकरण विषयक न्यायालय अधिनियम, 1987” है।

2. यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केन्द्रीय सरकार अपने राजपत्र में अधिकृतता द्वारा नियत करे।

3. केन्द्रीय सरकार मुम्बई, कलकत्ता, बड़ादौर और कोचीन नगरों में नावधिकरण विषयक न्यायालयों का गठन और स्थापना करेगी और सभी नावधिकरण विषयक न्यायालयों को भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र में तथा भारत के संपूर्ण लक्ष्मण पर तथा जिसके अंतर्गत अंतर्वर्ती तथा राज्यक्षेत्रीय लक्ष्मण हैं, अधिकारिता होगी।

4. नावधिकरण विषयक न्यायालय की भारतीय नावधिकरण विषयक अधिनियम, 1987 के तथा तत्त्वान्य प्रदूत किसी अन्य विधि के अधीन उद्भूत होने वाले सभी विषयों के संबंध में अनन्य अधिकारिता का प्रयोग करने की अधिकारिता होगी।

5. नावधिकरण विषयक न्यायालय की अध्यक्षता एक न्यायाधीश करेगा और केन्द्रीय सरकार ऐसी संख्या में न्यायाधीशों का गठन करने के लिए संबंधित होंगी जो वह ऐसे दावों की, जो नावधिकरण विषयक अधिकारिता की परिधाना के अंतर्गत आते हैं सुनवाई के लिए धारा 3 में निर्दिष्ट प्रत्येक नगर के लिए उचित समझे और जैसा केन्द्रीय सरकार को इस प्रकार करना आवश्यक प्रतीत हो।

6. नावधिकरण न्यायाधीश की नियुक्ति ऐसे व्यक्तियों में से की जाएगी जिनके द्वासे ऐसी आवश्यक अहताएं होंगी जो किसी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए अपेक्षित है और भारत के राष्ट्रपति द्वारा उसी रीति में नियुक्त किया जाएगा जैसे किसी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है परन्तु ऐसी नियुक्ति के लिए भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श किया जाएगा।

7. नावधिकरण न्यायाधीश को लागू बेतन, परिलक्षित और नयाचार वही होंगे जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के होते हैं।

8. केन्द्रीय सरकार मुम्बई में एक नावधिकरण अपील न्यायालय का गठन करेगी और अपील न्यायालय की अध्यक्षता दो न्यायाधीश करेंगे। जो नावधिकरण न्यायालयों के नियंत्रण के विशुद्ध अपीलों की सुनवाई करेंगे।

9. नावधिकरण न्यायालय भारत के उच्चतम न्यायालय के साधारण अधीक्षण के अध्यक्षीय होंगे।

10. इस अधिनियम में के उपबंधों का इसके प्रवर्तन में आने से पूर्व उद्भूत होने वाले बाद हेतुक की बाबत प्रभाव होगा और नावधिकरण विधयक अधिकारिता का प्रयोग करने वाले किसी उच्च न्यायालय में लंबित सभी कार्यवाहियों इस अधिनियम के अधीन गठित निकटसम न्यायालय को स्थानांतरित हो जाएंगी और यह न्यायालय सभी मामलों का निपटारा उस समय प्रवृत्त विधि के उपबंधों के अनुसार करेगा जब बाद हेतुक उद्भूत हुआ ।

11. नावधिकरण न्यायालय के समक्ष बाद एक बाद पक्का द्वारा प्रारंभ होगा जो विविध प्रक्रिया संहिता के अनुसार हस्ताक्षित और सत्यापित होगा ।

12. केंद्रीय सरकार नावधिकरण न्यायालयों में पद्धति और प्रक्रिया का विनियम करने के लिए या किसी अन्य विषय के लिए जिसके अंतर्गत इस अधिनियम के अधीन न्यायालय फीस, पंडित और अन्य प्रभारों का संदाय है, नियम और विनियम बना सकेगी ।

13. नावधिकरण न्यायालय आदेश या नियंत्रण से व्यक्ति व्यक्ति नावधिकरण अपील न्यायालय को अपील कर सकता है ।

14. तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में जो कुछ कथित है उसके होते हुए भी नावधिकरण अपील न्यायालय के किसी आदेश के विरुद्ध कोई अपील या पुनरोक्तण किसी न्यायालय को नहीं होगा परन्तु भारत के संविधान के अनुच्छेद 132 के अधीन भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा विशेष इजाजत मंजूर करने के अधीन रहते हुए विधि अधिकारिता या राष्ट्रीय अधिवा अंतरराष्ट्रीय महत्व के किसी अन्य प्रश्न पर कोई अपील भारत के उच्चतम न्यायालय को की जा सकेगी ।

15. विविध प्रक्रिया संहिता के उपर्युक्त नावधिकरण न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियों को लागू होंगे जहां तक वे इसके या नावधिकरण अधिनियम, 1987 या इन अधिनियमों के अधीन बनाए गए विषयों में असंगत या उसके प्रतिकूल नहीं हैं ।

16. केंद्रीय सरकार नावधिकरण न्यायालयों और अपील न्यायालयों में निर्धारित के रूप में सहायता करने के लिए मुम्बई, मद्रास, कलकत्ता और कोचीन नगरों में प्रत्येक नावधिकरण न्यायालय के लिए राजपत्र में निर्धारिकों की एक सूची प्रकाशित करेगी जिसमें ऐसे 10 व्यक्तियों के नाम होंगे जिन्हें नावधिकरण और समृद्धि मामलों में विशेष अंहताएं और अनुभव हैं ।

17. नावधिकरण न्यायालय के समझ किसी कार्यवाही में जाहे उसके मूल या अपील या अधिकारिता में हो न्यायालय बाद के किसी पक्षकार के अनुरोध पर उसकी सहायता के लिए उसके निर्धारिकों को ऐसी रीति में जो वह निदेश दे या जो नियमों द्वारा विहित किया जाए निर्धारिकों की सूची में से दो सक्षम निर्धारिकों को आहूत करेगी और ऐसे निर्धारिक तदनुसार न्यायालय में उपस्थित होकर सहायता करेंगे । ऐसा प्रत्येक निर्धारिक अपनी उपस्थिति के लिए ऐसी फीस जो नियमों द्वारा विहित की जाए, ऐसे पक्षकार द्वारा प्राप्त करेगा जिसे बंदाय करने के लिए न्यायालय निर्देश दे ।

18. निर्धारिकों की नियुक्ति किसी पक्षकार को विशेषज्ञ साक्षी की परीक्षा करने से अंजित नहीं करेगी ।

19. मुम्बई, मद्रास और कलकत्ता के न्यायालयों के लिए तारीख 28 दिसंबर, 1985 के बेट्स पेटेट के छंड 32 के उपर्युक्त इसके द्वारा निरसित किए जाते हैं ।

मूल परिवहन संस्थान
(पोत परिवहन छंड)

भू. एस. आर० १००११/१०/८६-एम ६

मुद्रित
३ दिसंबर, १९८६

देवा में

महानिदेशक, पोत परिवहन,
"जहाज भवन"
बालचन्द हीराचन्द मार्ग
मुम्बई-४०० ००१

विषय : समृद्धि विधि और नावधिकरण अधिकारिता के पुनर्विशेषक के अंतर्गत में संविति की स्थापना ।

महोदय,

भारत की समृद्धि विधि और नावधिकरण अधिकारिता को अद्यतन करने और उच्चों की आवश्यकताओं के प्रति अधिक उत्तरदायी बनाने तथा विवादों के दक्ष और शीघ्र निपटारे के लिए इसे अधिक साधक बनाने के लिए साधारणतः पोत परिवहन उद्योग, जिसके अंतर्गत पोत परिवहन अधिकारी, समृद्धि यात्री समृद्धाय, पोतवाणिक, आदि हैं, द्वारा अभिव्यक्त आवश्यकता को देखते हुए, उद्योगस्ताकरकर्ता को यह कहने का निवेश हुआ है कि सरकार ने इस प्रयोजन के लिए एक समिति निम्नलिखित रचना वाली स्थापित करने का विनिश्चय किया है :

- | | |
|---|------------|
| 1. श्री प्रवीण सिंह
महानिदेशक, पोत परिवहन | अध्यक्ष |
| 2. श्री केंसी० सिद्धवा, वरिष्ठ
केंद्रीय सरकार अधिवक्ता, विधि
न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय,
मुम्बई | प्रबल्य |
| 3. डा० एस०एन० संकलेचा,
आई०एच०एस०ए०, मुम्बई | अध्यक्ष |
| 4. श्री एच०एन० फोतेदार
प्रबंध निदेशक, भारतीय पत्तन
एसोसिएशन, नई दिल्ली | संस्था |
| 5. श्री एस० वेंकटेश्वरन, अधिवक्ता,
उच्च न्यायालय, मुम्बई | संस्था |
| 6. डा० लियो बर्नेस, महा सचिव
एन य० एस आ०, मुम्बई | संवैध |
| 7. श्री वी एस भैसनिया,
मुल्ला एंड मुल्ला एंड कैरी,
बंटू एंड केरो, मुम्बई | संस्था |
| 8. श्री सी एम शेटी,
उप महानिदेशक, पोत परिवहन, मुम्बई | सदस्य-सचिव |

- (क) "मास्टर" का वहीं अर्थ है जो वाणिज्य पौत्र परिवहन अधिनियम, 1958 (1958 का अधिनियम 44) में है और उसके अंतर्गत (नाविक के सिवाय) ऐसा प्रत्येक व्यक्ति है जो किसी पोत की कमान या प्रभार रखता है।
- (ख) "पत्तन" में कोई पत्तन, बंदरगाह, नदी, नदीमुख बंदरगाह (आश्रय), डाक, नहर या ऐसा अन्य स्थान अभिप्रेत है जहां तक कोई व्यक्ति या व्यक्ति निकाय किसी अधिनियम के अधीन इसमें प्रवेश करने या उसमें सुविधा का उपयोग करने वाले पोत की बाबत प्रभार रखने के लिए संशक्त किया जाता है; ("पत्तन की सीमा" से भारतीय पत्तन अधिनियम, 1908 (1908 का अधिनियम 15) वा महापत्तन न्यास अधिनियम, 1963 (1963 का अधिनियम 38) द्वारा या उसके अधीन नियत उसकी सीमा अभिप्रेत है।
- (ज) "पोत" के अंतर्गत मानव या संपत्ति का (मुख्य रूप से जलमार्ग से) प्रवहण के लिए कोई प्राय है किसे अंतर्गत होकर क्राफ्ट (समुद्री विभान) या ऐसे वर्ग का बात नहीं है जो केन्द्रीय सरकार उस नियमित राजपत्र में अधिसूचित करे।
- (झ) "अनुकर्षण" और "पायलट कार्य" (पत्तन न्यास) से किसी वायुयान के संबंध में अनुकर्षण और पत्तन न्यास अभिप्रेत है जब वायुयान जलवाहित हो।

अध्याय 2

न्यायालयों की अधिकारिता

3. न्यायालय सिविल अधिकारिता का प्रयोग करेंगे—(1) उपधारा (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए इस अधिनियम के अधीन सभी दावों की बाबत सिविल अधिकारिता अन्य रूप से उच्च न्यायालय में निहित होगी और इस अध्याय में इसमें इसके पश्चात् अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार प्रयोक्तव्य होगी।

(2) यदि किसी समय केन्द्रीय सरकार की यह राय है कि उच्च न्यायालय में दावा की बातों असम्भव रूप से बढ़ गई है तो वह भारत के मुख्य न्यायमूर्ति तथा संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करके राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसे मामले में पूर्णतः या उस सीमा तक जितना आवश्यक समझा जाए, राज्य के ऐसे प्रधान सिविल न्यायालयों को जो अधिसूचना में विनियिष्ट किए जाएं, अधिकारिता प्रदान कर सकती।

(3) उपधारा (2) के अधीन जारी किसी अधिसूचना में उक्त प्रयोजन के सहायक या आनुषंगिक उपबंध किए जा सकेंगे जिनके अंतर्गत ऐसे मामलों के ऐसे न्यायालयों में संस्थित किया जाना या लंबित मामलों को ऐसे न्यायालयों को अंतरित किया जाता ज्ञासित करने वाले उपबंध भी हैं।

4. एक उच्च न्यायालय से अनुदोषों का दूसरे उच्च न्यायालय को अंतरण—(1) उच्चतम न्यायालय स्वप्रेरणा से अथवा किसी प्रकार के आवेदन पर यदि वह आवश्यक समझता है तो नावधिकरण अधिकारिता विषयक कोई कार्यवाही एक उच्च न्यायालय से द्वारा 3 के अधीन ऐसी अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए किसी सधम उच्च न्यायालय को कार्यवाही के किसी प्रकार पर स्थानांतरित कर सकता है।

(2) उपधारा (1) के अधीन अंतरण का आदेश अनुयोग के सभी पक्षकारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् पारित किया जाएगा और अंतरित कार्यवाहियां उस उच्च न्यायालय में जहां वे स्थानांतरित की गई हैं, उसी प्रकार से जारी रखी जा सकेंगी जिस प्रकार पर के स्थानांतरण के समय थी।

5. नावधिकरण अधिकारिता—(1) न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता निम्नलिखित होगी, अर्थात् :
- (क) उपधारा (2) में उल्लिखित किसी प्रश्न या दावा की सुनवाई और अवधारण की अधिकारिता;
- (ख) उपधारा (3) में उल्लिखित किसी कार्यवाही के संबंध में अधिकारिता;
- (ग) कोई अन्य नावधिकरण अधिकारिता जो उसे ऐडविलरी ऐक्ट, 1890 या कांलोनियल कोर्ट आफ ऐडविलरी ऐक्ट, 1890 या नावधिकरण विषयक उपनिवेशक न्यायालय (भारत) अधिनियम (1891 का अधिनियम 16) के आधार पर या अन्यथा किसी भी प्रकार से अधिनियम के प्रारंभ के ठीक पूर्व भी;
- (घ) पोतों या वायुयानों से संबंधित कोई अधिकारिता जो उच्च न्यायालय में इस धारा से पृथक् निहित है और तरसमय इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् बनाए गए या प्रवृत्त न्यायालय के तियर्थों द्वारा नावधिकरण न्यायालय द्वारा प्रयोग किए जाने के लिए समनुदेशित और निर्देशित है।
- (2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रश्न और दावा के अंतर्गत निम्नलिखित हैं :
- (क) किसी पोत के कब्जे या स्वामित्व का या उसमें किसी अंश के स्वामित्व का दावा;
- (ख) किसी पोत के लह-स्वामियों के बीच उस पोत के कब्जे, नियोजन या अंजन के बारे में उद्भूत होने वाला प्रश्न;
- (ग) किसी पोत के या उसमें किसी अंश के बंधक या उस पर प्रभार की बाबत कोई दावा;
- (घ) किसी पोत द्वारा उसके एकत्रे, व्यापार या समुद्रवाता द्वारा हुई नुकसानी के लिए कोई दावा;
- (ङ) किसी पोत द्वारा नुकसानी के लिए कोई दावा जिसके अंतर्गत वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम (1958 का अधिनियम 44) के भाग 10-ख के अधीन तेल प्रदूषण नुकसानी के लिए सिविल दायित्व है;
- (च) किसी पोत में या उसकी सज्जा या उपस्कर में किसी लुटि के परिणामस्वरूप या निम्नलिखित के विधिविरुद्ध कार्य, उपेक्षा या लुटि के परिणामस्वरूप भोगी गई जीवन हानि या शारीरिक शर्ति के लिए कोई दावा—
- (i) पोत के स्वामी, चार्टरर या पोत का नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति, या
- (ii) किसी पोत के कर्मीदल का सास्टर या कोई अन्य व्यक्ति जिसके दोषविरुद्ध कार्यों, उपेक्षा या लुटियों के लिए पोत के स्वामी, चार्टरर या पोत का कब्जा या नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति उत्तरदायी है, जो पोत के नीचालन या प्रबंध में पोत से या उससे माल की लदाई, वहन या उत्तराई में अथवा पोत में या उससे पोतारोहण वहन या पोत से उत्तराई में कोई कार्य, उपेक्षा या लुटि है,
- (छ) किसी पोत पर या उसमें वहन किए गए माल की हानि या नुकसानी के लिए कोई दावा;
- (ज) किसी पोत में माल के वहन से संबंधित या किसी पोत के उपयोग या भाड़े से संबंधित किसी करार के उद्भूत कोई दावा;
- (झ) जीवन, धन, पोतभार, संपत्ति, उपस्कर या उसके पोतभाग या उसके परिरक्षण के बचाव की प्रक्रिया में कोई दावा;

- (अ) किसी पोत या बायुयान की बाबत यानकरण की प्रकृति में कोई दावा;
- (ट) किसी पोत या बायुयान की बाबत पायलट कार्य की प्रकृति में कोई दावा;
- (ठ) किसी पोत को प्रदाव किए गए किसी माल, सामग्री तलबर या अन्य आवश्यक सामग्री या किसी पोत को उसके प्रचालन या अनुरक्षण के लिए की गई किसी सेवा की बाबत कोई दावा;
- (ड) किसी पोत के निर्माण, मरम्मत या उपस्कर की बाबत या भारतीय पत्तन अधिनियम (1908 का अधिनियम 15) या महापत्तन न्याय अधिनियम (1963 का अधिनियम 38) के अधीन पोत प्राक्तिकरियों को किसी प्रभार या शोध की बाबत कोई दावा;
- (ड) किसी पोत के कर्मदिल के किसी मास्टर या सदस्य द्वारा मजदूरी के लिए कोई दावा जिसके अंतर्गत मजदूरी से आवंटित या मजदूरी के रूप में शोध होने के लिए अधिनिर्णीत कोई रकम है और किसी धन या संपत्ति की बाबत जो किसी विधि के उपर्योग के अधीन मजदूरी के रूप में वसूलीय है और वह रीति जिसमें मजदूरी वसूल की जा सकी है;
- (ए) किसी पोत मद्दे किए गए सवितरण की बाबत किसी मास्टर, माल भेजने वाले, चार्टर करने वाले या अभिकर्ता द्वारा कोई दावा;
- (ट) किसी कार्य से उद्भूत कोई दावा जो साधारण औसत कार्य है या जिसके बारे में ऐसा होने का दावा किया जाता है;
- (घ) बाटमरी से उद्भूत कोई दावा;
- (द) किसी पोत या माल के सम्पर्क या जब्ती के लिए जो वहन किया गया है या किया जा रहा है या जिसे किसी पोत में वहन किए जाने का प्रयत्न किया गया है या किसी पोत के या किसी माल के जब्ती के पश्चात् बापसी के लिए या नावधिकरण के अधिकारों के लिए कोई दावा।
- (३) उपधारा (1) (ख) में निर्दिष्ट कार्यवाहियों के अंतर्गत निम्नलिखित हैं:

 - (क) वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम (1958 का अधिनियम 44) के अधीन कार्य करने में अक्षम व्यक्ति के स्थान पर कार्य करने के लिए किसी व्यक्ति के प्रति स्थापन के लिए उच्च न्यायालय को कोई आवेदन;
 - (ख) निम्नलिखित से उद्भूत नुकसानी, जीवनहानि या शारीरिक क्षति के लिए दावा प्रवृत्त करने के लिए कोई अनुयोग —
 - (i) पोतों के बीच टक्कर; या
 - (ii) दो या अधिक पोतों में एक या अधिक की दशा में युद्धाभ्यास करने या करने में लोप करने; या
 - (iii) दो या अधिक पोतों में से एक या अधिक पोतों की ओर से टक्कर विनियमों के अपालन;
 - (ग) वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम (1958 का अधिनियम 44) के अधीन पोत या अन्य संपत्ति के संबंध में उनके दायित्व की मात्रा की सीमा के लिए पोत स्वामी या अन्य व्यक्तियों द्वारा कोई अनुयोग।
 - (४) उपधारा (2) (ख) के अधीन न्यायालय की अधिकारिता के अंतर्गत पोत के संबंध में पक्षकारों के बीच बकाया और निपटाए न गए किसी लेखा का निपटारा करने की शक्ति और यह निर्देश देने की शक्ति है कि पोत या उसका कोई अंश बैद्य दिया जाएगा और ऐसे अन्य आदेश करने की शक्ति होगी जो न्यायालय उचित समझे।

(५) उपधारा (2) (झ) में उद्धारण की प्रकृति में दावा करने के प्रति निर्देश के अंतर्गत किसी पोत से जीवन बचाने में या वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम (1958 का अधिनियम 44) की धारा 390-404 के अधीन पोतभरण, वेशभूषण या पोतभंग के परिरक्षण में की गई सेवाओं के लिए ऐसे दावा के प्रति निर्देश किसी पोत के संबंध में किए जाने के लिए प्राधिकृत है।

(६) इस धारा के पूर्वतर उपर्युक्त को लागू होगे :

- (क) सभी पोतों या बायुयानों के संबंध में चाहे वे भारतीय हैं या नहीं या उनके स्वामियों का निवास या अधिवास चाहे जहां हो;
- (ख) सभी दावों के संबंध में वे चाहे जहां उद्भूत हों (जिसके अंतर्गत पोतभरण या पोतभंग उद्धारण की दशा में भूमि पर प्राप्त पोतभरण या पोतभंग की बाबत दावा है); और
- (ग) जहां तक उनका सर्वबंध बंधक या प्रभार से है, सभी बंधक या प्रभार चाहे वे रजिस्ट्रीकृत हैं या नहीं और चाहे वे विधिक या साम्यापूर्ण हों और इनके अंतर्गत विदेशी विधि के अधीन सृजित बंधक और प्रभार हैं।

प्रत्यनु इस उपधारा की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि उसका विस्तार उन मामलों तक है जिनमें वाणिज्य पोत परिवहन अधिनियम (1958 का अधिनियम 44) के किसी उपर्युक्त के अधीन धन या संपत्ति वसूलीय है।

6. नावधिकरण अधिकारिता के प्रश्नों की पढ़ति—(१) इस अधिनियम की धारा 7 के उपर्योगों के अधीन रहते हुए नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता का व्यक्ति बंधी अनुयोग द्वारा सभी मामलों में अपश्य लिया जा सकता है।

(२) नावधिकरण न्यायालय की अधिकारिता का इस अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (१) के खंड (क) से (ग) और (द) में उल्लिखित मामलों में किसी सर्वबंधी अनुयोग के द्वारा पोत या प्रश्नगत संपत्ति के विरुद्ध उसकी गिरफ्तारी करके आश्रय लिया जा सकता है।

(३) ऐसे किसी मामले में जिसमें किसी पोत या अन्य संपत्ति पर सम्बन्धी धारणाधिकार या अन्य प्रभार है जिनके अंतर्गत दावाकृत रकम के लिए तलबर है, न्यायालय की नावधिकरण अधिकारिता का उस प्रश्नगत पोत या संपत्ति के विरुद्ध सर्वबंधी अनुयोग द्वारा आश्रय लिया जा सकता है।

(४) ऐसे किसी दावा की दशा में जिसका उल्लेख धारा 5 (२) (ङ) से (द) तक किया जाता है, जहां—

- (क) दावा पोत के संबंध में उद्भूत होता है, और
- (ख) वह व्यक्ति जो किसी व्यक्ति बंधी अनुयोग में दावा में दायी होगा (जिसे इसमें इसके पश्चात् "सुसंगत व्यक्ति" कहा गया है) वह या जब अनुयोग के लिए कारण उद्भूत हुआ था तो पोत का स्वामी या चार्टर या पोत जिसके कब्जा या नियंत्रण में था वहां नावधिकरण अधिकारिता का आश्रय लिया जा सकता है चाहे दावा से उस पोत पर निम्नलिखित के विरुद्ध सर्वबंधी अनुयोग द्वारा सम्बन्धी धारणाधिकार बनता है या नहीं—

(i) उस पोत पर यदि उस समय जब अनुयोग लाया जाता है, तब सुसंगत व्यक्ति उस पोत के उसमें के सभी अंशों की बाबत हिताधिकारी स्वामी या किसी चार्टर के अधीन पट्टांतरण करके चार्टर है; या

(ii) किसी अन्य पोत पर जिसका उस समय जब अनुयोग लाया जाता है, सुसंगत व्यक्ति उसमें के सभी अंशों की बाबत हिताधिकारी स्वामी है।

10. पोत के विक्रय पर अधिकार विहित होना—न्यायालय द्वारा पोत के विक्रय पर पोत विलंबगमों से जिसके अंतर्गत बंधक, प्रभार, भाड़मान और समुद्री धारणाधिकार हैं, मुक्त केता में निहित होगा।

11. विक्रय आगमों का वितरण—(1) जहां सर्वबंधी अनुयोग में न्यायालय ने उक्त संपत्ति को जिसके विरुद्ध कार्यवाही की गई है, विक्रय करने का आदेश दिया है, कोई पक्षकार जिसने उक्त संपत्ति या उसके विक्रय आगमों के विरुद्ध डिक्री या आदेश प्राप्त कर लिया है, निर्णय प्राप्त करने के पश्चात् उक्त संपत्ति के विक्रय आगमों के विरुद्ध दावा के पूर्विकता क्रम के अवधारण के आदेश के लिए समावेदन की सूचना देगा, न्यायालय को आवेदन कर सकेगा।

(2) जहां किसी सर्वबंधी अनुयोग में न्यायालय उस संपत्ति के जिसके विरुद्ध कार्यवाही की गई है, विक्रय किए जाने का आदेश देता है और संपत्ति विक्रय कर दी गई है, वहां न्यायालय आदेश देगा कि एक अंतरराष्ट्रीय और एक साष्ट्रीय समान्तर पत्र में जैसा न्यायालय विनिर्दिष्ट करे, सूचना दी जाए कि संपत्ति सर्वबंधी अनुयोग में न्यायालय आदेश से विक्रीत की जा चुकी है जिसके नाम तथा आगम, उसकी मात्रा विनिर्दिष्ट करते हुए शुद्ध विक्रय न्यायालय में संदर्भ कर दिया गया है और उक्त आगम के दावा की पूर्विकता के क्रम का अवधारण उक्त सूचना के प्रकाशन की तारीख से नव्वे दिन की अवधि के पर्यवसान के पश्चात् ही किया जाएगा और कोई किसी पक्षकार जो संपत्ति या उसके विक्रय आगम में दावा रखता है, न्यायालय को मध्य-क्षेत्र की इजाजत के लिए आवेदन करना चाहिए और उसे उक्त अवधि की समाप्ति से पहले अपना दावा उसके समक्ष अनुयोग फाइल करके या किसी अन्य समुचित न्यायालय के समक्ष बाद फाइल करके अपना दावा सावित करना चाहिए।

(3) न्यायालय किसी पक्षकार के आवेदन पर जिसने जैसा उपधारा (2) में उपबंधित है न्यायालय के समक्ष या भारत में सक्षम अधिकारिता वाले किसी अन्य न्यायालय के समक्ष संपत्ति या विक्रय आगम के विरुद्ध डिक्री प्राप्त करने के लिए कार्यवाही संस्थित किया है, नव्वे दिन की अवधि बढ़ा सकता है और न्यायालय उक्त बाद या अनुयोग को अथवा उससे किसी अपील का निपटारा होने के पश्चात् तीस दिन की अवधि तक विक्रय आगम का संवितरण नहीं करेगा और/या कि उसका पूर्विकता का अवधारण नहीं करेगा।

(4) ऊपर उपधारा (3) में अंतर्विष्ट उपबंधों के होते हुए भी न्यायालय किसी ऐसे पक्षकार द्वारा आवेदन किए जाने पर जिसने संपत्ति या विक्रय आगम के विरुद्ध डिक्री अभिप्राप्त कर लिया है, पूर्विकता का अवधारण कर सकता है और विक्रय आगमों में से संदाय का निवेदन दे सकता है यदि न्यायालय की यह राय है कि आवेदक का दावा उस दावे पर जिसके लिए अनुयोग या बाद संस्थित किया गया हो, पूर्विकता का हकदार है।

परन्तु न्यायालय ऐसे सभी पक्षकारों की पूर्विकता का अवधारण करने या विक्रय आगमों में से संवितरण का निवेदन देने से पहले 90 दिन की विहित अवधि के भीतर संपत्ति या विक्रय आगमों विरुद्ध दावा किया है या बाद या अनुयोग फाइल किया है सुनवाई करेगा।

12. दावा की पूर्विकता का क्रम—(1) नावधिकरण अनुयोग में परस्पर पूर्विकता का अवधारण करने के दावे का क्रम निम्नलिखित रूप में होगा:

- (क) ऐसा दावा जहां किसी पोत या अन्य संपत्ति पर जिसके अधीन बंकर है, समुद्री धारणाधिकार है जिसके विरुद्ध कार्यवाही अग्रसर की जा रही है।
- (ख) पोत या अन्य संपत्ति पर बंधक और प्रभार जिसके विरुद्ध कार्यवाही अग्रसर की जा रही है।
- (ग) अन्य सभी दावे।

(2) ऊपर खंड 1 (क) में परस्पर दावों के बीच पूर्विकता निम्नलिखित रूप में होगी:

(क) जीवन, पोत या संपत्ति के बचाव के लिए दावे परन्तु जीवन के बचाव का अन्य बचावों के ऊपर पूर्विकता होगी।

(ख) पोत के मास्टर या कर्मदिल के सदस्यों को पोत में उनके नियोजन की छह मास से अनधिक की मजदूरी की बाबत शोध्य मजदूरी और अन्य रकम।

(ग) पतन, नहर और अन्य जलमार्ग शोध्य और पायलट कार्य शोध्य।

(घ) पोत के मास्टर या कर्मदिल के सदस्यों को पोत पर उनके नियोजन की बाबत उपर खंड 1 के अधीन संदर्भ रकम की कटौती करने के पश्चात् शोध्य मजदूरी और अन्य रकम की बकाया।

(ङ) (i) पोत के प्रचालन से प्रत्यक्षतः संबंधित जीवन हानि या शारीरिक शर्ति की बाबत दावा,

(ii) साधारण औसत के लिए अभिदाय का दावा,

(iii) शारीरिक नुकसानी या पोत के प्रचालन से कारितः नुकसानी से जो पोत पर बहन किए जाते रहे पोत भरण पाव और यात्री चीजेवस्तु से भिन्न नुकसानी या हानि है, उद्भूत अपकृत्य पर आधारित दावा,

(iv) बाटमरी।

(3) परस्पर दावा की पूर्विकता का अवधारण करने में निम्नलिखित नियम लागू होंगे—

(i) पूर्विकता के क्रम में पूर्वंतर दावा पश्चात्वर्ती दावा को अपवर्जित करेगा।

(ii) यदि किसी पूर्विकता प्रवर्ग में एक से अधिक दावा है उनकी पंक्ति समरूप होगी।

(iii) विभिन्न बचाव के किए दावे की पंक्ति समय के उस क्रम के अनुरूप होगी जब उससे उद्भूत दावा पैदा हुआ।

(iv) बचाव, पतन युक्त के लिए दावे, मजदूरी और सामान्य औसत की प्रकृति के दावों को ऊपर खंड 2 (ङ) में वर्णित सभी दावों के जो पोत से समय में पहले संलग्न हैं जब उक्त दावा को उद्भूत करने वाला संचालन उद्भूत हुआ या ऊपर पूर्विकता प्राप्त होगी।

13. समुद्री धारणाधिकार—(1) समुद्री धारणाधिकार दावों के निम्नलिखित दुष्टांत में पोत या संपत्ति से संलग्न होंगे और ऐसे समुद्री धारणाधिकार के उद्भूत होने की तारीख वह तारीख होगी जब उक्त दावा का उद्भूत करने वाला संचालन किया गया था:

(क) जीवन, पोत या संपत्ति के बचाव के लिए दावा।

(ख) पोत के मास्टर या कर्मदिल के सदस्यों को पोत पर नियोजन की बाबत शोध्य मजदूरी और अन्य रकम।

(ग) पतन और नहर तथा अन्य जलमार्ग शोध्य और पायलट कार्य शुल्क।

(घ) जीवन हानि या शारीरिक शर्ति जिसका पोत के प्रचालन से प्रत्यक्ष संबंध हो।

(ङ) साधारण औसत के अभिदाय के लिए दावा।

(च) पोत के प्रचालन से जो पोत पर पोत भरण, पाव और यात्री चीज़ वस्तु को नुकसानी या हानि से भिन्न है, कारितः भीतिक हानि या नुकसानी से उद्भूत होने का अपकृत्य पर आधारित दावे।

एक तरीँ इक्ष्याक्षर्यों रिपोर्ट

92

एक सौ इक्ष्याक्षर्यों रिपोर्ट

(2). समृद्धी धारणाधिकार उस तारीख से जिससे धारणाधिकार पोत या संपत्ति से संलग्न हुआ, एक वर्ष की समर्थन पर समाप्त समझा जाएगा :

परन्तु, ऐसा बाबा, यदि कोई हो जो परिसीमा से बाहित न हो, व्यक्ति बंधी अनुयोग द्वारा भक्त किया जा सकता है :

परन्तु, यह और कि एक वर्ष की अवधि का और विस्तार किया जा सकता है यदि धारणाधिकार का दावेदार धारणाधिकार को पोत या संपत्ति के विरुद्ध ऐसे कारणों के आधार पर जो उसके नियन्त्रण से परे था, प्रश्न करने के लिए अनुयोग प्रारंभ करने में असमर्थ था।

14. विदेशी पोत को बाबत प्रक्रिया — (1) इस अधिनियम के अधीन सभी अनुयोगों में उस पोत की जिसके विरुद्ध कार्यवाही की गई है, राष्ट्रीयता का बाद पर में कथन किया जाएगा और यदि पोत विदेशी पोत है तो बाद की सूचना या उसका संस्थित किया जाना उस राज्य के जिसका पोत है, कौंसल को दी जाएगी यदि उस शहर में, जहाँ न्यायालय स्थित है वह निवासी है।

(2) ऐसी सूचना की तारीख का कथन या ऐसा कथन कि शहर में ऐसा कोई कौंसल उपस्थित नहीं है, पोत की गिरफ्तारी के लिए आवेदन में समर्थन में शपथ पर में किया जाएगा।

(3) यदि सूचना कौंसल पर तामील हो जाती है तो उक्त सूचना की एक प्रति शपथ पर के साथ नव्यी की जाएगी।

अध्याय 3

प्रक्रिया और अवैत

15. सिविल प्रक्रिया संहिता का लागू होना— (1) सिविल प्रक्रिया संहिता (1905 का अधिनियम सं० 5) न्यायालय के समक्ष सभी प्रक्रिया शासित करेगा जहाँ तक वे इस अधिनियम उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपर्योग से अंगत या प्रतिकूल नहीं हैं।

(2) नावधिकरण न्यायालय में अंतर्वर्ती आवेदनों के बारे में कार्यवाही के या ऐसे अंतरिम और अन्य आदेश जो वह उसके समक्ष पक्षकारों के हित का संरक्षण करने के लिए आवश्यक या सभी चीज सभा में पारित करते समय सिविल न्यायालय की सभी शक्तियाँ होंगी।

16. असेसर की सहायता— (1) सिविल प्रक्रिया संहिता (1908 का अधिनियम सं० 5) की धारा 140 के उपर्योग इस अधिनियम के अधीन सभी कार्यवाहियों को लागू होंगे।

(2) केन्द्रीय सरकार राजपत्र में असेसरों की सूची प्रकाशित करेगी जिसमें उन व्यक्तियों के नाम होंगे जिन्हें नावधिकरण अमालों में विशेष अहंताएं और अनुभव होंगे जिन्हें असेसर के रूप में न्यायालय की सेवाओं के लिए बुलाया जाएगा।

(3) इस धारा के अधीन असेसर की नियुक्ति का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी पक्षकार द्वारा विशेष साक्षी की परीक्षा वर्जित करता है।

(4) केन्द्रीय सरकार असेसरों की अहंताएं उनके द्वारा पालन किए जाने के लिए कर्तव्य की प्रकृति, और उन्हें संदेत की जाने वाली फीस तथा अन्य सहायक और आनंदगिक बातें विहित करते हुए नियम बना सकेंगी।

17. आष्ट्रेस्थ को निर्देश—किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी न्यायालय को नावधिकरण विषय कार्यवाही में सभी पक्षकारों की लिखित सहमति से उसके समक्ष संपूर्ण विवाद को उससे उद्भूत विधि अथवा तथ्य का ऐसा प्रश्न जो वह आवश्यक समझे माध्यरथम् को निर्देशित कर सकेगा और यथास्थिति विवाद या प्रश्न का इस प्रकार निपटारा करे जो न्यायालय द्वारा अवधारित या उपांतरित अधिनिर्णय के अनुरूप हो।

18. अपील—उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के किसी निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश या इस अव्याय के अधीन नावधिकरण अधिकारिता का प्रयोग करने वाले किसी अन्य न्यायालय से अपील उच्च न्यायालय के खंड न्याय पीठ को होगी।

अध्याय 4

कैक्षी

19. विद्यम बचाने को शक्ति— (1) केन्द्रीय सरकार भारत के राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए संपूर्ण भारत के किसी भाग के लिए नियम बना सकेगी।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे नियमों में इस अधिनियम के अधीन नावधिकरण न्यायालयों में प्रथा और प्रक्रिया का विनियमन तथा ऐसी कार्यवाहियों में फीस, खर्च और व्यय का विनियमन करने के लिए उपर्योग होंगे।

(3) जब तक उपधारा (1) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा नियम नहीं बनाए जाते हैं, तब तक उच्च न्यायालयों में नावधिकरण विषय अधिनियमित के प्रयोग का इस समय विनियमित करने वाले नियम लागू बने रहेंगे।

(4) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के अधीन बनाए गए प्रत्येक नियम और निकाली गई प्रत्येक अधिसूचना को इसका अधिसूचना निकाली जाने के पश्चात् संसद के दोनों सदनों द्वारा समक्ष जब वह लक्ष में हो तो उस दिन की कुल अवधि के लिए रखवाएगी (यह अवधि, एक सत्र में या दो सत्रों में या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी) और यदि पूर्वोक्त सत्र या आनुक्रमिक सत्रों की समाप्ति से ठीक पूर्व दोनों सदन नियम या अधिसूचना में उपांतर करने के लिए सहमत हो जाने हैं या दोनों सदन सहमत हो जाता है कि नियम नहीं बनाए जाने चाहिए या अधिसूचना नहीं निकाली जानी चाहिए तो वह नियम या अधिसूचना तत्पश्चात् यथास्थिति ऐसे उपांतरित रूप में प्रभावी होगी या प्रभावी नहीं रहेगी, किन्तु ऐसे उपांतरण या रद्दीकरण का उस नियम या अधिसूचना के अधीन पहले की गई किसी बात पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

अध्याय 5

निरसन और व्यावृत्ति

20. निरसन और व्यावृत्ति— (1) निम्नलिखित अधिनियमितियाँ इसके द्वारा निरसित की जाती हैं :

(क) (दि) ऐडमिरल्टी अफेसेज (कोलेनियल) एकट, 1849 (12 और 13 विकट० सी० 96) ;

(ख) (दि) ऐडमिरल्टी जुरिस्टिकेशन (इंडिया) एकट, 1860 (23 और 24 विकट० सी० 96) ;

(ग) (दि) ऐडमिरल्टी कोर्ट एकट, 1861 (24 और 25 विकट० सी० 10) ;

(घ) (दि) नावधिकरण विषयक उपनिवेशक न्यायालय (भारत) अधिनियम, 1891 (1891 का अधिनियम सं० 10)

(ड) लैटर पेटेंट (जहाँ तक वह नूम्बर, कलकत्ता और मद्रास उच्च न्यायालयों की लागू होता है)।

(2) उपचारा (1) में उल्लिखित किसी अधिनियमिति के निरसन के होते हुए भी ऐसी किसी अधिनियमिति के अधीन बनाया गया कोई नियम, निकाली गई अंधिसूचना, विनियम, उपविधि या आदेश जब तक प्रतिक्रिया नहीं किया जाएगा तब तक प्रवृत्त बनी रहेगी मानो वह इस अधिनियम के तत्त्वानी उपबंधों के अधीन बनाया गया था या निकाली गई थी।

(3) इस धारा में विशेष मामलों के उल्लेख से निरसन के प्रभाव के संबंध में साधारण छंड अधिनियम, (1897 का अधिनियम सं० 10) की धारा 6 के लागू होने पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं रखेगा या प्रभावित नहीं करेगा।

दूल्य : (लेन में) घण्ट 215 (निवेश में) ₹ 8.38 या ₹ 12.88